अमिट धरोहर

गुरुदेव श्री करतार सिंह जी के संस्मरण

अमिट धरोहर

गुरुदेव श्री करतार सिंह जी के संस्मरण

संकलन

शान्ता श्रीवास्तव

अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड
नई दिल्ली

अमिट धरोहर

प्रथम संस्करण : 2013
© अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली

ISBN: 81-85992-36-3

मूल्य : ₹ 50/-

प्रकाशक : अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली
दूरभाष : 011-22614160, 011.25267131
मोबाइल : 9871456571
ई-मेल : angkor@rediffmail.com

जनाबे पीर सा अब कोई आक़ा हो नहीं सकता
यह वह आक़ा है जिस का मिस्ल पैदा हो नहीं सकता

यह सच है बन्दगी का हम से दावा हो नहीं सकता
मगर सरकार का बन्दा किसी और का हो नहीं सकता

जनाबे पीर ने ज़िम्मा लिया है परदा पोशी का
मुरीद इनका किसी सूरत में रुसवा हो नहीं सकता

सिफ़त के ज़ात पर तुम जितने चाहो छोड़ लो परदे
मगर देखो नज़र बाज़ी से परदा हो नहीं सकता

बुरे हैं या भले जैसे कुछ हैं तेरे बन्दे हैं
हमारा अब किसी के हाथ सौदा हो नहीं सकता

कसम अल्लाह की लाखों सहारों का सहारा है
गुलामे गौ़स आज़म बेसहारा हो नहीं सकता

मज़े की चीज़ है कामिल मोहब्बत गौ़से आज़म की
नहीं तो ज़िंदगी में लुत्फ़ पैदा हो नहीं सकता

Nirvana does 'nt mean blowing out of the lamp
but extinguishing of the flame because the day has come

अनुक्रमणिका

1. स्मृति स्तुति 1
शान्ता कृष्णमुरारी श्रीवास्तव

2. अनमोल विचार 3
महेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ

3. स्मृति 13
बी.एन. वर्मा (भुवन जी)

4. तीन माह सेवा का आदेश 18
शशि वर्मा

5. प्रथम दर्शन 20
सीता प्रसाद

6. पढाई पर ध्यान दो 24
राजेश कुमार श्रीवास्तव

7. सारी दुनियाँ की नेमते मिल गयीं 26
विशि

8. उन्होंने अंक में भर लिया 28
डा. रुद्रपाल सिंह

9. दीन बन्धु भगवान् 31
मोहन सहाय श्रीवास्तव

10. तेरे नाम का सुमिरन करके 42
मृदुला श्रीवास्तव मित्रा (मिन्टू)

11. गुरुदेव माता गुरुदेव पिता गुरुदेव स्वामी परमेश्वरा 47
आदर्श कुमार व्रत

12. प्रथम मिलन 49
संजय कुमार श्रीवास्तव

13. हमारे सद्गुरुओं को प्रणाम 51
सुमन

14. विरोधी मित्र बन गया 54
सत्येन्द्र प्रसाद

15. पहली मुलाकात एवं दीक्षा–ग्रहण 56
डा. मुद्रिका प्रसाद

16. विचित्र स्वप्न 61
लक्ष्मी वर्मा

17. भक्त वत्सल श्री राम 66
हरि शंकर तिवारी

18. गुरु मिले अविनाशी 73
नगीना श्रीवास्तव

19. मेरा गर्व खत्म हो गया 75
एन.सी. धर

20. गुरुदेव और अरविंद आश्रम झुंझनू 78
हरवंश लाल भायला

21. पूज्य भाई साहब की शरण में जाना 82
शांता कृष्ण मुरारी श्रीवास्तव

22. गुरु महराज ने मुझे सरदार जी भाई साहब को सौंप दिया 91
के.बी. सक्सेना

23. गुरुदेव ने जीवन की दशा और दिशा ही बदल दी 97
अनिल कुमार

24. महान विभूति 99
बीना भटनागर

25. गुरु गुण लिखा न जाये 104
पुष्पा

26. केवल भगवान ही कर सकते हैं 105
चेतन स्वरूपलाल

27. जापर जाको सत्य स्नेहु ताहि मिले कछु नहीं सन्देहू 110
वीना सक्सेना

28. मदद का अनोखा तरीका 113
ऊषा शर्मा

29. मेरे कृपालु 115
सर्वजीत

30. दया 116
शेफाली

31. कृपा 117
दुर्गा अग्रवाल

32. प्रथम मिलन 119
आर.पी. शिरोमणी

33. बात आनन फानन में बनी 126
आर.एस. जौहरी

34. स्मृतियाँ 128
प्रतिमा श्रीवास्तव (स्वीटी)

35. मनचाहा विषय मिल गया 129
इन्द्रजा

स्मृति स्तुति

यह संकलन पूज्य सरदारजी भाई साहब डा. करतार सिंह जी साहब की न तो जीवनी है, और न उनके जीवन में घटित किसी महत्वपूर्ण घटना का संकलन। सबसे बड़ी बात तो यह है कि उनके सान्निध्य में रहकर चिन्तन मनन करते समय, जो सैद्धान्तिक आशंकायें मन में उठीं, वक्त बेवक्त नैराश्य दुःख और परेशानियों के झंझावात में धैर्य जब डगमगाया, वह कब कैसे नगण्य और महत्वहीन होता चला गया, एक नवीन उज्जवल पथ देकर। यह उर्जा कहीं विस्मृति के गर्त में समा न जाए। उन्हीं छोटी-छोटी स्मृतियों का यह छोटा सा संकलन है।

सच कहा जाए तो आज का शिक्षित समाज आध्यात्मवाद को भी मानवतावादी दृष्तिकोण से तौलता है। यह भावना और आध्यात्मवाद की अवहेलना करना व्यष्टि और समष्टि दोनों के लिए ही हितकर नहीं है। बिना आध्यात्मिक आधार के मानवतावादी भावनायें क्या जीवन में पनप पाएंगी? बिना आध्यात्मिक साधन के आत्मोन्नति हो नहीं सकती और जब तक आत्मविकास नहीं होगा सामाजिक उन्नति क्या होगी? आज के शिक्षित समाज में आध्यात्मवाद एक फैशन बन गया है। आध्यात्म की गहराई को समझने की चेष्टा लोग करते नहीं है, लोग समझते हैं कि अरे चलो थोड़ी देर सत्संग में भी बैठ लिया जाए। जो मेरा अनिष्ट हो रहा है वह संवर जायेगा। उनकी आध्यात्मिक भावना की ऊँचाई केवल यहीं तक सीमित रहती है। जो कुछ भी सत्संग में सुनते हैं, उसकी गहराई में बैठकर उस तत्व से साक्षात्कार होने की न तो चेष्टा करते हैं और न उसे अपने दैनिक जीवन में उतारने का प्रयत्न करते हैं। यह देख कर बडा दुःख होता है। पूर्णरुप से तो सब कुछ अपनाना कठिन है परन्तु कुछ आंशिक बातों को दृढ़ता से अपना लें तो आज पग-पग पर जीवन में जो विषमताओं से जूझना पड़ रहा है निश्चय ही कम हो जायें। जिधर देखिये उधर ही तमाम उलझने हैं, एक तरफ से अवर्णनीय विकराल परिस्थितियां मानव को लीलने के लिए मुहं बाये आतुर हैं, वह अवश्य कम हो जायेगा। मानव हदय राग, द्वेष से शून्य हो जायेगा। ऐसा तभी सम्भव है जब मानव जीवन आध्यात्मिक और आत्मवादी होगा। आध्यात्मवाद वह अलौकिक वृक्ष है जो मानव को मानवतावाद के न जाने कितने सुन्दर फल फूल दे जाता है जिससे मानव जीवन दिव्य ज्योति, दिव्य सौरभ से महक उठता है। चर्म चक्षु

से हम देख तो नहीं पाते पर अनुभव सहज ही कर लेते हैं। ऐसी दिव्य ज्योति, ऐसा अलौकिक आध्यात्मिक अनुभव मानव सहज ही नहीं कर पाता। कारण उसकी बुद्धि केवल मानवता के अन्दर सीमित रहती है। देखिये गीता में भी लिखा है 'सदा भगवान में रहो।'

श्री अरविन्द महाराज के विचारों पर मनन करें तो लगता है सामाजिकता को उत्तम मानने वाली बहिर्मुखता से आच्छादित रहने वाली विचारधारा यह अनुमान ही नहीं लगा सकती है प्रभु चरणों की अहैतुकी भक्ति में लीन भक्त का स्नेह संचित अर्न्तमुखी जीवन स्वयं के लिए कैसा मधुराद्र और समाज के लिये कैसा कल्याणकारी होगा। समाजकल्याण ठीक है, किन्तु यदि आध्यात्मिक साध्य तत्व नहीं है तो समाजवाद का वृक्ष पनपेगा कैसे?

ऐसी आदर्श आध्यात्मवादिता और आचरित आध्यात्मिकता का दर्शन मुझे मिला मेरे पूज्य भाई साहब डा. करतार सिंह जी ढींगरा में। अपने आप को इन्होंने खूब छिपाया किन्तु संगोपनियता रह न सकी। आवृत अनावृत हो गया। कितना छिपाओगे आखिर एक दिन तो रुबरु होना ही पड़ेगा। करुणारस अन्ततः दुःखी जनों पर बरस ही जाता है। ईश्वर को तो हमने देखा नहीं। उनके गुणों का व्याख्यान गुरुजनों से जरुर सुना है। जीवन के झंझावात में असहाय होकर हमने आपको जब-जब पुकारा है, एक अदृष्य सहायता जो आपसे मिली है, वही तो ईश्वरीय गुण है, वही तो प्रभू है। हम मानव के लिए और क्या हो सकता है? प्रभु वह दिव्य ज्योति ही तो है जो हम मानव के पथ को दिव्य ज्योति से अलौकिक करती है। अन्त में मैं अपने उन सत्संगी भाई बहिनों को हृदय से धन्यवाद देती हूँ जिन्होंने अपने अनुभवों को लिखकर देने की कृपा की है। यदि उन लोगों से सहयोग नहीं मिलता तो सम्भवतः मेरा यह प्रयास स्वप्न बन कर रह जाता। खास कर बनारस के श्री मोहन श्रीवास्तव की मैं बहुत आभारी हूँ। उन्होंने खुद तो लिखा ही, साथ ही बनारस के अनेक बहन भाईयों से भी उनका अनुभव लिखवा कर भेजा है।

मैं अंकोर प्रकाशन के कर्मचारीयों और मनिषा तथा भगवानदास की अनुगृहित हूँ जिन्होंने इसके प्रकाशन में मुझे बहुत मदद किया है।

अर्चना के ये गीत सचमुच अधूरे हैं अधूरे ही रहेंगे। मुझमें इतनी सामर्थ कहाँ?

"वह गीत न अब तक लिख पाई।
जो गीत सुनाना था तुमको।।

शान्ता कृष्णमुरारी श्रीवास्तव

अनमोल विचार

महेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ

रेवाड़ी

''बस वक्त-वक्त की बात है कि बात बन जाये,
खुदा का करम है कि न बनने वाली बात बन जाये।
कुछ समझ से तो काम ले, ए समझ के चलने वाले,
ऐसा भी तो है कि हम दोनों की बात बन जाये।।

दोनों की ही नहीं सभी की बात बनाने वाला बन्दा शरीर से लुप्त हो सदैव के लिए रूहानी आसमान में सितारा बन स्थित, स्थापित और स्थायी हो गया। दीन और दुनिया दोनो में दुरूस्त तथा चुस्त न्यारा, प्यारा और सबका सहारा रहने वाला वह सहज रूप रंग और अपने गुरू में लीन रहकर, गुरु में सेवा स्वरूप समर्पित था सम-भाव से। स्नेहिल संसार सहित सम्पूर्ण रूप से पूर्ण और पूर्ण रूप से सम्पूर्ण तो थे ही, किन्तु व्यवहार, आचरण, सदभाव, सेवा, ध्यान, खान-पान, पहनावा, रहन-सहन, व्यवहार, पूजा-ध्यान आदि में एकदम (जी हाँ एकदम) एक साधारण और सादा आम और सभी की भाँति तथा समस्त साधारण लोगों की तरह और कार्यस्थल पर कुशल, परिवार में जिम्मेदार, समाज में घुल-मिल कर रहने वाला तथा सत्संग मे सर्वोच्च पद पर होते हुए भी सभी के, सभी को और सभी से साथी का ही व्यवहार करते थे।

अतः श्रेष्ठ थे उनके लिए जो उन्हें समझ सके थे। कहा गया है कि कुछ व्यक्ति जन्मजात श्रेष्ठ होते हैं, कुछ व्यक्ति श्रेष्ठता प्राप्त कर लेते हैं तथा कुछ को श्रेष्ठता दे दी जाती है। वह तीनों प्रकार से श्रेष्ठ थे। श्रष्ठ थे तभी तो शिष्ट थे। शिष्ट ने इष्ट से मिलकर विशिष्टता प्राप्त कर ली। यह उनके इष्ट के प्रति सेवा, समर्पण और सामंजस्य का ही परिणाम था।

जी हाँ अवर्णनीय का वर्णन कठिन है फिर भी चेष्टा है उस व्यक्ति के कुछ पहलुओं तक पहुँचने की जिसके शरीर को सद्गुरू महाराज, भाई साहब, दार जी, नाना जी, दादाजी, चाचा जी आदि सम्बन्धों से सम्बोधित करते थे, जिसके शरीर को पूज्य पाद डा. करतार सिंह का नाम दिया गया था।

रामाश्रम सत्यसंग की सर्वाधिक वर्षों (1969-2012) तक सक्रिय सेवा संरक्षक-अध्यक्ष के रूप में कर, भाईयों को अपनी प्रसादी से लाभान्वित करते रहे। उससे पहले भी अपने गुरू (पूज्य डा. श्री कृष्ण लाल जी साहब) के आदेशानुसार सत्संग में क्रियाशील रहे थे।

एक सिक्ख परिवार में जन्म लेकर वे सच्चे सिक्ख थे। पंजाब में अक्षर 'ष' को 'ख' बोलने की प्रथा थी। शिष्य को भी सिख्य या सिख कहा जाता था। वे अपने गुरू की अपेक्षाओं के अनुरूप पक्के, सच्चे गुरू भक्त, सेवा-भावी शिष्य का स्थान पा गए और उनके उत्तराधिकारी बने। उनके बाल्यकाल में सिखधर्म पृथक न होकर हिन्दू धर्म का ही रूप माना जाता था। वे हनुमान जी के मन्दिर नियमित जाने लगे थे। यह आस्था, आस्था की गहनता, आस्था से धर्म, धर्म से कर्म और आस्था, कर्म और धर्म से आध्यात्म में अभिरूचि, प्रवेश और उनका स्वयं को सम्पूर्ण रूप से परिपूर्ण आध्यात्म सागर में समाहित होने के लिए पर्याप्त कारण बन गया। शायद फिर उन्होंने पीछे मुड़ कर नहीं देखना ही उचित माना। यह था उनके मन का दृढ़-भाव। अतः इच्छा, दृढ़ता और विश्रवास (जो उनमें थे) ने सारे काम आसान कर दिये। पूज्य श्री भाईसाहब ने मन्दिर, कर्मकाण्ड, पूजा-अर्चना में न उलझ कर उसके तत्व आध्यात्म की राह पकड़ ली।

व्यक्तित्व

शरीर से दुबले-पतले, मृदुभाषी, स्नेही, शान्त, मुस्कराहट के साथ असहमति भाषित करने वाले, विशुद्ध रूप से स्वयं के अर्जित साधनों को ही प्रयोग में लाने के पक्षधर, महिलाओं का आदर हृदय में रखकर उनसे व्यवहार करने के पक्षपाती थे। उनकी दृष्टि, दृष्टिकोण की सीमाओं से परे स्वतन्त्र की ओर थी और उनका दृष्टिकोण दृष्टि (अन्दर की) से संवरकर परम से (परम को) दृष्ट हो चुका था जो उनके जीवन का आधार था।

उनपर साकार स्वरूप दृश्य के अदृश्य रहने जैसा और अदृशय के साथ सम, साकार तथा सार्थक हो चुका था। उनके अन्दर का परम, अन्य सभी के उन्दर के परम जैसा ही है, वे यह मानते थे, समझते थे और स्वीकार भी करते थे। अतः हर एक के प्रति अगाढ़ प्रेम, प्रगाढ़ आत्मीयता और अथाह स्नेह रखते थे। वे परम कृपालु दिखते ही नहीं थे, कृपा करते भी थे। अथक सेवा के साकार स्वरूप थे। ऐसा नहीं है कि कृपालू केवल दिखाई देते थे। उनका स्वभाव था कृपा को बड़े सहज भाव से वितरित करते रहना।

दृढ़ता और दयालुता का अद्भुत सामंजस्य उनके जीवन का प्रमुख सूत्र, सिद्धान्त और नियम था। उन्होंने किसी को कभी तिरस्कारा नहीं। सहारा देकर स्वयं खड़ा करने के लिए वे किसी सीमा तक जा सकते थे। कितने परिवार उनकी इस कृपा से आज स्वयं सेवी हैं। इतने विशाल सत्संग में हर परिवार और उनके दुख का पूरा ध्यान रखते थे। स्वयं जाकर उनसे मिलते। अधिक आयु होने पर स्वयं के न जाने की स्थिति में किसी अन्य सत्संगी भाई को भेजते, अपना पत्र भी देते और सम्पर्क का सिलसिला टूटने नहीं देते। पत्रों के उत्तर बड़ी तत्परता से देना उनका स्वभाव और नियम ही नही था बल्कि वे सत्संग प्रमुख होने के नाते अपना उत्तरदायित्व सदैव मानते रहे। सत्संगी परिवारों से आये पत्रों के उनके उत्तर की कुछ विशेषताएँ इस प्रकार वर्णित की जा सकती हैः-

अ- पत्र में उठाये हर छोटे बड़े बड़े विषय का उत्तर देकर कोई मसला छोड़ नहीं देत थे।

ब- दुःख और उसके शोक से बाहर आने के लिए उचित और समुचित सांत्वना देते थे।

स- आर्थिक सहायता तुरन्त देते थे।

द- अपनी समझ से सोचकर सम्भावित व्यवधान (जैसे परिवार के मुखिया की गम्भीर बीमारी या उनके न रहने पर बच्चों की पढ़ाई आदि की व्यवस्था सम्बन्धी जानकारी) का समाधान भी जानने की चेष्ठा करते थे।

ह- सहायता सेवा स्वरूप करने की शब्दावली कहीं आघात न करें, अतः भाषा को अत्यधिक मधुर और हृदयग्राही बनाते थे।

ऐसा लगता है उनका शरीर शान्त नहीं हुआ। उन्होंने स्वेच्छा से सहजरूप में सम्भाव से शरीर त्याग कर दिया। शरीर के नाशवान होने से उन्हें कभी शरीर से परहेज (या शरीर से दुराव) नहीं रहा। आत्मा के शाश्वत स्वरूप होने से उन्हें उससे लगाव नहीं था। वे आत्मा के सहारे आत्मतत्त्व में स्थित रहकर परम में विलीन नहीं हुये। परम में समाहित हो परम ही बन गए। शरीर आत्मा का वाहन है। अतः शरीर के स्वस्थ रूप के लिए उसकी साज-संवार उतनी ही आवश्यक है जितनी आत्मा की (स्वयं की) पहचान करना। इसके वे सम्भवतः सर्वश्रेष्ठ आदर्श उदाहरण जीवन भर बने रहे और आगे श्रेष्ठों में श्रेष्ठ उनका स्वरूप स्वीकारा जाता रहेगा। हमारे लिए एक स्पष्ठ, आलोकित, परिपूर्ण रूप से सुसज्जित, सुगम, सहज, सीधा सुधरा, समन्वित, सर्वजन्य-गम्य उनका एक ही दर्शितमार्ग है कि गुरू ''मन्त्रमुच्चरन सदा सुखी भवाम्यहं (गुरू के मंत्र का उच्चारण करके अक्षय सुख पाऊँगा) का संकल्प लें, शान्त रहें। गुरू महाराज हम सब पर सदैव की भाँति अब सदैव के लिए कृपा करें, कृपा करें।

उनके जीवन की कुछ विशिष्टताएँ

उनके जीवन की कुछ लौकिक और पारलौकिक विशिष्टायें नीचे वर्णित हैं :-

बात 1985 की है, एक सत्संगी भाई जो दिल्ली के समीप एक शहर में रहते हैं, उनका एक बच्चा घर से चला गया। वे उस बच्चे को न तो खोजने ही गए और न कोई प्रयास ही किया। घर के लोग अवश्य चिन्तित थे। चार दिन बीत जाने पर उनके घर से दिल्ली (रामनगर) पूज्य सरदार जी भाई साहब को फोन गया। आदेश होने पर सत्संगी भाई ने पूज्य भाई साहब से फोन पर बात की। भाई साहब ने कहा कि कोशिश क्यों नहीं की गई? कारण बताया कि देश और दुनिया इतनी बड़ी है, कहाँ खोजा जाए। इसी शहर में भी नहीं खोजा जा सकता। इश्तहार या टी.वी. पर देने से बदमाशों के संगठन पकड़ लेंगें और नशे का धंधा या भीख मंगवाने के लिए हाथ पैर तोड़ सकते हैं। भाईसाहब ने कोशिश करने की राय दी। फोन बन्द कर दिया गया।

अगले दिन वे सत्संगी भाई कार से दिल्ली गए। सबसे पहले अपने एक साथी के घर पहाड़गंज थाने के सामने गए। उन्हें बताया। उन्हें दुःख हुआ। कुछ देर के बाद सत्संगी भाई वहाँ से पूज्य सरदार जी भाई साहब के पास रामनगर गये जो पास में ही था। पहले तो पूज्य भाई साहब ने प्रयास करने की राय दी। चाय-नाश्ता करने के बाद पूज्य भाई साहब ने आज्ञा चक्र का स्थान (दोनो भौहों के बीच, थोड़ा ऊपर की ओर तथा थोड़ा लगभग आधा इन्च अन्दर) समझाकर ध्यान कराया तथा उस खोये बच्चे से ध्यान सम्बन्धित करने की क्रिया समझाते हुये दोनों ध्यान में बैठ गये। ध्यान खुला तो उन सत्संगी भाई का मन जरा शान्त था, स्थिर हो चुका था, पूज्य भाई साहब के स्नेह से भर गया। वे सत्संगी भाई वहाँ से चलकर फिर अपने उसी साथी के घर (पहाड़गंज थाने के सामने) गये, जहाँ से वे कुछ समय पूर्व पूज्य भाई साहब के यहाँ गये थे। करिश्मा हो चुका था। पूज्य भाई साहब की कृपा की प्रसादी मिल चुकी थी। खोया हुआ वह बालक भी वहाँ दो मिनट पहले अपने आप पहुँच चुका था।

इस घटना ने दो बात उन सत्संगी को सिखाई :-

अ- परम की कृपा प्राप्त करने के लिए, प्रयास परम आवश्वक है।

ब- यदि प्रयास हेतु सद्व्यक्ति की कृपा मिल जाए तो सफलता अपने आप चलकर आयेगी।

जब पूज्य भाईसाहब रामनगर नई दिल्ली में रहते थे। एक सत्संगी भाई ने उनसे निवेदन किया कि वे तन से (तन, मन, धन में से धन की सेवा स्वीकार नहीं करते

थे) सेवा करना चाहते हैं। पूज्य भाई साहब की सेवा की आज्ञा चाहते हैं। प्रस्ताव ठुकरा दिया गया। लगातार, कई बार तथा लम्बे समय के आग्रह पर उन्होंने आज्ञा दे दी। सुबह पूजा के बाद, पूजा के कमरे में पूज्य भाई साहब ज़मीन पर लेट जाते और वह सत्संगी भाई उनके हाथ, पैर, पेट, सीना और पीठ पर तेल गरम करके मालिश करने लगे। दोनो ओर से मौन रहा करता और चालीस-पचास मिनट बीत जाते। एक दिन पूज्य भाई साहब ने मलिश के बीच प्रश्न किया, ''और क्या हाल है? उत्तर दिया ''आपकी कृपा है।'' भाई साहब ने पुनः पूछा, ''सत्संगी भाईयों के क्या हाल हैं?'' मालिश करते-करते सत्संगी भाई के मुँह से उत्तर निकला, ''नाम नहीं बताऊँगा, पर कुछ भाई कहते हैं कि आप ईश्वर नहीं मानते। एक तपाक से पूज्य भाई साहब का शरीर जो जमीन पर लेटा था, कमर तक उठकर बैठ गया। उन्होंने कहा, ''अगर ईश्वर नहीं है तो फिर सत्संग किस बात का?'' और वे पुनः जैसे पहले थे, लेट गये। मालिश चलती रही। सत्संगी भाई ने फिर पूछा, ''क्या मैं आपके ये वचन और विचार भाईयों को बता सकता हूँ?'' बड़ी द्धढ़ता के साथ उत्तर था, ''जी हाँ।''

इस घटना से सत्संगी ने तीन बातें धारण कर अपने आप को सँवाराः-

अ- ईश्वर सर्व व्याप्त है। अतः गुरू महाराज, आप हम सब में, यत्र, तत्र, सर्वत्र व्यापक रूप से दृष्टा के रूप में उपस्थित हैं।

ब- ईश्वर के होने न होने से गुरू का महत्व कम नहीं हो जाता।

स- गुरू और ईश्वर एक समान हैं।

पूज्य भाईसाहब बड़े मृदुभाषी पर दृढ निर्णय लेते थे। विशेष बात यह कि उनकी दृढ़ता और मृदुता विरोधाभासी नहीं, एक दूसरे की पूरक थी। उनका भोजन बहुत सूक्ष्म तथा पौष्टिक तत्त्वों से परिपूर्ण था, नियमित था। सत्संग, भण्डारों आदि में व सभी को दिया जाने वाला भोजन खाते थे। भोजन, प्रसाद, फल आदि लोग उन्हें देते रहते थे । वे उसमें से केवल प्रसादस्वरूप (चींटी भर) ले लेते थे और बाकी सत्संगी भाईयों को, अपने पास बैठे व्यक्तियों को या फिर लाने वाले को ही वापिस कर देते थे। इनके सुबह के नाश्ते में (जब वे घर पर रहते थे) रात के भीगे हुए छुआरे (या खजूर) और दही अधिकतर देखा जाया करता था। दिन भर बाकी समय में उन्हें सादा खाना अच्छा लगता था। वे अक्सर कहा करते थे, "Drink the food and eat the liquid." अर्थात् खाना इतना चबा-चबा कर खाया जाये कि वह पानी हो जाये और पीया जाये। उनका सादा, सौम्य, सरल स्वभाव, भोजन से पहले शान्त मन हो जाता था। इससे भोजन के अस्वाद, अपरिपक्व, अत्यधिक असाधारण होने पर भी वे शान्त

ही रहते थे। मिर्च का सेवन व बिल्कुल (जी, हाँ बिल्कुल) नहीं करते थे। लाल व हरी मिर्च उनके भोजन में नहीं देखी गई। हाँ, कभी-कभी (अत्यधिक कम समयों पर) वे काली मिर्च ले लेते थे। Wholesoup को बड़े शौक से पीते थे।

एक बार एक सत्संगी ने उन्हें अपने घर शाम को खाने पर आने का निवेदन किया। वे गये, उनके साथ पूज्य भाभी जी भी थीं। उन सत्संगी भाई के आने पर कुछ ही समय में उन्हें सूप दिया गया। बाद में खाना खाया गया। पूज्य भाई साहब बोले, ''आपने सूप बहुत अच्छा बनाया। वो सबसे अच्छा था। सत्संगी भाई ने उत्तर दिया, ''वही फ्री का था।'' भाईसाहब बोले, ''फ्री क्यों?'' उत्तम मिला, ''सब्जी के पत्ते, डण्ठल आदि महिलाएँ बाहर फेंक रही थीं। मैंने उन्हें रोक कर उनका सूप बना दिया। पूज्य भाई साहब जाने के लिए खड़े हो चुके थे। यह सुनकर बैठ गए। उन्होंने वैसा सूप अपने निवास पर भी (रामनगर, दिल्ली में भी) बनवाने की इच्छा जताई। एक दो बार सत्संगी भाई ने उनके निवास पर उनकी यह सेवा की। क्रम चलता रहा, कभी उनके घर, कभी उनके द्वारा बना हुआ सूप ले जाकर। इन सब (घटना और आगे क्रम) से सत्संगी भाई ने नीचे लिखे मतलब निकालेः-

अ- भोजन की गुणवत्ता व्यर्थ नहीं करनी चाहिए। उसका प्रयोग और सेवन श्रेयस्कर है।

आ- आयु, पद स्वाद, सामाजिकता जैसी बातें भोजन की उपादेयता से छोटी हैं।

इ- आम तौर पर भोजन बनाने में बेकार निकाली गये सामान में भी भोजन से भी अधिक गुण हो सकते हैं। उन्हें अधिक से अधिक प्रयोग करना लाभकारी, गुणकारी और उचित है।

अपने प्रवचनों में हिन्दू (सनातन), जैन, बौद्ध, ईसाई, मुसलमान आदि धर्मों का उल्लेख यत्र-तत्र-सर्वत्र सुनने को मिला और अब पढ़ने को मिलता है।

एक बार जब मथुरा में सत्संग हुआ तब पूज्य भाई साहब ने एक सत्संगी भाई से पूछा, ''वृन्दावन कितनी दूर है?'' उन भाई ने निवेदन किया, ''कुल 6 मील है। आप चलिए।'' वे तुरन्त तैयार हो गए। दोपहर के समय ताँगे में पूज्य भाई साहब, आदरणीय भाभी जी और वह सत्संगी भाई गये। एक प्राचीन मन्दिर में घुसे। दोपहर बाद का समय था। अतः दर्शन बन्द थे। वहाँ के स्वामी श्री नृसिंहाचार्यजी से मिला गया। स्वामी श्रीमद्भगवत के विद्वान्, तपी और लगभग 102 वर्ष के थे। अपने कमरे में लेटे थे। आगन्तुकों को देखकर बैठ गये। उन सत्संगी भाई से परिचित भी थे।

अच्छा लाभकारी किन्तु सूक्ष्म विचार कर स्वामी जी ने भोजन के लिए कहा। सभी के मना करने पर प्रसाद लेकर हम सब चलने के लिए ख़डे हुए।

क्लपना की कसौटी पर केवल कल्पित कर्मों के कलेवर से कीर्ति की कामना करने के क्रिया का कमण्डल पूज्य भाई साहब के पास कभी नहीं रहा था। उनका मानस मन, मार्ग, माध्यम तो निर्विकार, निराधार, निराकार, निरामय, निर्गुण, निरूपमाय, निरूपाय, निरामयाय, निष्प्रपंचाय, निष्फलकाय, निद्वन्द्वाय, निसंगाय, निर्मलाय, निर्ममाय, नित्यरूपविभवाय, निरूपमविभवाय, नित्यशुद्धबुद्धपरिपूर्ण सच्चिदानन्दाय, परमशान्तप्रकाशतेजोरूपाय से जुड़ा है। उन्होंने उन स्वामी जी को प्रणाम किया और अपने पास से भेंट स्वरूप रू.100 का नोट भी दिया। दोनो के नेत्र एक दूसरे के नेत्रों में गढ़ गये थे। चेहरे पर हल्की मुस्कान थी। हाथ से कृपा, भक्ति एवं परम आनन्द की त्रिवेणी बह रही है। ऐसा लग रहा था कि ज्ञान के विज्ञानीकरण के लिए दो दीप शिखायें मिलकर अलौकिक ज्योतिपुंज बनने को आतुर, व्याकुल और उत्कर्षित हो रही हैं। मन के शान्त समुद्र में अद्भुत सौन्दर्य का साम्राज्य था। उसी समय वहाँ से चलने की घड़ी आ गई।

इस घटना से प्रेरित पूज्य भाईसाहब के साथ गये सत्संगी भाई ने निम्नवर्णित भाव निकालाः-

अ- जाति, धर्म जैसी सीमाओं में बुद्धिहीन, निज स्वार्थी आत्मतत्व विहीन समझ बाँध रही है।

ब- आत्मतत्व सर्वव्यापक है। पृथक से दिखने वाले प्राणियों के प्राण का आधार वह स्वयं नहीं उसका स्वयं है।

स- जैसे छोटी नदियां, बड़ी नदी में और बड़ी नदी समुद्र में मिल जाती है, वैसे ही व्यक्ति जब तक परम् से परम् में नहीं मिलता तब तक वह नदी किनारे उस पानी की तरह सड़ जायेगा जो मूल धारा से भटक अलग हो गया है। जब बरसात आएगी तो सड़े पानी को शुद्ध हो फिर समुद्र में मिलने का अवसर प्राप्त होगा। अतः सत्संग, साधन, साधना, सर्वदृष्टि, सम्पूर्णता, समर्पण बादि का सहारा लिए रहना चाहिए।

द- दुनिया में रहकर दुनिया को दीन से नहीं, दया से, करुणा से, नेत्रों से, प्रेम से, अद्वेष से एक होकर परम् से जोड़कर का अथक प्रयास करते रहना चाहिए।

पूज्य भाई साहब के व्यक्तित्व की एक बात बड़ी खास थी। वे अच्छे विनोदी भी थे। स्नेह और विनोद का ऐसा स्वरूप वे अपने साथ के लोगों के साथ देखने को

मिलता। वे स्वयं एक अच्छे सरदार पर सरदारों के स्वभाव पर हास्य-व्यंग्य सुनते सुनाते भी उन्हें देखा और सुना गया था। हरि में विश्वास करने वाले कहा करते हैं, ''हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता।'' उसके साथ यह भी सच है कि अनन्ता की खोज के साधकों (भक्तों) की कथा उस अनन्त की अनन्तता से भी कई गुणी है। गीता प्रेस, गोरखपुर ने ''भक्तमाल'' नामक एक विशालकाय पुस्तक का प्रकाशन कर उसमें एक भक्ति मार्गीय कुछ भक्तों को लिपिबद्ध किया भी है। पूज्य भाई साहब का जीवन (रहन-सहन, परिवार सम्बन्ध, साधना, खाना-पीना, उठना-बैटना, आचार-विचार, लेन-देन, जीविका-व्यापार, आहार-व्यवहार आदि में स्मरणीय और अनुकरणीय तथ्य भरे पड़े थे। उनकी व्यापकता के जाल में न फंसकर उनको लिखने और पढ़ने तक ही सीमित न रहने दिया जाये।

एक बात चुनी जाए और जीवन में उतारी जाए, व्यवहार में लाई जाए, आचरण बनाया जाए, क्योंकि ''सर्वगमनाचारः प्रथमं परिकल्पते। आचारप्रभावो धर्मो धर्मस्य प्रभुरच्यूतः।'' अर्थात् सारे धर्मों में आचरण को प्रमुख माना गया है। आचरण से धर्म बनता है और धर्म के स्वामी प्रभु या गुरु हैं। सांत्वना की नहीं संकल्प की घड़ी है जो संतोष की नहीं, साधना की से जुड़ी है। बीती की बात छोड़ो, बनायें जो आगे की लड़ी है। अपनी सोचें, व्यर्थ है जिनको परिवार की और औरों की पड़ी है। तभी तो सुधरेगी अपने की चाह जो गली है, सड़ी है।

केवल एक प्रश्न, क्या उस संत का दीदार, दरबार, दया का आधार, दीनता का व्यवहार, दिव्यता का भंडार, देते रहने का आचार, पर्याहा नहीं है कि अपने में सुधार लायें, लाते रहें जब तक अपने को उनकी अपेक्षाओं के अनुरूप हममें कम से कम एक बात तो घर कर जाये, स्थाई हो जाये।

बात की, बात बात में, बिना बात, बात बन गई।
मिले तो कभी न थे, उनकी नज़र मुलाकात बन गई।।

वर्ष 1979 के अन्तिम दो माहों में मैं दक्षिण भारत के अपने कार्य विषयक भ्रमण पर था। बंगलौर भी गया, कुछ सप्ताह रुका। कार्य से बचे समय में एक सत्संग में जाने लगा। पता चला सत्संग के अध्यक्ष दिल्ली में हैं। मैंने तय कर लिया कि दिल्ली जाने पर उनके दर्शन करूँगा। यह उसी सत्संग की एक शाखा थी जिससे 1952 से पहले बालक बुद्धि से तथा उसके बाद नियमित सम्मिलित हो लाभ उठाया था। कभी-कभी पूज्य श्री चतुर्भुज सहाय साहब के यहाँ और नियमित रूप से, लम्बे समय तक पूज्य

बृजमोहन लाल जी (श्रद्धेय चाचा जी श्री रघुवर दयाल जी के ज्येष्ठ पुत्र) के साथ रहने का सुअवसर मिलता रहा।

दिल्ली आने पर जनवरी 1980 में पूज्य डा. करतार सिंह जी के दर्शन करने उनके निवास रामनगर दिल्ली गया। सत्संगीय अदब और अंदाज से मैंने अपने सत्संग के जीवन को सूक्ष्म में, उनके पूछने पर वर्णन किया। वे शांति और सौम्यता से सुनते रहे। कमरे से बाहर गये, अपने हाथ से नाश्ता लाये। चाय थोड़ी देर में एक बालक लेकर आया। दोनो ओर से शांति रही। थोडद्यी देर के बाद उन्होंने मेरे कार्य, परिवार और कुशलक्षेम में इतनी अभिरुचि ली कि उनकी वाणी की मधुरता, व्यवहार की स्निग्ध शैली ने मुझे स्तंभित कर उनके मुख की कांति के साथ सहृदयी मुस्कुराहट में परम् के दर्शन होने लगे। ऐसा जीवन में किसी एक व्यक्ति के दर्शन में (वह भी पहले मिलन में) पहनी बार होने से मन को आश्रय, तन को शरण तथा आत्मा को एक मिलन आतुर आत्मा का भाव दर्शित हुआ। एक अनोखा अनुभव था।

इस प्रेरणा का प्रभाव स्थायी हो गया। मिलने की और मिलते रहने की उत्कण्ठा उत्पीड़न बनने लगी। मेरा जाना नियम बन गया और उनका स्नेह अधिनियम हो गया। सम्पर्क सम्बन्ध, सम्बन्ध साधन और साधन आराधन होते चले गये। मुझे ऐसा लगने लगा कि मैं उनके निकट होता जा रहा हूँ और शायद ऐसा लगने लगा कि मुझमें कुछ स्थापित करने के योग्य मानने लगे हैं। अपनी ओर से सत्संगी भाईयों कि समस्याओं के निदान के लिए (किसी के परिवार के मुखिया के निधन, किसी के परिवार में भूत-प्रेत अतिक्रमण, किसी की जीविका अर्जित करने के साधन आदि आदि) में भेजते रहे। पहली बार सत्संग के संगठनीय मामले में जब मुझे उत्तरदायित्व मिला, तब मैंने अपने आप को सर्वथा उसके अयोग्य पाया। मैं और मेरे जीवन में सनातनी व्यवस्था और आस्था की गहरी छाप है। मैं उनसे मिला और उस दायित्व के सर्वथा अयोग्य समझ पर योग्य समझ का निर्णय था, जो निराकरण भी था।

यही ज्ञान और अनुभव का भेद है। ज्ञान पुस्तक से, व्यक्ति से, सुन कर होता है। अनुभव स्वयं अपना अर्जित हो, ज्ञान के विज्ञानीकरण से या अनायास होने वाली घटनाओं से होता रहता है। अनुभव का वह भाग्य जो हमने जीवन का हिस्सा बना लिया है, ज्ञान कहलाने का अधिकारी है। अन्यथा वह ज्ञान नहीं केवल, जी हाँ, केवल जानकारी है। पूज्य श्री की कृपा रही, वे मुझे ऐसे कुछ अनुभव करा गये जो अन्यथा असम्भव रहते।

मैं अपनी सीमा में रहकर उनके अन्तरम की आध्यात्मिक गहराई (या ऊँचाई) नापने या वर्णन करने का साहस एवं प्रयास नहीं करूँगा क्योंकि समुद्र को देखकर पानी ही पानी देखने वाला पानी का और उसमें रह रहे जीव-जन्तुओं को देखने वाले

जीव-जन्तुओं का तथा समुद्र का मन्थन करने वाले, उसमें छिपे रत्नों का ही वर्णन करते रहे ''जो जेता जानहि तेता बखानहि।'' अतः जो मुझे आभासित हुआ उसी का कुछ अंश अन्य भाई-बहनों की सेवा में उनको उससे कुछ लाभ हो सके, ऐसा समझ कर वर्णन अपने एक किनारे पहुँच चुके जीवन में सार्थक सेवा के उद्देश्य से लिखने का एक प्रयास भर कर रहा हूँ। एक अभिलाषा भर है।

परम् श्री की एक क्षण में पूर्ण ध्यान में स्थित होने की अद्भुत अवस्था थी। सत्संग-भण्डारों की भीड़ या फिर एकांकी अभ्यास वे क्षणिक समय में ही उस स्थिति को प्राप्त कर लेते थे जिसे सुषुप्त और जागृत की दहलीज का भी नाम दिया है। वे उन उत्कृष्ठ श्रेष्ठ साधकों में से थे जो दूसरों को भी ध्यान लगवाने के कुशल कारीगर औरों की साधनाओं को चमत्कृत करने वाले परिष्कृत बाजीगर और अपनी ओर आकर्षित करते रहने वाले परिमार्जित प्रभाकर थे।

योगशास्त्र में घ्यान से पहले यम, नियम और आसन को आवश्यक बताया है। वे इन्हें परम आवश्यक मानते थे। उनकी व्यावहारिक जीवन शैली यम, नियम और आसन से सभी तरह सज्जित थी। अर्जित साधन को ही अपने प्रयोग में लाना, नियमों का पूर्ण रूप से पालन करना और आसन में बैठना तथा बैठे रहना उनकी अपूर्व उपलब्धि थी। अपने प्रवचनों में यह विस्तार चर्चा करते रहे। हाँ, स्वयं के कड़ाई से पालन करने के बावजूद भी उन्होंने भाईयों पर कभी कड़ाई नहीं की। यह शायद उनके स्वभाव की मृदुता का परिणाम था जो उनके प्रेम भाव प्रमुख होने से था।

उनके जीवन में भण्डारे किसी बड़े मेले का रूप लेने लगे थे। उनका राम, उनके राम का व्रत लेने से राम का विशालकाय वृक्ष बन चुके, जिनकी छाया हज़ारों को शीतलता, सैकड़ों शान्ति और दसियों राम के शरणागत करने के लिए सामर्थ्यवान था। रामायण के राम के साथ घट-घट वासी राम उनमें था, उनसे था तथा उनके लिए। उनके विचारों को साकार करने के लिए उन्हीं से सामर्थ्य की याचना करें क्योंकि अब वे सर्वत्र व्याप्त हो गये। कबीर ने भी तो कहा है :-

जल में कुम्भ, कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पानी।
फूटा कुम्भ, जल जलहि समाना, यह तथ कह्यो गियानी।

स्मृति

बी.एन. वर्मा (भुवन जी)
भभुआ

जब भी चर्चा होती है उनकी, उनके जल्वों की बात होती है।
जब चाहे तू दिन निकलता है, जब चाहे तू रात होती है।।

अपने कई मित्रों से सुना करता था, कि देहली में एक सन्त रहते हैं, जो यों तो हम लोगों की तरह देखने में साधारण मनुष्य ही लगते हैं; पर ईश्वरीय गुणों से सम्पन्न मानव शरीर में भगवान हैं। मित्रों का कहना है कि उसके सर्म्पक से अन्तर के सभी द्वन्द मिट जाते हैं। उनके पास एक अपूर्व शान्ति मिलती है, क्षण भर के उनके सामीप्य से जीवन में उठे तूफानों से निकलने का मार्ग अप्रयास ही मिल जाता है। मैं भी उन दिनों अपने बैंक में मनेजमेन्ट की राजनीति से परेशान था। परेशानियाँ इतनी बढ़ गयीं कि कभी लगता इस्तीफा देने के बाद भी कार्यवाही तो चलती ही। उन मानसिक परेशानी के दिनों में मित्रों से बातचीत के दौरान देहली के सन्त शिरोमणी के प्रति मैं अन्दर ही अन्दर खिंचता चला गया। एक दिन साहस कर मैंने अपनी सारी परेशानियां उनको लिख भेजीं। मेरे आश्चर्य का ठिकाना तो तब न रहा जब हफ्ते भर के अन्दर ही आपका कृपा पत्र मुझे मिला। आपने लिखा था–"अगर आप समझते हैं कि आपने अपराध किया है, तो मनेजमेन्ट के सामने पूर्ण समर्पण कर दें। आपने अगर अपराध नहीं किया है तो सद्भावना के साथ केस लड़ें।"

पत्र पाकर मेरी जो स्थिति हुई उसे व्यक्त करने में मैं असमर्थ हूँ। गुड़ खाकर गूगां खुश तो होता है व्यक्त नहीं कर पाता वैसी ही हालत मेरी थी। 1977 के अन्त में एक सत्संगी भाई (जो आपके गुरु भाई हैं) के साथ देहली मैं आपके निवास स्थान पर गया। आपके दर्शन मात्र से ही मैं सुध बुध खो बैठा, आपको अपलक देखता रहा। कब तक हम लोग बैठे रहे मेरे साथ आये भईयो ने क्या बातें कीं मुझे कुछ भी पता नहीं। मेरी ऐसी अवस्था कब तक रही मालूम नहीं। अचानक मेरे मुँह से निकला–"आपके पास मैं आया हूँ आप मेरा तनिक भी ख्याल नहीं कर रहे हैं।" बड़े ही शान्त और मृदु मुस्कान के साथ आपने उत्तर दिया–"बेटा जब बाप के पास आ जाता है तो वह बेफिक्र हो जाता है उसकी सारी चिन्तायें बाप की हो जाती हैं।'' उनकी चुम्बकीय वाणी ने चिन्ता की

धरातल से उठाकर मुझे न जाने किस लोक में पहुँचा दिया। रात बीती, दूसरा दिन भी बीत गया। मैं विचार शून्य यंत्र चलित सा सब कुछ करता रहा, मेरा मैं मुझे छोड़कर न जाने कहाँ चला गया। रात्रि भोजन के बाद दीक्षा के लिये निवेदन किया। दूसरे दिन मेरी दीक्षा थी। उस दिन पूज्य कृष्ण मुरारी भाई साहब व भभुआ के दिनेश बाबू भी आ गये थे। मेरी चिन्ताओं का क्या हुआ पता नहीं पर जीवन शनैः शनैः शान्त गति से चिन्ता मुक्त चलता रहा।

दिसम्बर 1978 में आप पटना पधारे। मुझसे बोले "तुम्हारा प्रमोशन हो चुका है मिठाई नहीं खिलाओगे?" मैं चकित आपको देखता रहा। सोचने लगा भला मेरे बॉस मेरी तरक्की कब चाहेंगे, कान्फीडेन्शियल रिपोर्ट तो उन्होंने बिगाड़ ही दिया है। मैं इसी ऊहा पोह में था। दूसरे दिन प्रातः पूजा में एक किलो बर्फी ले आया प्रसाद चढाने के लिये। मन में बड़ी ग्लानि थी कि प्रसाद केवल एक किलो लाया जबकि सत्संग में संख्या लगभग तीन सौ लोगों की थी। पूजा के बाद प्रसाद बाँट मैं पुनः आश्चर्य में पड़ गया मेरा प्रसाद आपने स्वयं अपने हाथों से बाँटा। मुझ पर एक अदभुत खुमारी चढ़ी हुई थी। साक्षात् प्रभु खड़े थे सबको एक एक बर्फी दे रहे थे। थोडा सा मुझे दिया कि यह ले जाना। न जाने कौन सी 'मय' पिला दी थी प्रभु ने उस दिन कि चाह कर भी वह स्थिति अब कभी नहीं होती, क्या अद्भुत था उस मय में! सात दिन बाद मुझे प्रमोशन का पत्र मिल गया। वह कौन सा नशा था जो चढ़ा तो प्रतिदिन चढ़ता ही चला गया।

दशहरा 1972 के भण्डारे में मैं दूसरे दिन पहुँचा। पूजा चल रही थी, प्रांगण में पिन ड्रॉप साइलेन्स था। मैं सीधे आपके पास जाकर बैठ गया। सब लोग ध्यान में थे। मैं बैठा ही था कि आपने आँख खोलकर धीरे से कहा–''बेटा मुबारक हो"। एक बार फिर मैं चकित हो गया कि अरे! कल ही तो मेरे घर बेटा हुआ इनको कैसे मालूम हो गया। चुपचाप बैठा मैं यही सोचता रहा कि जरुर इनको शिवनेत्र प्राप्त हैं। जब–जब आपके दर्शन मुझे होते मैं इसी तरह चकित होता और सोचता भगवान ऐसे ही होते हैं। इन्होंने शरीर केवल हम लोगों को दिखाने के लिये धारण किया है।

सन् 1986 में आप आरा आये, वापसी में मैं भी आपके साथ ही था, सोचा मुगलसराय तक उनके साथ रहूँगा। उन्हें मुगलसराय से देहली के लिये गाडी पकड़नी थी। मेरा स्टेशन भभुआ पहले पड़ जाता था। आपने मुझे बुलाया और बोले–"आप भभुआ ही उतर जाइये, मुगलसराय उतर कर बनारस जाने की जरुरत नहीं है। आपके आदेशानुसार सपरिवार मैं भभुआ उतर गया। घर आकर मैंने जब रेडियो खोला तो यह खबर सुनकर मैं चकित हो गया कि बनारस जिस मुहल्ले में मुझे जाना था वहां दो समुदाय के बीच झगड़ा हो गया। मैं फिर सोच में पड़ गया कि उनको कैसे मालूम हो गया जो उन्होंने भभुआ उतरने का आदेश दिया।

प्रेम के भूखे हैं भगवान

1981 में आप आरा पधारे। आरा के एक सत्संगी भाई बड़े प्रेमी थे। आपको अपने घर निमंत्रित करना चाहते थे। अर्थाभाव के कारण अपने को असमर्थ समझ रहे थे। क्या चमत्कार हुआ उन्होंने मुख से कुछ कहा नहीं परन्तु प्रभु ने उनके हृदय की पुकार को सुन लिया। सत्संग समाप्त होने के बाद मुझे अपने साथ लेकर उनके घर गये वहाँ कुछ देर बैठने के बाद उनकी मां से बोले –"माँ मुझे गुड़ नहीं खिलायेंगी?" अपना आदर सत्कार आपने स्वयं करा लिया और भाई की इच्छा भी पूर्ण हो गई संकोच से भी उबर गये। क्या महिमा थी, प्रभू तो प्रेम के भूखे हैं उनसे भी क्या कुछ छिपा है?

आरा की ही एक और घटना है। आरा से भागलपुर जाने का प्रोग्राम बना। सब लोग ट्रेन में चढ़ गये। एक वृद्धा माता जी प्लेटफार्म पर ही छूट गयीं और ट्रेन चल पड़ी। अभी लोगों के मन में संकल्प विकल्प उठ ही रहे थे कि थोड़ी दूर चल कर ट्रेन रुक गई। माता जी को ट्रेन में चढ़ा लिया गया। उसके पहले हम सभी सोच रहे थे कि गुरुमहाराज के रहते माता जी कैसे छूट गयीं। एक बार भाई लोग कई एक प्रश्न लिख कर लाये थे कि पटना सत्संग में पूजा के बाद गुरुमहाराज से पूछेंगे। पूजा ध्यान के बाद पन्द्रह बीस मिनट प्रवचन के बाद आपने पूछा किसी भाई को कुछ पूछना है? सब चुप रहे क्या पूछते हर प्रश्न का उत्तर तो प्रवचन में मिल गया। जो लोग प्रश्न पूछना चाहते थे वह लोग इतने प्रभावित हुये कि आपसे दीक्षा देने की प्रार्थना कर बैठे। उनकी प्रार्थना स्वीकृत हो गई।

मैं और मेरे मित्र सत्संगी भाई देहली आपके दर्शनार्थ गये। वहीं पहाड़गंज में एक धर्मशाला में ठहर गये। अचानक रात को वह भाई उठे और बोल–''चलो जल्दी चलो, सत्संग में चलना है न, देर होने पर पीछे बैठना पड़ेगा।'' समय का ना तो अन्दाज लगा और न ही हम लोगों ने घड़ी देखी। जल्दी–जल्दी तैयार होकर हम लोग उनके निवास स्थान पर पहुँचे। तब आप पहाड़गंज में ही उपर की मंजिल पर रहते थे। हम दोनो जब पहुँचे तो क्या देखते है कि दरवाजा खोलकर आप सीढ़ी पर खड़े हैं। हमें देखकर बोले–"अभी तो रात के ढाई बजे हैं ऊपर आकर आप लोग आराम कीजिये।" हम लोग अवाक सर झुकाये खड़े रहे। हम लोगों के लिये आपको कितना कष्ट उठाना पड़ा। हमारे पागलपन का पता अर्न्तयामी को चल गया, तभी तो रात्रि के ढाई बजे दरवाजा खोल कर हमारी प्रतिक्षा करते सीढ़ी पर खड़े रहे। हम भावातिरेक प्रेम वर्षा में भीगते रहे।

समर्पित हृदय से सेवा करती रहे

एक सत्संगी भाई की पत्नी को कैंसर था। उनको लेकर वह आपके पास देहली गये।

आप स्वंय उनसे मिलने नीचे आये। उनकी पत्नी से बोले–"बहन आप रोज तुलसी का पत्ता और मिश्री खाइये। इस बात का ध्यान रखें कि समर्पित हृदय से अपने पति की सेवा करती रहें।" दस पन्द्रह वर्ष बीत गया वह बहन तो आज भी स्वस्थ हैं किन्तु उनके पति का निधन हो गया। वह बहन आज भी गुरुदेव के उस आदेश को याद करके रोती हैं।

इसी तरह एक वकील साहब (हमारे सत्संगी भाई थे) बहुत बीमार रहते थे। कभी–कभी तो ऐसी स्थिति हो जाती थी कि मृत समझ कर उनको जमीन पर उतार देते थे। गुरु महाराज को बड़े दीन भाव से देखा करते थे बोलते कुछ नहीं थे। स्वयं तो बीमार रहते ही थे उनकी पत्नी की भी हालत बड़ी खराब थी। चन्द रोज की मेहमान थीं। एक दिन उन्होंने आखिर अपनी व्यथा कथा गुरुदेव को सुना ही दिया। गुरुदेव ने वकील साहब का हाथ पकड़ लिया और बोले "कौन कहता है आप बीमार हैं।" गुरु महराज से बातचीत होने के पश्चात् वकील साहब एकदम स्वस्थ्य हो गये। अर्थाभाव के कारण या किसी और कारण से जिन लड़के लड़कियों की शादी में अड़चन पड़ी आपने सहज ही उनका सम्बन्ध करा दिया।

एक भाई ने अपनी लड़की की शादी इसलिये तोड़ दी कि लड़का बहुत साधारण पोस्ट पर था। उन सज्जन से कहा कि यह शादी कर दो, लड़का एक दिन बड़ी ऊँची पोस्ट पर पहुँचेगा। लड़का सचमुच आज बड़ी ऊँची पोस्ट पर है। सन्त चमत्कार दिखाते नहीं उनका स्वभाव इतना दयालु होता है कि स्वतः कृपा हो जाती है। जो कुछ घटित हो जाता है इसका उनको गुमान भी नहीं होता। उनका स्वभाव ही ऐसा होता है कि वह अपने सन्तान की पीड़ा कब देख सकते है? ऐसा वह न करें तो भला भगवान् पर विश्वास कौन करेगा?

पटना में सत्संग था। आरा से मैं भी गया था। सत्संग के बाद जब मैंने वापस लौटने की आज्ञा मांगी तो आपने कहा–"सवेरे का सत्संग करके आरा जाकर ड्यूटी करना।" मुझे असम्भव लगा और मैं रात को ही चल दिया। क्या बात हुई गाड़ी रात भर बीच रास्ते में खड़ी रही, सुबह आठ बजे आरा पहुँची। घर पहुँच कर आफिस जाने में देर तो हो ही गई थी। उनके आज्ञा का उल्लंघन करने का परिणाम यह हुआ कि सुबह की पूजा नहीं मिली। यह एक बहुत बड़ी सीख मिली हमें।

न जाने क्यों मेरे पिता मेरे बारे में बहुत चिन्तित रहते थे। एक बार आपने गुरुदेव से कहा–"महाराज मेरे इस लड़के पर कृपा करिये।" आपने उत्तर दिया–"आप इन्हें इस जन्म से जानते हैं, मेरा परिचय इनसे जन्म जन्मान्तर का है।''

एक बार एक सत्संगी भाई को खास निर्देश आपने दिया पटना जाने पर किसी खास सज्जन के घर ठहरने का। आपके निर्देशानुसार वह उनके निवास स्थान पर

ही रुकते। कुछ दिनो बाद उन्हे पता चला कि उनका विभागीय अनवेषण जिनके घर गुरुमहराज ने ठहरने को कहा है वही करते हैं। वह मन ही मन घबराये किन्तु गुरुदेव के आदेशानुसार शान्तपूर्वक उन्हीं के घर ठहरते रहे अपनी ओर से वह अनजाने बने रहे। कृपा देखिये वह जिन आरोपों से घिरे थे बिना किसी पैरवी के वरी हो गये। तब उनके समझ में आया कि क्यों गुरुमहाराज ने उनको वहां ठहरने के लिये कहा था। भला इतनी दूर तक मनुष्य की समझ क्या जा सकती है?

विशेष पार्क में टहलने का आदेश

एक भाई की नौकरी छूट गई थी। आपने उनको एक विशेष पाक्र में टहलने को कहा। वह बेचारे बडे सोच में पड़ गये कि मुझे तो नौकरी चाहिए और आप पाक्र में टहलने को कह रहे है। मन मार कर वह आदेशानुसार रोज उनके द्वारा बताये पाक्र में टहलने लगा। एक दिन कोई भले सज्जन पाक्र में टहलते-टहलते बेहोश होकर गिर गये। उन सज्जन को गिरता देखकर वह सत्संगी भाई दौड़ कर गये और उन्हें उठा कर सुरक्षित स्थान पर ले गये। सेवा सुश्रुषा से जब वह सज्जन ठीक हुये तब आभार मानते हुये बोले-"भाई आपने मेरी बड़ी सेवा की है मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?" पहले तो हमारे सत्संगी भाई संकोच में पड़ गये फिर धीरे से अपनी परेशानी से उन्हें अवगत करा दिया कि बिना किसी गलती के उनको नौकरी से निकाल दिया गया है। उन सज्जन ने उनको अपने फर्म में नौकरी पर रख लिया। हमारे सत्संगी भाई को तुरन्त ख्याल आया कि क्यों उन्हें विशेष पाक्र में ही टहलने का आदेश मिला। इस बात को कहते हुये वह बराबर भाव विभोर हो जाते है, आँखे आंसू से भर जाती है

सन्त जल्वा दिखाते नहीं है जल्वा स्वयं ही बिखरता है। मेरी आपसे जब भी मुलाकाल होती आप बराबर यही कहते गुरुदेव का ध्यान करो। बार-बार यही बात सुनकर मैंने एक बार उनको पत्र लिखा कि आप मुझको साफ-साफ निर्देश दें कि मै आपके शकल को ध्यान करुँ। पत्रोन्तर स्वयं न देकर आपने उत्तर कृष्णमुरारी भाई साहब से दिलवाया जिसमें लिखा था-"Ardent devotion, blind faith and services to humanity lead to right path. Once a disciple absolves in his preceptor his entire works are automatically done"

तीन माह सेवा का आदेश

शशि वर्मा
भभुआ

परमपूज्य गुरुदेव की सेवा में मैं 1977 में अपने पति के दीक्षा लेने के बाद गई। 1981 में आपका आरा आगमन हुआ। कृपा करके आपने मुझे दीक्षा मेरे घर पर ही दिया। आपके ईश्वरीय व्यक्तित्व और अलौकिकता का बरवान करना तो ऐसा है जैसे सूर्य को दीप दिखाना। दीक्षा के समय और उसके बाद जो एक अपूर्व अनुभव मुझे हुआ उसे मैं लिख पाने में असमर्थ हूँ।

बनारस वाले पूज्य गौड़ भाई साहब की स्थिति बहुत खराब थी। रीढ़ की हड्ड़ी का पक्षाघात हो गया था। पूज्य सच्चिदा भाई साहब और मेरे पति उनको बनारस में डाक्टर सिंह के पास ले गये। बी.एच.यू में भर्ती कराया गया, तत्पश्चात् उन्हें कबीर चौरा अस्पताल में भर्ती कराया गया। गुरुदेव को फोन द्वारा बता दिया गया और क्या ईलाज हो रहा है वह भी बता दिया गया। फोन पर ही गुरुदेव ने उत्तर दिया कि आप लोग चिन्ता मत करें तीन माह तक खूब लगन से सेवा करें। हम लोग मन चित्त से उनकी सेवा करने लगे कि तीन माह में गौड़ भाई साहब ठीक हो जायेंगे। उनके कहने का आशय समझ सकने में हम असमर्थ थे। एक दिसम्बर 1981 को जब गौड़ साहब का निधन हो गया तब गुरुमहाराज के कथन को हम समझ सके।

सत्संग की तिथि बदल दी

भभुआ में 13 जून को आपकी जन्मतिथि के उपलक्ष्य में सभी भाई बहनों ने सत्संग करने का निश्चय किया। दिनेश बाबू का पत्र लेकर मेरे पति भुवन बाबू और भाई हरीशंकर तिवारी जी देहली गये। आपने आदेश दिया कि इस बार 4, 5, व 6 जून 1988 को भभुआ में सत्संग होगा। 13 जून को नहीं होगा भभुआ में सत्संग आपके कथनानुसार ही हुआ। सत्संग समाप्त होने पर आप 6 जून को ही देहली वापस चले गये। आठ जून को अचानक मेरे भतीजे का देहान्त हो गया। भतीजे के पिताजी सत्संगी हैं, अन्तरयामी से भला क्या छिपा है? इस दुःखद घटना के बाद क्या वह सत्संग में सम्मलित हो पाते। इसीलिये आपने भण्डारे की तिथि 13 जून से पूर्व कर दिया हर एक का आपको कितना ख्याल रहता है।

आदेश

मेरे पति भुवन बाबू पटना में पोस्टेड थे। एक दिन गुरु महाराज का फोन और पत्र आया "आप तिवारी जी को लेकर देवघर जायें।" जिस दिन आप देवघर पहुँचे देखते हैं कि ठाकुर जी के घर के बाहर सभी सत्संगी भाई बहन बरसते पानी में बाहर खड़े हैं। पता चला उसी दिन सत्संगी भाई उमेशजी का निधन हो गया, रात भर सब लोग उनके मृत शरीर को लेकर बैठे रहे। दूसरे दिन उनका संस्कार किया गया।

तबादला

मेरे पति आरा में पोस्टेड थे। वहाँ कुछ लोगों से इनका विचार वैमन्सय हो गया। फलस्वरुप वे बहुत परेशानी में उलझ गये। चाह कर भी उन लोगों के साथ सामंजस्य नहीं बैठा पा रहे थे। पिता भला अपने सन्तान को कष्ट में कब देख सकते हैं? उनका वरद हस्त तो सदैव छतरी की तरह फैला रहता है। इन्होंने निवेदन किया और कुछ दिनों में ही आरा से इनका स्थानान्तरण हो गया।

वहीं आ गये मदद को, जहाँ हमने उन्हें पुकारा

गया के एक सत्संगी भाई को दिल का दौरा पड़ा। इलाज के लिए वह मद्रास गये। आपरेशन थियेटर में ले जाने के पश्चात् डाक्टर ने कहा ''आपके आपरेशन में बहुत पैसा लगेगा।" उतना पैसा उस समय उनके पास नहीं था। डाक्टर से उन्होंने कहा-"अभी तो इतना पैसा मेरे पास नहीं है, मैं बाद में जमा कर दूँगा।'' डाक्टर आपरेशन करने से इन्कार करके अपने चेम्बर में चला गया। वाह रे चमत्कार! ऐसे ही तो भगवान् करते हैं जो अपने भक्तों की परेशानी में नंगे पैर दौड़ कर आते हैं। अपने चेम्बर में बैठे डाक्टर ने देखा कि जोगिया पगड़ी बांधे एक सरदार जी सामने खड़े हैं और कह रहे हैं-"आप आपरेशन कीजिये पैसा तीन चार दिन में मैं दे दूँगा" ना जाने डाक्टर को क्या हुआ, कहाँ तो बिना पैसा लिये आपरेशन करने को तैयार नहीं था, मंत्रमुग्ध सा उठा और झा जी के पास जाकर बोला-"आपका आपरेशन आज ही होगा, एक सरदार जी ने पैसा देने को कहा है।" झा जी ने अपनी जेब से गुरुदेव का फोटो निकाल कर दिखाया। फोटो देखकर डाक्टर ने कहा-"हाँ यही तो वह शख्स हैं। आपके कौन है?" झा जी रोने लगे और बोले यह एक महान संत हैं। मेरे गुरुदेव हैं। बिना तुरन्त पैसा लिये डाक्टर ने उनका आपरेशन कर दिया। यह प्रभू कृपा थी। लिखते लिखते आँख भर आई है रोम रोम पुलकित हो उठा है। गुरुदेव की कृपा का वर्णन क्या मैं कर सकती हूँ? इतनी क्षमता मुझमें नहीं है। उस लीला का वर्णन करने में मैं उसी में खो जाती हूँ। लगता है शून्य हो गई हूँ।

प्रथम दर्शन

सीता प्रसाद
मुजफ्फरपुर

बात सन् 1977 की है। मेरे छोटे पुत्र जिसकी उम्र मात्र छः वर्ष की थी खेलते समय Plucker से आँख में चोट लग गई; जिससे आँख का लेंस फट गया। दोपहर का वक्त था भोजन के पश्चात् मैं सो गई थी। मेरे पति डा. मुद्रिका प्रसाद, अस्पताल की ड्यूटी खत्म होने के बाद अपने निजी क्लीनिक में चले गये थे। बेटे बीनू को रोता देखकर मेरी बड़ी बेटी नीलू ने मुझे जगाया और बोली "माँ बीनू की आँख में चोट लग गई है"। उठकर आँचल से उसके आँख में भाप से सेका और आई ड्राप डाल दिया; किन्तु फिर भी उसका रोना कम ना हुआ। उस समय मोबाइल या फोन की सुविधा नहीं थी। क्लीनिक में डाक्टर साहब को खबर भेजा। उन्होंने बीनू को अस्पताल में आँख के डाक्टर को दिखाया। उस समय इनकी पोस्टिंग गोपालगंज (बिहार) में थी।

अस्पताल से आने के बाद उन्होंने बताया कि मुजफ्फरपुर ले जाकर किसी आई सर्जन को दिखाना पड़ेगा। उसकी आँख में सूजन आ गई थी। दूसरे दिन मैं बेटे को लेकर मुजफ्फरपुर गई। वहाँ डाक्टर साहब के एक मित्र आई सर्जन थे। बच्चे को देखने के बाद डाक्टर साहब ने बताया की "आपके बेटे की आँख का लेन्स क्षतिग्रस्त हो गया है। अब आँख में मोतिया होगा जिसका पकने के बाद आपरेशन होगा। तभी आँख में कुछ हो सकेगा।" सुनकर मैं परेशान हो गई। भगवान से प्रार्थना करती और जो भी कोई करने को कहता मैं वही अनुष्ठान करती। मेरा मन बड़ा परेशान रहने लगा, सोचती किस अपराध की यह सजा है। हर सप्ताह बच्चे को लेकर डाक्टर के पास जाती। पन्द्रह दिन पर एक होम्योपैथ डाक्टर को दिखाने गोरखपुर लेकर जाती।

स्वर्गीय विनायक भाई साहब की नियुक्ति उन दिनों गोपालगंज में थी। उनसे हमारी रिश्तेदारी भी थी। उनकी पत्नी लक्ष्मी बहन से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध था। वह मेरी मनःस्थिति को देखकर बराबर गुरुदेव के दर्शन करने को चलने के लिये कहतीं ''उनसे कहने से सभी दुःख दूर हो जायेगें"। वह मुझे बराबर बताती कि किस तरह उनके दूसरे पुत्र को विषम परिस्थिति से निकालने में पूज्य गुरुदेव का सहारा मिला था। उनके घर जाकर मैं गुरुदेव की फोटो को देखती और अपने शरण में लेने के

लिये प्रार्थना करती। इस तरह उनसे प्रार्थना करके मुझे काफी धैर्य मिल रहा था। लक्ष्मी बहन मेरी मार्ग दर्शिका बन गई। जब तब मैं परेशान होकर उनके पास जाने लगी। एक दिन उन्होंने बताया कि गुरुदेव गोपालगंज आने वाले हैं। दिन तारीख तो मुझे याद नहीं है पर सन् 1978 में पूज्य गुरुदेव के दर्शन हुये। गुरुदेव का आकर्षक व्यक्तित्व, नीली आँखें, मुस्कुराता चेहरा, चारो ओर एक अलौकिक तेज बिखेरता सा लगा। उस आभा में डूबी मैं संज्ञाशून्य सी हो गई। लक्ष्मी बहन के साथ मैंने जैसे ही कमरे में प्रवेश किया आपने पूछा–"बहन! मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?" मैंने उनकी ओर देखा, उनकी दृष्टि से दृष्टि मिलते ही मुझमें एक अलौकिक शक्ति का संचार हुआ जो पूरे शरीर में एक लहर की तरह समा गया। एक नशा सा छा गया। मैं खड़ी की खड़ी ही रह गई। शान्ति, परमशान्ति किसी ने मेरा सारा दुःख दर्द खींच लिया। मैं रो पड़ी। कुछ कहने के लिए मेरे पास कोई शब्द ही न था।

गुरुदेव ने लक्ष्मी बहन से कहा कि बहन को नवनीत पुस्तक लाकर दे दीजिये। उन्होंने मुझे नवनीत भाग दो लाकर दिया। मैंने अनुभव किया कि उस दिन से मेरे अन्तर में एक न कह पाने वाली खुशी समा गई है। हर पल आपका ही ध्यान बना रहने लगा। जब तब आँख बन्द करके मैं दिव्य महापुरुष के रुप का ध्यान करने लगी। किसी अज्ञात शक्ति से मुझमें एक अपूर्व परिवर्तन होने लगा। बार–बार इच्छा होती उस विराट स्वरुप के दर्शन की। मेरे पति गुरु व दीक्षा में विश्वास नहीं करते थे। इसी वजह से आन्तरिक इच्छा होते हुये भी गुरुमहाराज के दर्शन हेतु मैं लक्ष्मी बहन के साथ देहली नहीं जा पाती थी। गुरु महाराज से भला क्या छिपा था? कुछ ऐसी कृपा उनकी हुई कि डाक्टर साहब से पत्र द्वारा बात करने की अनुमति मुझे मिल गई। भुवन बाबू (भभुआ) से डाक्टर साहब की बराबर गुरु महाराज के विषय में बातचीत होती रहती थी। एक बार गुरु महाराज का पत्र आया कि अगर आपके पति आपको आज्ञा दें तो आप दिसम्बर में गोरखपुर में मुझसे मिलें। भुवन बाबू के बराबर सम्पर्क ने डाक्टर साहब के मन में गुरु महाराज के प्रति आकर्षण का बीजारोपण तो कर ही दिया था। गोरखपुर जाने की अनुमति मुझे सहज ही मिल गई। निर्धारित समय पर लक्ष्मी बहन व विनायक बाबू के साथ मैं गोरखपुर पहुँची। सत्संग 12 दिसम्बर 1978 को सुबह स्वर्गीय पूज्या वीरमती बहन के घर पर था। वह दिन मेरे जीवन का सबसे बहुमूल्य दिन था; मुझे गुरुदेव ने कृपा करके नामदान जो दिया। मेरा जीवन धन्य हो गया। यह श्रेय लक्ष्मी बहन को जाता है क्योंकि उन्हीं की कृपा से यह सब सम्भव हुआ। मैं उनकी चिर ऋणी रहूँगी।

उसी दिन शाम को गुरु महाराज देहली वापस लौट गये। सबके साथ स्टेशन पहुँचाने मैं भी गई। मुझे बहुत रोना आ रहा था, चाह कर भी मैं उनसे कुछ कह

नहीं पा रही थी। आखिर उन्होंने ही मुझसे पूछा–"बहन! आप रो क्यों रही हैं?" मैंने रोते–रोते कहा–"डाक्टर साहब को भी अपने शरण में बुला लीजिये" उनका उत्तर था–"बहन यदि आपकी निष्ठा सत्संग में बनी रहेगी तो डाक्टर साहब तो क्या आपका पूरा परिवार, सगे सम्बन्धी सभी आ जायेंगे।" प्रभू की यह कैसी भविष्यवाणी थी! डाक्टर साहब के परिवार के सभी सदस्य गुरुदेव की शरण में आकर लाभान्वति हो रहे हैं।

चमत्कार कहूँ या कृपा?

मेरे दूसरे बेटे का नामांकन 1977 में इलाहाबाद में हुआ। घर से बाहर अब तक अकेले वह कभी भी नहीं रहा। पूज्य गुरुदेव का प्रोग्राम 1970 में इलाहाबाद का बना। आप स्वर्गीय सत्य प्रकाश भाई साहब के घर ठहरते थे। भभुआ बनारस होते हुये पूज्य गुरुदेव के साथ मैं इलाहाबाद आई थी। बेटे विभु को बुलाकर गुरुदेव का दर्शन कराया। गुरुदेव की कुछ ऐसी कृपा हुई कि उसे रात्रि शयन के लिए अपने कमरे में बुलाया। पहले वह इलाहाबाद में रहना नहीं चाहता था अब उसका मन लगने लगा। इलाहाबाद में उसके साथ दो बार प्राण घातक घटना घटी, गुरुदेव ने दोनों बार मुझे बहुत पहले ही अगाह किया और इलाहाबाद जाने को कहा। परिस्थितियाँ कुछ ऐसी बनीं कि मैं किसी बार न जा सकी। दोनों बार आपकी अपूर्व कृपा से उसको जीवनदान मिला।

प्रथम घटना

1970 के मई महीने में गुरुदेव का पटना का प्रोग्राम बना। इलाहाबाद स्टेशन पर सब लोग उनके दर्शन के लिये आये थे। मेरे बेटे विभु को स्टेशन पर न देखकर आपने सत्य प्रकाश भाई साहब के बेटे कुलदीप से पूछा ''डाक्टर साहब का लड़का विभु नहीं आया''। कुलदीप के यह कहने पर कि वह अपने कमरे में है, आपने कुलदीप से कहा आप उसे अपने घर ले जायें परीक्षा के दिन हैं उसे कुछ परेशानी न होने पाये। कुलदीप विभु को लेने के लिये उसके कमरे पर गये। परीक्षा के बाद आने के लिये कहकर विभु ने कुलदीप को वापस भेज दिया। उसी रात मेस के खाने से उसे food poisoning हो गयी। दोस्त लोग उसे एक प्राइवेट क्लिनिक में ले गये। पटना में लाला लाजपतराय हाल में ज्योंही गुरुदेव ने मुझे देखा आपने इलाहाबाद जाने को कहा। मैंने सोचा सत्संग के बाद देखा जायेगा, इलाहाबाद जाना मैंने टाल दिया। मैं मूर्ख उनके आदेश का तथ्य समझ न सकी। उसी रात गुरुदेव से मेरी भेंट पुनः बरामदे में हुई। आपने मुझसे पूछा –"आप इलाहाबाद नहीं गई?'' कह कर वह गम्भीर हो गये चेहरा कुछ लाल सा लगा। उनकी उस मुख मुद्रा को देखकर मैं अन्दर तक सहम

गई। उनके चरणों के पास सर रखकर रो पड़ी। प्रभू क्या विभु को कुछ हो गया। मुझे याद आया एक बार पहले भी आपने मुझे इलाहाबाद जाने को कहा था परन्तु मैं जा न सकी थी। विभु नहाने गया था डूबने लगा तब मेरे प्रभू ने ही उसे बचाया था। गम्भीर स्वर में आपने केवल इतना ही कहा–"आपको इलाहाबाद जाना चाहिए था।'' मैं गोपालगंज वापस आ गई। कुछ दिनों बाद आपका पत्र मिला, लिखा था–''आशा है आपको विभु का समाचार मिल गया होगा''। पूज्य गुरुदेव ने मुझे सदैव परेशानियों से उबारा है। उनकी अपार कृपा को लिखने के लिए शब्दों का आभाव है, क्या लिखूँ समझ नहीं पाती।

दूसरी घटना

विभु लड़कों के साथ संगम नहाने चला गया। मौज मस्ती में खतरे के निशान से आगे बढ़ गया, अचानक वह भंवर में डूबने लगा। उसने बाद में मुझे बताया कि जब वह डूबने लगा तब घबरा कर गुरुदेव को पुकारने लगा। मेरी सांस रुकने लगी और लगा कि मैं बेहोश हो जाऊँगा वह प्रार्थना करने लगा–''गुरुदेव मेरे माँ पिता का आपमें अटूट विश्वास है मरने के पहले क्या मैं अपने माँ पिता को नहीं देख पाऊँगा?'' यही प्रार्थना करते-करते वह बेहोश हो गया। किनारे पर शोर मच गया पर कोई कुछ कर न सका केवल शोर मचता रहा कि लड़का डूब रहा है। विभु ने मुझे बताया कि जब गुरुदेव को असहाय हो कर मैं पुकार रहा था तब मुझे ऐसा लगा कि सफेद वस्त्र पहने, लम्बे चौड़े महापुरुष जिनका मुख मंडल अलौकिक तेज से चमक रहा था मुझे उठा कर बाहर फेंक दिए। उसके बाद मुझे होश नहीं कि क्या हुआ। होश आने पर उसने देखा वह किनारे पर पड़ा है, चारो ओर देखकर उसने पूछा वह बाबा जी कहाँ गये जिन्होंने मुझे गोद में उठा कर भवंर से किनारे फेंका। इर्द-गिर्द लोगों ने कहा भईया तुम्हे किसी बाबा ने नहीं स्वयं गंगा मईया की लहरो ने बाहर तट पर फेंका है। बड़े भाग्यशाली हो।

काफी दिनों बाद जब वह घर आया तब दादा गुरुदेव (डा. श्री कृष्ण भटनागर साहब) का फोटो देखकर वह आश्चर्य से चिल्ला पड़ा–"माँ माँ मुझे इन्होंने ही संगम में डूबने से बचाया था।" प्रभू की कैसी कृपा है जो मुझ मूर्ख पर सदैव बरसती रहती है। उनकी इस कृपा को जब-जब याद करती हूँ आखें बरस पड़ती हैं। क्षण प्रतिक्षण उन देहधारी प्रभू की कृपा का एहसास तो नित्य प्रति मनन करने की चीज है। परन्तु यह कैसी विडम्बना है एहसास करके भी हम मनन नहीं कर पाते। प्रभू हमें शक्ति दें, हमारी प्रार्थना स्वीकार करें कि उनकी यह शताब्दी अक्षुण रहे हमें उनके दर्शन सदैव मिलते रहें।

पढाई पर ध्यान दो

राजेश कुमार श्रीवास्तव
बनारस

जहाँ तक पढ़ाई की बात है, मैं बहुत साधारण विधार्थी था। यह कहूँ तो पढने में मेहनत ही नहीं करता था। सन् 1981 में गुरुदेव बनारस आये उस समय मै बी.एससी. प्रथम वर्ष में था। बनारस सत्संग के बाद जब पूज्य गुरुदेव गोरखपुर जाने के लिए बस में बैठे तब सब लोग बारी बारी से उनका चरण स्पर्श करके आशीर्वाद ले रहे थे। मेरी बारी अंत में आई और जब मैंने उनका चरण स्पर्श किया तो मेरे गाल को थपथपाते हुये, बोले-''बेटे! 54 प्रतिशत से काम नहीं चलेगा। मेहनत से पढ़ाई करो" मैं एकदम से चकित हो गया। सोचा शायद पिता जी ने बताया होगा। पिता जी से पूछा तो मालूम हुआ कि इस विषय में पिताजी ने गुरु महाराज से कोई बात नहीं किया। मेरे कान में उनके ये वाक्य गूंजने लगे-"बेटे! 54 प्रतिशत से काम नहीं चलेगा।" परिणामस्वरुप उनका ध्यान करके मैं मेहनत से पढ़ने लगा। आपके आशीर्वाद से मैं बी.एससी. में 64 प्रतिशत से उत्तीर्ण हो गया। मैं व्यक्त नहीं कर पा रहा हूँ लेकिन चकित हूँ कि उनको प्रत्येक बात और अपने बच्चों के भविष्य की कितनी चिन्ता रहती है। हर एक पर उनकी कृपा होती ही रहती थी।

मन का ख्याल

समय बीत गया मैं नौकरी में उनकी कृपा से आ गया। प्रति वर्ष दशहरा भण्डारे में आपके दर्शन के लिये जाने लगा। पता नहीं 2006 में मेरे मन में क्या विकार उत्पन्न हुआ कि भण्डारे में न जाकर मैं बिलासपुर अपनी बड़ी बहन के पास जाने का मन बना बैठा। भण्डारा उस वर्ष अन्त में होना था। फार्म लाया, भर कर रख लिया गाज़ियाबाद के लिए, लेकिन रातोरात विचार बदल गया। बिलासपुर जाने से दो-तीन दिन पहले मुझे बुखार हो गया। डाक्टर को दिखाने पर डाक्टर ने कहा कि लक्षण तो सारे चिकनगुनिया के हैं। उस समय बनारस में यह बीमारी बहुत जोरों से फैली हुई थी। मेरी तबीयत दिन पर दिन गिरती ही गई, दोनों बच्चे भी बीमार थे घर में पत्नी अकेली तीन-तीन मरीज, वह परेशान हो गई। कष्ट से परेशान होकर मैं गुरुदेव को

पुकारने लगा। इस तरह पाँच दिन पुकारते बीत गये। भण्डारा तो मिला नहीं परेशानी अलबत मिल गयी। भण्डारे से जब लोग वापस आये, प्रसाद मिला, कृपा यह हुई कि प्रसाद सेवन के बाद थोड़ा तबीयत में सुधार हुआ। तीसरे दिन मेरी तबीयत अधिक खराब हो गई। मेरी भतीजी विशि जिसे गुरु महाराज ऋृषी कहते हैं, ने उन्हें फोन करके मेरे स्वास्थ्य के बारे में बताया। गुरु महाराज ने उससे कहा कि चाचा से मेरी बात कराओ। मैंने फोन पर पूज्य गुरुमहाराज से कहा कि "महाराज! अब तो सहन नहीं होता लगता है अस्पताल में भर्ती होना पड़ेगा। मुझे पानी तक नहीं पच रहा है।

पूज्य गुरुदेव ने बड़े प्यार से मुझसे कहा–"अस्पताल में भर्ती होने की जरुरत नहीं है। आप पतली मूंग की खिचड़ी खायें आसानी से हजम हो जायेगी। अपना समाचार रोज फोन से बताते रहना"। गुरु महाराज के आज्ञा अनुसार मैंने सारी दवा बन्द कर दी और पानी जैसी पतली खिचड़ी खाने लगा। मैंने इस घटना से अनुभव किया कि मन कितना विचित्र है! कैसे–कैसे खेल खिलाता है। अच्छे काम से हटा कर माया में फँसा देता है। कहाँ तो जाना था भण्डारे में और कहाँ रातों रात भटक गया और प्रोग्राम बदल दिया। यह तो दीनबन्धु की ही कृपा है जिन्होंने मुझे बहकने से बचा लिया और सही रास्ते पर लगा दिया। हे दीनबन्धु आप आपनी कृपा सदा बनाये रहें। मैं तो मूर्ख हूँ समझने में असमर्थ हूँ।

सारी दुनियाँ की नेमते मिल गयीं

विशि
बनारस

त्वमेव माता च पिता त्वामेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणम त्वमेव, त्वमेव सर्वम् मम देव देवा।

अपने बच्चों की इच्छाओं का आप कितना ख्याल करते हैं। छोटी से छोटी इच्छा भी सहज ही पूरी कर देते हैं। इसका अनुभव तो मुझे तब हुआ जब एक बार मेरे मन में यह विचार उठा कि मैं आपको रक्षाबन्धन पर राखी भेजूँ। फिर मन में विचार उठा कि राखी तो बहन बाँधती है। इच्छा थी कि बलवती ही होती जा रही थी, विवश हो मैंने पूज्य सच्चिदा बाबा से पूछा। उन्होंने कहा कि "पूज्य गुरुदेव से आज्ञा ले लो।'' मैंने पूज्य बाबा जी (गुरुदेव) से पूछा। उन्होंने कहा–"हाँ क्यों नहीं, राखी तो बहनें बाँधती हैं, बेटी भेजेगी तो क्या हो जायेगा।" आपकी इस आज्ञा से मेरा मन खुशियों से भर गया, लगा सारी दुनियाँ की नेमतें मुझे मिल गई।

हर प्रश्न का उत्तर मिल जाता है

एक दिन मैंने स्वप्न देखा कि मेरे घर में सत्संग हो रहा है। स्वप्न में ही मैंने देखा कि मैं बाबा पूज्य गुरुदेव से फोन पर बात करके कह रही हूँ कि यहाँ प्रसाद में नमकीन चढ़ाया जाता है। स्वप्न में ही उत्तर मिला ''यह प्रसाद सच्चिदा बाबू को खाना खाने के बाद स्वीट डिश की जगह दे देना।'' प्रातः मैंने सच्चिदाबाबू से स्वप्न के विषय में जब बताया तो उन्होंने कहा–"बेशक कुछ दिनों से हमारा मन खाना खाने के बाद मिठाई खाने का करता है, पर किससे मँगवायें? बेटी गुरुदेव सब देख रहे हैं। उनसे कोई बात छिपी नहीं है।" कितना आश्चर्य है कि जो कुछ मैं सोचती या मन में उठता आपको पता चल जाता है। उसका या तो फोन पर या जब मैं उनके पास जाती हूँ, बिना उनसे कहे उत्तर मिल जाता है। जरा भी परेशानी हुई नहीं कि फौरन समाधान मिल जाता है।

दिसम्बर 2005 की बात है, मेरे चचेरे भाई आयुष को जो केवल सवा साल का था बुखार आ गया साथ ही उल्टी भी बहुत होने लगी। डाक्टर की दवा से कुछ लाभ होता न देखकर घबरा कर मैंने बाबा (पूज्य गुरुदेव) को फोन कर दिया। आपने बायोकेमिक की इक्कीस नम्बर दवा देने को कहा। उनके बताये अनुसार दवा देना शुरु

कर दिया। इक्कीस नम्बर दवा संयोग से घर में ही थी। थोडी देर में भाई को आराम आ गया। ऐसे भगवान जिन्हें हम जब भी समय-असमय पुकारते हैं, वह फौरन ही हमारी मदद करते हैं। आज यह सोच कर मैं बहुत दुःखी हो जाती हूँ कि उस दिन मैंने रात को आठ बजे आपको कष्ट दिया था।

दयामय आप जैसा कौन, हित चिन्तक हमारा है।
आपके दीन दासों को, आपका ही सहारा है।

आपके जन्म दिन पर जून 2010 को जब मैं गाजियाबाद जाने की तैयारी कर रही थी मेरी दादी ने कहा कि भाई साहब से मेरी यह प्रार्थना जरुर कह देना कि भाई साहब मुझे भूल गये क्या। वहाँ पहुँच कर मैंने उनके सम्मुख दादी की प्रार्थना को ज्यों का त्यों दोहरा दिया। आपने कहा-"कैसे भूल सकता हूँ बेटी?'' पन्द्रह दिन बाद 28 जून 2010 को बिना किसी कष्ट के दादी सदैव के लिये चिर निद्रा में विलीन हो गयीं। फोन पर मैंने जब आपको बताया तो आपने कहा-"तू मेरी बहन है।" मैंने निवेदन किया "बाबा जी मैं आपकी बेटी ऋषी हूँ।" किन्तु वह मानने को तैयार ही नहीं थे बोले-"मैं जो कह रहा हूँ वह ठीक है इस पर विचार करना'' माँ को जब मैंने बताया तब माँ बोलीं-"तुम्हारे माध्यम से गुरुदेव जी तुम्हारी दादी से बात कर रहे थे।" गुरुदेव की बातों से मैं बार-बार चकित हो जाती हूँ। भला उनकी बातों को मैं क्या समझूँ?

फरवरी 2011 के वसन्त भण्डारे में पूज्य सच्चिदाबाबा और मेरे चाचा अन्य सत्संगी भाई बहनों के साथ गाजियाबाद गये। उनके साथ मैंने आदरणीय बाबा के लिये पत्र और चाकलेट भेजा। चाचा जी उनसे मिलने गये तो आपने पूछा-"इस लिफाफे में क्या है ऋषी बेटी ने मेरे लिये क्या भेजा है?'' चाचा ने बताया कि विशि ने आपके लिये भेजा है। आपने पूछा "क्या कैश है?" चाचा ने कहा "नहीं इसमें कैश नहीं है।" आप हँसते हुये बोले ''मेरा मन ललच गया कि इसमें कैश है।'' मैं समझ नहीं पाई कि आपने ऐसा क्यों कहा। उन्होंने लिफाफा ले लिया और बोले-"उसे पसन्द होगा, खाती होगी तभी तो मेरे लिये भी भेजा है।" थोड़ा सा लेकर आपने बाकी बाँट दिया।

एक बार एक अनोखी घटना हुई। गुरु पूर्णिमा के भण्डारे में जाने की मैं तैयारी कर रही थी कि अचानक मेरे पेट में भयंकर दर्द उठा जो किसी भी दवा से ठीक होने का नाम ही न ले रहा था। घर में सबने जाने के लिए मना कर किया। निराश होकर सुबह उठकर मैंने आपको फोन किया। वाह रे! मेरे प्रभू आपने फोन पर ही हैपी गुड मार्निंग जो कहा तो मुझमें एक अनोखी शक्ति का संचार हो गया। मेरा रोम-रोम हर्ष से स्पन्दित हो गया। आपके दर्शन के लिये गाजियाबाद पहुँच ही गई पेट का दर्द पता नहीं कहाँ चला गया। ऐसे हैं मेरे प्यारे बाबा जी (गुरुदेव) मेरे लिए तो वही भगवान हैं। आपकी छत्र छाया बराबर मिलती रहे यही मेरी कामना है।

उन्होंने अंक में भर लिया

डा. रुद्रपाल सिंह
चकिया (चन्दौली)

सन्तों की लीला भी अद्भुत होती है। कब किसको अनजाने वह अपना लेते हैं पता भी नहीं चलता। मेरे साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ। मैं सत्संग और गुरुकृपा से एकदम अनभिज्ञ था। जनवरी 1996 की बात है, मैं अपने आवास के छत पर धूप में बैठा समाचार पत्र पढ रहा था। चपरासी ने ऊपर आकर कहा–"साहब! तिमरी इन्टर कालेज के मास्टर साहब आपसे मिलना चाहते हैं।" मैंने उनको ऊपर लाने के लिए कहा। छत पर आकर उन्होंने अपना परिचय दिया–"हुजूर! मैं तिमरी इन्टर कालेज का एल.टी ग्रेड अध्यापक हूँ, मेरा नाम राम जी प्रसाद है।" उनको बैठने के लिए कह कर आने का कारण जानना चाहा। मास्टर साहब ने कहा–"हुजूर। मैं रामाश्रम सत्संग गाज़ियाबाद का एक साधारण सदस्य हूँ। चकिया भभुआ में काफी सत्संगी भाई बहन हैं। हम सबकी हार्दिक इच्छा है कि अबकी मई का भण्डारा चकिया में हो। जगह का अभाव है। उस समय यदि विद्यालय मिल जाता तो आपकी बड़ी कृपा होती। हमें आपसे आर्थिक मदद नहीं चाहिए। केवल महाविद्यालय में भण्डारा कराने की इजाजत चाहिये। आज्ञा मिलने पर हम सब भाई बहन भण्डारे का आयोजन अच्छी तरह से कर लेते हैं। बाहर से आने वाले भाई बहनों की संख्या काफी होगी। मैंने मास्टर साहब से पूछा–"आपका रामाश्रम सत्संग किसी राजनैतिक पार्टी से तो सम्बन्ध नहीं रखता?" उनके उत्तर से हर तरह निश्चित होने के बाद मैंने मास्टर साहब से एक हफ्ते बाद मिलने को कहा।

एक हफ्ते बाद मास्टर साहब फिर आये। मैंने कहा–''विश्वविद्यालय की परीक्षा अप्रैल द्वितीय सप्ताह से प्रारम्भ होकर जून प्रथम सप्ताह तक चलने की चर्चा है किन्तु यह भी चर्चा है कि शायद परीक्षा जुलाई से प्रारम्भ होगी। ऐसी स्थिति में मैं कुछ निश्चयात्मक आश्वासन नहीं दे सकता मिलते रहिये।'' जब मुझे यह सूचना मिली की विश्वविद्यालय की परीक्षा जुलाई से होगी, मैंने मास्टर साहब से कहा कि आप भण्डारे के लिये महाविद्यालय का उपयोग कर सकते हैं। मास्टर साहब ने कहा–"हुजूर महाविद्यालय का नया भवन तो अभी निर्माण ऐजेन्सी के आधीन है आप मुझे कैसे दे पायेगें?" मैंने उनसे कहा भवन का अधिग्रहण तो मैं ही करुँगा आप निश्चित रहें

विद्यालय का नया भवन मैं सत्संग के लिये अवश्य उपलब्ध करा दूँगा।" फरवरी के तीसरे सप्ताह में निर्माण ऐजेन्सी के इन्जीनियर से बात हुई सारी औपचारिकताये पूरी होने के बाद पुराने भवन से विद्यालय नये भवन में स्थानान्तरित हो गया। होली की छुट्टियो में विद्यालय की सभी वस्तुयें लाइब्रेरी आदि सभी नये भवन में आ गया और छुट्टी के बाद नियमित कक्षायें भी शुरु हो गईं।

यह सब मानों किसी अदृष्य शक्ति द्वारा समय से पूर्व ही संचालित हो गया। मैं चकित था तभी एक छोटी सी घटना ने मेरे विचारों को परिवर्तित कर दिया। सब कुछ घटने के बाद आज मैं सोचता हूँ कि यदि ऐसा कुछ जीवन में न घटा होता तो क्या मैं परमशक्ति की महिमा को समझ पाता? घटना यह थी कि चकिया आने से पहले मेरा परिवार गोरखपुर में ही था। मैंने अपने बेटे की शादी तय कर दी थी और शादी की तिथि 18 मई 1996 को निश्चित हुई थी। मुझे किसी ने बताया कि लड़की की शैक्षणिक योग्यता के विषय में उसके माता पिता ने मुझसे झूठ बोला था। केवल ग्रेजुयेट लड़की से शादी करने के लिए लड़का तैयार नहीं था। उसकी स्वयं शैक्षणिक योग्यता बहुत अधिक थी। लड़की वालों के इस झूठ से मैं बहुत व्यथित हो गया। सोचता आखिर इस तरह झूठ बोलने का क्या कारण है। मुझे अवसाद से घिरा देखकर मास्टर साहब ने मुझसे कारण पूछा। न जाने किस अज्ञात शक्ति से प्रेरित होकर मास्टर साहब को मैंने सारी बात बता दी। उन्होंने मुझे गुरु महाराज से पत्र द्वारा सलाह लेने का सुझाव दिया और जैसा उनका उत्तर आये वैसा करने को कहा। मास्टर साहब ने ही पत्र भी लिख दिया। उसी का नकल करके मैंने गुरु महाराज को भेज दिया। पत्र भेजते ही मेरी तो चिन्तायें मिट गईं। गुरु महाराज ने उत्तर में लिखा कि यदि लड़का कम योग्यता वाली लड़की से शादी करने को तैयार नहीं है तो आप इस प्रस्ताव को इन्कार कर दीजिये। उनके निर्देशानुसार मैंने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। इस प्रस्ताव को अस्वीकार करने के बाद भण्डारे में, जिसमें मैं पहली बार सम्मलित होने वाला था, जाने का मार्ग प्रशस्त हो गया। यह गुरु महाराज की अपूर्व कृपा मेरे उपर हुई अन्यथा 19 मई 1996 को मेरे बेटे की शादी होनी थी, मैं गांव चला जाता। न तो मुझे गुरु महाराज के दर्शन मिलते और न भण्डारे में सम्मलित हो पाता। उनकी कृपा से मैं भण्डारे में सम्मलित हुआ। उनके प्रवचनों को सुना, दर्शन से कृत-कृत तो हुआ ही, साथ ही एक नई दिशा मुझे मिली।

दिनांक 18 मई 1996 को पहली सत्र में भण्डारे का समापन था। मैं महाविद्यालय के अपने सहयोगी के साथ बैठा हाल में गुरु महाराज के प्रवचन सुन रहा था। अन्त में वह आयोजकों के प्रति अपना आभार प्रकट कर रहे थे। इसी बीच आचार्य प्रोफेसर दिनेश कुमार श्रीवास्तव की निगाह मुझ पर पड़ी और उन्होंने मुझे स्टेज पर बुला लिया। गुरु

महाराज के चरण स्पर्श के बाद मैं वहीं बैठ गया। जौहरी भाई साहब ने सभी सत्संगी भाईयों से मेरा परिचय कराया। गुरु महाराज मेरे प्रति भी आभार प्रकट कर रहे थे, आभार रस में भीगा लगा जैसे मैं किसी अन्य लोक में पहुँच गया। न जाने कितनी देर तक मैं खोया बैठा रहा पता नहीं। होश तब आया जब उन्होंने मुझे उस कक्ष में बुलाया जहाँ वह ठहरे थे। मुझे अपने साथ चाय पिलाया, विदा के समय अपने अंक में भर कर आशीर्वाद दिया। वह क्षण भी अजीब था। उनके अंक में समाते ही एक अजीब स्पन्दन से मेरा समूचा शरीर स्पन्दित हो गया; एक अद्भुत बेखयाली थी। वह देहली जाने के लिए कार में बैठ गये क्योंकि गाड़ी मुगलसराय से मिलती थी, मैं खोया खड़ा रहा।

चकिया के सत्संगी भइयों के साथ तो फिर मैं साल के तीनो भण्डारे में तो नहीं पर एक भण्डारे में जरुर जाता। इस बीच पदोन्नति के साथ मेरा स्थानान्तरण झाँसी हो गया। उसके बाद ऊच्च शिक्षा पदाधिकारी वाराणसी के पद पर हो गया, तत्पश्चात् आचार्य राजकीय महिला विद्यालय डी.एल.डब्लू वाराणसी के पद पर हो गया। प्राचार्य पद पर रहते हुये मेरे पास बहुत समय रहता था। अवकाश के क्षण को मैं धार्मिक पुस्तक पढ़ने में लगाता। एक पुस्तक में मैंने पढ़ा कि बिना गुरु दीक्षा लिये मनुष्य को मुक्ति नहीं मिलती, दीक्षा अवश्य लेनी चाहिए। दीक्षा लेने की इच्छा मेरे मन में प्रबल हो गई, चकिया के मास्टर साहब से अपनी इच्छा बताई। उन्होंने मुझसे कहा–"रामवृक्ष भाई और मैं गाजियाबाद जा रहे हैं इस विषय में गुरु महाराज से बात करेंगे।" यह मास्टर साहब की ही कृपा थी जो वसन्त भण्डारे में गुरु दीक्षा मुझे मिल गई। मैं अपने को बहुत भाग्यशाली समझता हूँ जो चकिया में रहते हुये मुझे सत्गुरु मिले जिन्होंने मुझ अकिंचन को गले से लगा लिया।

दीन बन्धु भगवान्

मोहन सहाय श्रीवास्तव
वाराणसी

"कुछ भी कर लें प्रभू को पाने के लिये दीनता तो अपनानी ही पड़ेगी" यह कथन हमारे पूज्य भाई साहब डा. करतार सिंह जी साहब का है, जो स्वयं दीनता के प्रतिरुप हैं। हम भाग्यशाली हैं जो नर रुप में हमें नारायण मिले हैं। खुले हाथों आध्यात्मिक प्रसादी बाँटने के साथ ईश्वरीय गुणों से भी साक्षात्कार करा देते हैं। कभी अलौकिक स्वप्नों के माध्यम से तो कभी व्यक्तिगत चेतावनी द्वारा। उनके सान्निध्य में रहते हुये कुछ खट्टे मीठे जो अनुभव मुझे हुये हैं उन्हे आपकी सेवा में चिन्तन मनन हेतु प्रस्तुत कर रहा हूँ।

डाँवाडोल मनः स्थिति का सामना, सत्गुरु की दया से सामान्य स्थिति में वापस आना

परम पूज्य सरदार जी भाई साहब को मैं सद्गुरु के रुप में ही सम्मान देता था। पूज्य गुरु महाराज डा. श्री कृष्ण भटनागर साहब की शरण में रहते हुये पूज्य सरदार जी भाई साहब (डा. करतार सिंह साहब) के साथ मेरी बड़ी अन्तरंगता हो गई थी। गुरु महाराज के विशाल के बाद पता नहीं क्यों मैं उनमें गुरु का रूप नहीं देख पाता था। यह दुराव काफी समय तक चलता रहा। निःसंकोच कोई अन्तरंग बात मैं उनसे नहीं कर पाता था। मन ही मन भाई साहब और गुरु महाराज की तुलना किया करता था। सोचा करता था जो प्यार और कृपा गुरु महाराज से मिलती थी वह भाई साहब से नहीं मिल सकती है। इस सोच से मुझे ऐसा महसूस होने लगा कि मेरी अध्यात्मिक उन्नति पर धीरे-धीरे गलत असर पड़ रहा है।

एक दिन आखिर साहस करके पूज्य भाई साहब से अपनी अन्तर व्यथा को कह ही दिया। बड़ी देर तक शान्त चित आप मुझे देखते रहे फिर पूछा-"आप यह बतायें कि क्या आपने कभी एक क्षण के लिये भी गुरु महाराज की जगह मुझे देखा, अगर नहीं देखा तो लाभ कैसे होगा? आप यह अच्छी तरह समझ लें कि सद्गुरु निवार्णोपरान्त अपने मनोनीत शिष्य में समाहित हो जाते हैं। शरीर गुरु नहीं होता

उसका गुण ही गुरु होता है। शरीर का भेद खत्म होते ही गुरु के गुण का बोध होने लगता है। ऐसी दृढ़ भावना होने पर ही आत्मिक रुप का बोध होता है और उन्नति होने लगती है। आप प्रयास करें, उन्नति अवश्य होगी।" उनसे बात करने के पश्चात् अन्धकार से परिपूर्ण समझ ने पलटा खाया, दुराव के बादल छट गये। आन्तरिक भावनाओं का सुखद अनुभव मुझे होने लगा। ऐसी होती है गुरु कृपा जो क्षण भर में ही कहाँ से कहाँ पहुँचा देती है। उनकी प्रेम प्रसादी से मैं माला माल होने लगा।

त्रिकालदर्शी गुरु महाराज की कृपा

सन् 1972-73 में पूज्य भाई साहब का इलाहाबाद आगमन हुआ। उस समय मैं इलाहाबाद में ही पोस्टेड था। पूज्य स्वर्गीय सत्य प्रकाश भाई साहब के निवास स्थान पर आप ठहरे थे। शाम को पूजा के बाद आपने खाने के लिए अपने पास बैठने को कहा। खाने के समय दीन-दुनियाँ की बातें होने लगीं। बाद में आपने मुझसे पूछा- ''मोहन जी, एक बात बतायें, अगर किसी सत्संगी की स्थिति डाँवाडोल हो जाय, उसके मन में सत्संग के प्रति कुछ अनुचित भावनायें उत्पन्न हो जायें तो क्या उसको सत्संग में बना रहना चाहिए?'' इशारा मेरी ही ओर था, जिसके विषय में लिखना मैंने उचित नहीं समझा। मैं अंदर ही अंदर डर गया। परन्तु तभी मन में यह बात उठी कि जब प्रभु मेरी एक-एक बात बिना कहे जानते हैं तो क्यों न उनसे सभी बातें कहकर मैं भयमुक्त हो जाऊं। मैंने सहमते हुए कहा-''निश्चय ही ऐसे व्यक्ति को सत्संग छोड़ देना चाहिये, नहीं छोड़ता तो निकाल देना चाहिए।'' कुछ देर तक आप शांत बैठे रहे फिर बोले-''उसे सुधरने के लिए एक मौका देना चाहिए। आप सच्चे मन से प्रयास करें, मैं आपके साथ हूँ। आपकी इच्छा शक्ति आपका साथ दे यही प्रार्थना करता हूँ।''

आपकी कृपा से उस दिन से मेरे विचारों में परिवर्तन होने लगा। अंतर में होने वाले अंतरद्वंद के स्थान पर अब अभूतपूर्व शांति ने स्थान ले लिया। कुछ दिनों पश्चात् जब आपसे फिर मुलाकात हुई तब आपने कहा-''गुरुदेव की कृपा से आप बहुत जल्द रास्ते पर आ गये। अगर इस बुराई की पुनरावृति कुछ दिनों तक और होती रहती तो संस्कार के रूप में यह ऐसा जड़ पकड़ती कि आपका यह पूरा जन्म व्यर्थ हो जाता। यह हमेशा याद रखिये कि गलत आदतों की बार-बार पुनरावृत्ति ही संस्कार बन कर जन्म-जन्मातंर तक पीड़ा देती है।'' मैं भय से कांपने लगा। उस दिन से आपके आदेश का पालन दृढ़ता से करने का प्रयास करने लगा। गुरु की ऐसी ही महती कृपा से मनुष्य में सहज ही परिवर्तन होने लगता है, जीवन धारा ही बदल जाती है। जीवन में हुयी इस घटना से मेरा दृढ़ विश्वास हो गया कि शरीरधारी गुरु साधारण मानव नहीं होते हैं, उनमें ईश्वर का निवास होता है तभी तो वह अपने शिष्यों की रक्षा करते हैं।

अहंकार हमेशा गलत रास्ते पर ले जाता है

झूठ बोलने वालों पर मुझे बहुत गुस्सा आता था। क्रोध आने पर मन कई-कई दिनों तक अशान्त रहता है। पूजा में भी ध्यान नहीं लगता। लाख कोशिश करने पर भी क्रोध आ ही जाता है। आपने कहा ''दुनियां ईश्वर की है। हम सब उसकी ही संतान हैं। सब में ही वह व्याप्त है। आप अपना विचार बदलने की चेष्टा करें। हर व्यक्ति अपने अच्छे-बुरे संस्कारों के कारणवश ही व्यवहार करता है। आपकी भी बहुत सी बातें दूसरों को नहीं अच्छी लगती होंगी। उन्हें भी आप पर गुस्सा आता होगा। सत्य-असत्य की व्याख्या केवल निःस्वार्थ भाव मन ही कर सकता है। सबमें प्रभु को देखें तो आपका मन शांत होगा, गुस्सा आना बंद हो जायेगा।''

मेरा प्रयास अब तक जारी है। शत प्रतिशत तो कामयाबी नहीं मिली लेकिन कमी अवश्य हो रही है। कभी अगर आवेग आया भी तो तुरंत शांत हो जाता है।

बच्चों पर विशेष कृपा

छोटे बच्चों पर आपकी बड़ी कृपा रहती है। मेरा एक ही बेटा है। कुछ ऐसा दुर्भाग्य है कि बचपन से वह नेफ्रॉटिक सिंड्रोम (गुर्दे की खराबी) से परेशान रहने लगा। जल्द ठीक न होने वाली इस बीमारी के कारण मैं बहुत परेशान रहने लगा। इलाज बी.एच.यू. के मेडिकल कॉलेज का चल रहा था, थोड़ा-बहुत सुधार तो था परन्तु रोग ठीक नहीं हो रहा था। उसी समय वसंत का भंडारा बक्सर में होना तय हुआ। एक सत्संगी भाई का हार्ट अटैक से निधन हो गया। डॉक्टर लोग उनको देखने में लगे हुए थे। मैं आपके पास ही खड़ा अपने बेटे के विषय में सोच रहा था कि एकाएक आपने मुझे अलग बुलाया और कहा-''मोहन जी! जीवन-मृत्यु पर किसी का बस नहीं, सभी मौजूद हैं पर कोई कुछ कर नहीं सका, हम तो केवल प्रभु से प्रार्थना ही कर सकते हैं। आप अपने बच्चे के लिये चिंता न करें, ईश्वर से दया की भीख मांगते रहें। मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि मैं जब तक हो सके गुरु महाराज से आपके बच्चे के बारे में प्रार्थना करता रहूंगा, आगे उसकी मर्जी।'' बच्चा धीरे-धीरे ठीक होने लगा। वह अविस्मरणीय घटना जिससे गुरु के प्रति विश्वास और भी अटूट हो गया।

बी.एच.यू. के डॉक्टरों ने मेरे बेटे को किडनी की बायोप्सी के लिए देहली ऑल इंडिया इंस्टीच्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज़ ले जाने के लिए कहा। वहां जाकर दिखाने में अनेक दिक्कतें थीं। छह मास से पहले नंबर मिलना ही कठिन था। मेरे एक परिचित डॉक्टर के संबंधी एम्स में नेफ्रोलॉजी विभाग में कार्यरत थे। उनसे बात होने पर उन्होंने देहली बुलाया और एक माह में बायोप्सी करा देने का वायदा किया। रजिस्ट्रेशन करा कर उन्होंने कार्ड अपने पास रख लिया। एक माह की छुट्टी लेकर बच्चे के साथ कहीं

रहने की व्यवस्था करने को कहा। व्यवस्था आदि करके मैं बनारस वापस आ गया। फोन द्वारा पूज्य सरदार जी भाई साहब को बता कर मैं दिल्ली पहुँचा। ट्रेन लेट होने के कारण मैं सपरिवार सीधे एम्स अस्पताल चला गया। डॉक्टर से मिलने पर मैं एकदम निराश हो गया। उन्होंने मुझसे कहा कि मैं आपकी कोई मदद नहीं कर सकता। मेरे बॉस के साथ मेरी कुछ अनबन हो गई है। मैं निराश हो गया और परम पूज्य कृष्ण मुरारी भाई साहब के निवास स्थान पर गया। उनसे सारी व्यथा कह दी। उन्होंने मुझसे पूछा–''क्या आप सरदार जी भाई साहब से मिल कर आ रहे हैं? वह सुबह से आपका इंतजार कर रहे हैं।'' मैंने उन्हें बता दिया कि ट्रेन लेट होने के कारण मैं सीधा अस्पताल चला गया। समझ में नहीं आ रहा है कि क्या करूं। आपने तुरंत रात को ही भाई साहब से मिलने को कहा। मैं रात को नौ बजे के करीब भाई साहब के पास पहुँच गया। आप उस समय देहली में पहाड़गंज में रहते थे। जब मैं पहुँचा तब आप डॉ. शक्ति भाई साहब के साथ बात कर रहे थे। मुझे देखते ही भाई साहब ने पूछा–''आपको इतनी देर कैसे हुई?'' एकदम से बड़े रुंधे गले से मैंने कहा–''प्रभु! मेरा छुट्टी लेकर यहां आना बेकार हो गया।'' कुछ देर चुपचाप मुझे देखते रहे फिर बोले–''मोहन जी! आप इतने पुराने सत्संगी होकर भी गुरु महाराज के सिद्धांतों पर नहीं चल रहे हैं। गुरुदेव किसी भी कार्य के लिये किसी की पैरवी के खिलाफ थे। स्वयं किसी भी कार्य के लिए लाईन में लग कर ईश्वर कृपा का इंतजार करते थे। आप पुरानी पर्ची भूल जाएं, कल लाइन में लग कर बच्चे को दिखायें, विश्वास रखें गुरु महाराज अवश्य मदद करेंगे। जैसा भी हो कल मुझे सूचित करियेगा।''

दूसरे दिन सुबह मैं सपरिवार एम्स गया। नई पर्ची बनवाकर लाईन में लग गया। गुरु महाराज और भाई साहब का ध्यान करने लगा। काफी देर होने पर मैंने चपरासी से पूछा– ''क्या बतायेंगे कि मेरे बच्चे को क्यों नहीं बुलाया गया?'' चपरासी ने देख कर बताया कि किसी भी सहायक डॉक्टर के पास अब कोई पर्ची नहीं बची है। कुछ देर इंतजार करें, जब कोई डॉक्टर बाहर निकले तो पूछिए। मैं परेशान हो रहा था तभी एक दूसरा चपरासी अन्दर से बाहर निकला और मेरे बच्चे का नाम पुकारा। बच्चे के साथ मैं उसके पीछे अंदर गया। कमरे में बड़े डॉक्टर, एक लेडी डॉक्टर व डॉक्टर की वेष–भूषा में एक सरदारजी बैठे थे। उनको देखकर मैं चकित हो गया। डॉक्टर के वेष में पूज्य सरदारजी भाई साहब बैठे थे। बड़े ने मुझे और बेटे को बिठाया और पूछा–''क्या आप बनारस से आये हैं।'' मेरे हां कहने पर आपने पूछा–''बच्चा कब से बीमार है?'' मैंने बताया ''तीन वर्ष से।'' बनारस के डॉक्टर की पर्ची व सारा रेकार्ड देखने के बाद उन्होंने पूछा–''क्या अभी तक बच्चे की किडनी की बायोप्सी नहीं हुई है। मैंने कहा, ''नहीं, इसीलिये तो बनारस के डॉक्टर ने यहां भेजा है।'' सामने बैठे

डॉक्टर से उन्होंने कहा, ''बच्चे की बायोप्सी अभी होनी चाहिये तभी सही इलाज हो सकता है।'' दोनों डॉक्टर थोड़ी देर चुप बैठे रहे, फिर बोले–''सर अभी तो कोई बेड खाली नहीं है।'' बड़े डॉक्टर ने आदेश दिया–''चौबीस घंटे के अंदर कोई बेड शिफ्ट करके बायोप्सी करा दें। इनके सारे कागज पूरे करा कर आज ही फीस जमा कर कागज इनको दे दें।'' फिर मुझसे कहा–''दवा वगैरह आप आज ही खरीद लें। कल सुबह आठ बजे ऑपेरशन थियेटर में इन डॉक्टर से मिलिये।'' मुझे लगा डॉक्टर सरदार जी मुझे देखकर मुस्करा रहे हैं।

दूसरे दिन सुबह दोनों डॉक्टर ने मेरे बेटे की बायोप्सी पूरी की। मैंने सारी बातें प्रभु सरदार जी भाई साहब को बता दिया। आपने कहा, ''गुरु महाराज की कृपा आपके बेटे पर बरस रही है अब शीघ्र स्वस्थ हो जायेगा।'' मैंने मन में सोचा कितने दीन हैं प्रभु, सारा श्रेय अपने गुरु को दे रहे हैं। उस दिन मैंने अच्छी तरह समझ लिया कि पूज्य सरदारजी भाई साहब पूर्ण रूप से अपने गुरु डा. श्री कृष्ण लाल भटनागर साहब के ही रूप हैं। जब-जब यह आश्चर्यजनक घटना मुझे याद आती है मेरी आंखें भर आती हैं।

एक बार आप बनारस पधारे थे। किसी सरकारी काम से मुझे एक दिन के लिये बाहर जाना पड़ा। सुबह उनके पास न पहुँच पाने के कारण मन बड़ा व्याकुल था। बस में बैठा मैं यही सोच रहा था कि अचानक बस खराब हो जाने के कारण रुक गई। बस से उतर कर मैं उसके आगे खड़ा होकर दूसरे बस की प्रतीक्षा कर रहा था। एकाएक मन में ख्याल आया कि अगर दूसरी बस इसको धक्का मार दे तो मैं घायल हो जाऊंगा। इस ख्याल के आते ही मैं सामने से हट कर बगल में खड़ा हो गया। अभी बस के सामने से हटे हुए मुझे एक मिनट भी नहीं हुआ था कि सामने से एक मोटर साइकिल स्लिप करती हुई बस से टकरा गई। मोटर साइकिल वाले को काफी चोट आई। यह देख कर मैं कांप उठा। उसी जगह तो मैं खड़ा था जहां मोटर साइकिल टकराई थी। मेरे प्रभु ने कैसे मेरी रक्षा की, यह सोचकर मैं रो पड़ा। आश्चर्य की बात तो यह है कि बस तुरंत ठीक हो गई। मैं बनारस पहुँच गया। सत्संग परमा चाचा के घर हो रहा था। मेरे प्रभु ने मुझपर क्या कृपा की मैं मन ही मन उनका नमन कर रहा था।

यह दूसरी घटना भी बनारस की ही है। मैं पत्नी के साथ रिक्शे पर बैठ कर सत्संग में जा रहा था। सत्संग परमा चाचा के घर पर हो रहा था। कुछ घरेलू बातों को लेकर रास्ते में पत्नी से कहा-सुनी हो गई। मन अशान्त हो गया। वहाँ पहुंच कर गुरु महाराज का जैसे ही चरण स्पर्श किया आपने फरमाया-''अगर नोक-झोंक में दिल साफ हो तो आपसी प्रेम को बढ़ाने में सहायक होता है। दोनों को एक दूसरे की भावनाओं की कद्र करना चाहिये। भविष्य में आपस का टकराव छोड़कर शांत रहने की कोशिश करना चाहिये। जीवन जीने की कला है-आपसी विश्वास। आपसी विश्वास बढ़ायें ईश्वर प्रेम का अनुभव होगा।'' हम दोनों को बड़ी शान्ति मिली। तब से प्रयत्न यही रहा कि हम अपनी इच्छा को एक दूसरे पर न थोपें।

वर्ष 1972 में मैं सरकारी नौकरी में था और अपने संघ का एक पदाधिकारी था। मैं और मेरे एक मित्र उमाकांत पांडे दोनों गिरफ्तार कर लिये गये थे। हम सभी लगभग तीन माह जेल में रहे। अंत में बनारस जेल में ट्रांसफर कर दिये गये। होली भी जेल में हुई। कुछ समझौता होने पर अंत में छोड़ दिया गया। मेरा परिवार इलाहाबाद में था और पांडे जी का परिवार अकबरपुर में रहता था। रिहा होने के बाद हम दोनों जल्द से जल्द परिवार वालों से मिलना चाहते थे। स्टेशन पर पता चला पूज्य भाई साहब बनारस पधारे हैं। एक नये सत्संगी भाई श्री अवध बिहारी लालजी के घर ठहरे हुये हैं। मेरा मन नहीं माना। इलाहाबाद न जाकर मैं भाई साहब से मिलने गया। मेरे साथ पांडे जी भी गये। हम दोनों को गौर से देखने के पश्चात् आपने पांडे जी के विषय में पूछा। मैंने बताया कि पांडे जी मेरे अभिन्न मित्र हैं। हम दोनों साथ ही जेल में थे। आप यहां आये हैं सुनकर मैं यहां आया तो आप भी मेरे साथ आ गये। सुबह का सत्संग खत्म हो चुका था। नाश्ता वगैरह करने के पश्चात् मिलने के लिये आपने आदेश दिया।

चाय-नाश्ते के बाद अवध बिहारी चाचा ने हम दोनों को बताया कि पूज्य भाई साहब हमें बुला रहे हैं। कमरे में पहुँचने पर आप पास बुला कर टेबल पर रखा एक गजरा मुझे पहनाने लगे। मैंने कहा, ''आप यह क्या कर रहे हैं, गजरा तो मुझे आपको पहनाना चाहिये।'' मुस्कुराते हुये बोले- "Everything is fair in love and war." जबर्दस्ती मेरे गले में माला पहना दिया। पुनः आपने फरमाया-''मोहन जी! मैं आप दोनों की दृढ़ इच्छा शक्ति का सम्मान करता हूँ। मनुष्य की इच्छा शक्ति ही सर्वोपरि होती है, जिससे जीवन के हर क्षेत्र में कामयाबी मिलती है। मुझे आशा है आपकी ऐसी ही इच्छा शक्ति प्रभु की भक्ति के तरफ भी अग्रसर होगी। अब आप लोग अपने-अपने घर जायें। परिवार के लोग बेसबरी से आप लोगों का इंतजार कर रहे हैं।'' जेल की सारी दुःखद अनुभूतियां गायब हो गयीं। एक नवीन ऊर्जा से भरे हुये हम दोनों अपने-अपने घर को चल दिये।

एक बार की घटना है कि सिकन्दराबाद भंडारे से लौटते समय जिस ट्रेन में मेरा आरक्षण था वह छूट गई। बिना रिजर्वेशन के दूसरी ट्रेन में जनरल बोगी में जाने का निश्चय हम लोगों ने किया। ट्रेन आने पर भाई के साथ एक बोगी में घुसकर नीचे और ऊपर सामान रखने वाले बर्थ को हमने घेर लिया, भाई को बिठाकर मैं प्लेटफार्म से परिवार को लेने चला गया। लौट कर आया तो देखा भाई से एक व्यक्ति का झगड़ा हो रहा है। उसने ऊपर वाले बर्थ से हमारा सामान हटाकर अपना सामान रख लिया था। मैंने उससे पूछा–''भाई तुमने मेरा सामान हटाकर अपना सामान क्यों रख लिया?, गाड़ी में तो बहुत जगह है।'' वह व्यक्ति हम लोगों पर और भी उग्र हो उठा। नौबत हाथापाई तक आ गई। किसी ने पुलिस को खबर कर दिया। मामला सुलझने के बजाय और भी उलझ गया। मैंने पुलिस से कहा, ''आप लोग परिवार वालों को ही परेशान करते हैं। इनकी भी तो गलती देखिये।'' पुलिस ने थाने चलने को कहा। मैं सपरिवार जाने के लिए तैयार हो गया। इतने में जी.आर.पी. के दारोगाजी आ गये। सारी बातें सुनकर दरोगा जी बोले ''आप लोग पढ़े-लिखे होकर भी कानून अपने हाथ में लेते हैं। आपको शिकायत रेलवे स्टाफ से करना चाहिए।'' उन्होंने हम दोनों को माफी मांगने को कहा। अंततः हारकर हम दोनों ने माफी मांगी। दारोगाजी ने उस व्यक्ति को दूसरे डिब्बे में भेज दिया। इस घटना की इतिश्री तो यहीं हो गई। कुछ दिनों बाद जब मैं भाई साहब से मिला तो आपने प्रवचन में कहा ''भण्डारे में आने के बाद भी लोगों पर सत्संग का कोई असर नहीं होता। लोग ट्रेन में जरा-जरा सी बात पर झगड़ा एवं मारपीट कर लेते हैं। मैं उम्मीद करता हूं कि भविष्य में लोग इस तरह की हरकत करके सत्संग को बदनाम नहीं करेंगे।'' सुनकर मैं सन्न रह गया। मन ही मन दुखी भी बहुत हुआ। प्रतिज्ञा की कि भविष्य में ऐसी घटना नहीं होने दूंगा। उस दिन अनुभव किया कि गुरुदेव की ही कृपा थी जो उस दिन ट्रेन में कानूनी परेशानियों में फंसने से बच गया। ऐसे हैं मेरे कृपानिधान!

सरकारी कार्य से प्रायः मुझे दिल्ली मंत्रालय जाना पड़ता था। मेरा प्रयास, वहीं पहाड़गंज में पूज्य भाईसाहब के घर के आसपास ही ठहरने का होता था। एक बार मुझे आसपास के किसी होटल में ठहरने की जगह नहीं मिली। रात हो चुकी थी, दर्शन हो गये। आपने मुझसे पूछा–''आप कहां ठहरे हैं?'' मैंने बताया ''अभी तो कहीं नहीं, अब देखता हूँ कि कहां जगह मिलती है।'' कुछ देर चुप रहने के बाद आप बोले–''इस पते पर चले जाइये, वो मेरे परिचित का होटल है, अवश्य जगह मिलेगी। मेरा नाम बता दीजिएगा, सस्ते दामों पर कमरा दे देंगे।'' भाई साहब के घर से नीचे

उतरने पर मैंने सोचा कि वो होटल तो दूर है, सबेरे सत्संग में आने के लिए परेशानी होगी। यह सोचते ही मन ने अपना रंग जमा दिया। वहां न जाकर एक मंहगे होटल में रुक गया। दूसरे दिन सत्संग के बाद आपने पूछा–''मोहन बाबू, मेरे बताये होटल में कोई दिक्कत तो नहीं है आपको?'' मेरे मन में क्या था नहीं जानता पर झूठ बोला–''खोजता रहा पर वो जगह न मिलने से पास के होटल में ठहर गया।'' आप मुझे देखते रहे और बोले, ''कोई बात नहीं आपकी मर्जी।'' सरकारी कार्य समाप्त होने पर वापस लौटने के समय जब अन्तिम दिन उनसे मिलने गया तो आपने मुझसे कहा–''इतनी छोटी बात के लिए झूठ बोलना ठीक नहीं है। आप कह सकते थे कि दूर जाने की मेरी इच्छा नहीं है, पास ही के एक होटल में कमरा ले लिया है।'' मैं रोने लगा और क्षमा मांगी। आपने कहा–''छोटी-छोटी बातों से भी गलत आदत पड़ जाती है; और उन्हीं से संस्कार बन जाते हैं। बाद में वही विकराल रूप धारण कर लेते हैं। वही मनुष्य को सत् से रज और रज से तम पर ला पटकते हैं। उससे निकलना बड़ा कठिन हो जाता है। अतः छोटी-छोटी बातों पर ध्यान दें। मेरी शुभेच्छा सदैव आपके साथ है। आशा है इस मनोवृत्ति से निकलकर आप अवश्य निखरेंगे।'' उनकी इन बातों पर मैं नित्य मनन करता हूं। फिसलता हूँ, फिर प्रयास करता हूँ कि ऐसी गलती न हो जो उन्हें दुख दे।

सरकारी काम से दिल्ली में मेरा बराबर आना होता था। पहाड़गंज में आपके घर के आसपास ही मैं ठहरता था जिससे सुबह-शाम सत्संग का लाभ भी मुझे मिल जाता था। एक बार पूजा के बाद मैंने आपसे कहा कि प्रभु की बड़ी कृपा है मेरे ऊपर जो जल्दी-जल्दी सरकारी काम से मेरा आना होता है। आपने मुस्कुराते हुए कहा–''मोहन जी यह आना कोई आना नहीं है। आप सरकारी काम की भावना से आते हैं। गुरु दर्शन या सत्संग की भावना से नहीं। प्रयत्न करें कि सत्संग की भावना से ही केवल आयें तब फायदा होगा।'' इशारा समझकर मैंने निश्चय किया कि आगे आपके आदेश का पालन करूंगा। बाद में मैंने अनुभव किया कि सरकारी काम से आने पर दर्शन और सत्संग तो मिलता था, किन्तु मन सदैव समय के बन्धन से बंधा रहता था। काम सदैव समय से करने की चिन्ता बनी रहती थी। सहज होकर प्रभु प्रेम की प्रसादी ग्रहण नहीं कर पाता था।

मेरी ममेरी साली शिरडी के साईंबाबा के शिष्य मेहर बाबा से जुड़ी हुई थीं। वह उन दोनों की समाधि पर जाती थीं, उनके आदर्शों के अनुसार पूजा अर्चना करती थीं। शारीरिक और मानसिक रूप से पता नहीं क्यों बहुत व्याकुल रहती थीं। मेहर बाबा की कृपा से उन्हें एक दिन यह निर्देश मिला कि तुम दिल्ली में सरदार जी के पास जाओ। वह वक्त के पूरे संत हैं। रात को स्वप्न में उसे सरदार जी भाई साहब के दर्शन बराबर सोते-जागते होने लगे। वह मुझसे बराबर सरदार जी भाई साइब से मिलवाने के लिए कहने लगी। मैंने पूज्य भाई साहब से बताया। आपने कहा-''जब आप दुबारा दिल्ली आवें तो अपनी साली को बुला लें।'' दुबारा जब मैं दिल्ली सरकारी काम से आया तो साली को भी दिल्ली पहुंचने के लिए कह दिया।

प्रभु के नि:स्वार्थ प्रेम की अनुभूति

यह संयोग की बात है कि अचानक मेरा सरकारी काम दो दिन के लिए टल गया। मैंने साली को सूचना दी लेकिन रिजर्वेशन के अुनसार दिल्ली के लिए प्रस्थान कर चुके थे। दिल्ली पहुंचकर वह लोग एक होटल में ठहर गये और भाई साहब से मिलने उनके निवास स्थान पहुँच गये और अपना परिचय दिया। जहाँ वह लोग रुके थे वहीं रहने के लिए कहकर दोनों समय पूजा में आने के लिए कहा। मेरी साली दोनों समय पूजा में जाती रही। पूज्य भाई साहब उन लोगों से कोई बात नहीं करते। वह लोग बड़े असमंजस में थे; साली परेशान थी यह सोचकर कि सबसे तो बात करते हैं पर हम लोगों से कुछ बोलते नहीं। वह घबराने लगी और मन ही मन दुर्गाजी से प्रार्थना करने लगी। उसे ऐसा आभास हुआ कि मां कह रही हैं कि घबरा मत संतों की मौज ऐसी ही होती है। अपने जीजा को आने दे। दो दिन बाद मैं भाई साहब के पास पहुँचा। प्रातःकाल की पूजा चल रही थी। मैं चुपचाप जाकर बैठ गया। पूजा समाप्त होने के बाद मुझे देखते ही भाई साहब ने कहा-''अरे मोहन जी! आप आ गये। आपकी सागर वाली साली दो दिन से आई हुई हैं। देखिए पीछे बैठी हैं। पीछे मुड़कर देखा कि वह भाव-विभोर होकर रो रही थी। प्रसाद वितरण के बाद आपने मुझसे पूछा-''मोहन जी मेरे लिए क्या आदेश है?'' मैंने हाथ जोड़कर विनय किया, ''इस बेटी पर आप कृपा करें।'' मेरे इशारे पर साली उठकर आगे आने लगी। अपने स्थान से भाई साहब उठते हुए एकाएक बोले-''मोहन जी! यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि इस बेटी की आत्मिक स्थिति बहुत ऊंची है। मैं स्वयं इसके चरण स्पर्श करना चाहता हूं।'' सचमुच वह उसके पैरों की ओर बढ़ने लगे। मेरी साली रोने लगी और जमीन पर लेट कर भाई साहब का पैर पकड़कर बोली-''आप मुझे पाप का भागी क्यों बना रहे हैं?'' कुछ देर यही स्थिति रही सब लोग स्तब्ध थे। आपने पूछा-''क्या चाहती हैं?'' साली ने प्रार्थना

किया–''मुझे अपनी शरण में ले लीजिए।'' आपने कहा–''ठीक है। कल प्रातः नहा–धोकर फूल व प्रसाद लेकर आना। आपके लिए यह एक औपचारिकता ही है।''

कुछ देर बाद मुझे अंदर चाय आदि लाने के लिए भेज दिया। पुनः साली से बोले–''देखो मोहन जी के कहने में मत आना। मंहगे प्रसाद मत लेना केवल बताशा लेकर आना।'' लौटते समय मैंने बार–बार प्रसाद लेने के लिए कहा किन्तु साली टाल गई। बोली जहां रुकी हूँ वहीं किसी दुकान से ले लूंगी। मैं चुपचाप अपने होटल चला गया। दूसरे दिन सुबह जब दीक्षा हुई तब प्रसाद में बताशा देखकर मैं हैरान हो गया। मैंने साली से कहा–''दीक्षा लेने में भी यह कंजूसी?'' उत्तर मिला ''गुरुदेव का यही आदेश था।'' बाद में उसने सारी बातें मुझे बतायीं। अपनी दोष दृष्टि पर मुझे बहुत दुख हुआ। मुझे बार–बार याद आने लगी–''साधो सहज समाधि भली।'' मेरे प्रभु क्या लीला है, छोटी–छोटी बातों द्वारा सहज ही बड़ी बात समझा देते हैं। उनकी कृपा से मेरी साली की मानसिक व शारीरिक परेशानियां दूर हो गईं। वह निर्विध्न अपने पूजा–पाठ में लग गई।

एक बहुमूल्य उपदेश

मेरा एकमात्र पुत्र बचपन से ही जटिल रोग से परेशान था। सदैव जीवन–मृत्यु से जूझता रहता है। बराबर बीमार रहने के कारण उसका शारीरिक व मानसिक विकास ढंग से नहीं हो पाया। केवल किसी तरह वह स्नातक कर पाया। नौकरी तो उसे मिल सकती है लेकिन इस डर से कि उसे जब–तब बाहर रहना पड़ेगा जो उसके स्वास्थ के लिए ठीक नहीं है यही सोचकर उसे नौकरी नहीं करने दिया। कम्प्यूटर कोचिंग का एक संस्थान खुलवा दिया। गुरु महाराज की विशेष कृपा तो उस पर सदा ही रहती है, शुरू में तो उसका कार्य बहुत अच्छा चला। वह फिर बीमार हो गया। प्रतिष्ठान बन्द हो गया क्योंकि स्वस्थ्य होने में उसको सालों लग गया। दुबारा प्रतिष्ठान को चलाने के लिए काफी धन की बर्बादी हुई। प्रतिष्ठान में चोरी हो गई। मैं सेवानिवृत्त हो गया। आर्थिक रूप से सक्षम न होते हुए भी थोड़ा–थोड़ा करके प्रतिष्ठान को पुनः खड़ा किया। आय हेतु छोटे–मोटे कम्प्यूटर से काम भी शुरू कर किया। हाय रे दुर्भाग्य! वह फिर बीमार हो गया। सालों लगा उसे स्वस्थ होने में। इसी उतार–चढ़ाव में जीवन रेंगने लगा। पिता होने के नाते मुझे बच्चे की चिन्ता बराबर बनी रहती। उसका ऐसा स्वास्थ्य कि अपना काम भी वह सुचारू रूप से नहीं कर पाता था। मैं बराबर इसी चिन्ता में रहता कि बाल–बच्चे वाला है। मेरे न रहने पर क्या होगा। मायूसी इस तरह मुझ पर छा गई कि पूजा से भी मेरा मन उचट गया। एक दिन घबरा कर मैंने प्रभु पूज्य सरदार जी भाई साहब से निवेदन किया। मेरी व्यथा कथा बड़े ध्यान से सुनने के

बाद बोले–''मोहन जी! आप तो बहुत पुराने सत्संगी हैं। गुरु महाराज (डा. श्री कृष्ण भटनागर) के संरक्षण में पले–बढ़े हैं और इस तरह निराश हो रहे हैं?''

पुनः मुझे समझाते हुए बोले–''हर व्यक्ति अपने कर्मों के कारण ही संस्कारों से घिरता है। उन्हीं संस्कारों को चाहे वह अच्छा हो या बुरा भोगने के लिए जन्म लेता है। ईश्वर इतना दयालु है कि वह सभी संस्कारों को क्रमबद्ध तरीके से भोग कराकर जीव को निर्मल कर देता है। जो प्रभु के भक्त होते हैं उन पर विशेष कृपा करते हुए अपनी शक्ति से उनके संस्कारों को जल्दी–जल्दी भोग कराकर निवृत्ती दिला देते हैं। आगे के लिए जीवन की आत्मोन्नति का रास्ता सुगम हो जाये। गुरु महाराज आप दोनों पिता–पुत्र के संस्कारों को भोगने में सहायक हैं। पूर्ण समर्पण के साथ अपने कर्तव्यों का निःस्वार्थ भाव से पालन करें। शान्ति मिलेगी और हर काम में उनकी कृपा अनुभव करेंगे। प्रभु कृपा से आपको अच्छी–खासी पेंशन मिलती है। थोड़ा मितव्ययी हो–होकर जीवन के हर काम को करें। इससे परेशानियां कम हो जायेंगी। याद रखें प्रभु की लीला का कोई पार नहीं हैं। आप जब तक जीवित हैं गाड़ी चलती रहेगी। परिवार के किस व्यक्ति के लिए आप जीवित हैं आपको नहीं पता कि कब किसकी किस्मत पलटेगी, नहीं पता। आपका बच्चा अभी तक क्यों जीवित है, आपको नहीं पता। हर परिवार के हर सदस्य का संस्कार व उसकी तकदीर परिवार के हर सदस्य को प्रभावित करती है। परिवार के हर सदस्य अगर सबके दुख–सुख को बांटे तो वह परिवार हर तरह से सुखी रहता है। प्रभु अगर एक सहारा लेता है तो दूसरा खड़ा कर देता है। इतना समझ लें मनुष्य की चाहत ही उसके दुखों की जननी है। प्रभु ने जो दिया है, उसका शुक्रिया अदा कीजिए। उसकी कृपा और प्रेम पर निगाह रखिए। जीवन दुख–सुख से अलग महसूस होगा। सारा जीवन ही प्रभुमय हो जायेगा।'' इसके बाद तो मेरी मनःस्थिति एकदम बदल गयी।

परम पूज्य भाई साहब की कृपा से अब सभी अच्छी–बुरी परिस्थितियों से निबटने के लिए भगवान का शुक्रिया अदा करने की आदत डाल रहा हूं। अनुभव कर रहा हूँ कि इससे अच्छा और सुखमय, आनन्दमय जीवन जीने का और कोई दूसरा रास्ता नहीं है। उनकी अपार कृपा का वर्णन कहां तक करूं? जीवन ही उनकी कृपा है।

तेरे नाम का सुमिरन करके, मेरे मन में सुख भर आया।
तेरी कृपा को मैंने पाया, तेरी दया को मैंने पाया।

मृदुला श्रीवास्तव मित्रा (मिन्टू)
नागपुर

ईश्वर को तो मैंने देखा नहीं है। मगर हाँ, उस परम पिता परमेश्वर के प्रतिरूप हैं मेरे श्रद्धेय सरदार जी अंकल जिनके सुमिरन मात्र से ही मन अथाह आनन्द से भर जाता है। बचपन से उनकी छत्रछाया में रहने का सुअवसर जो मुझे मिला उससे जीवन की रंगत ही बदल गई है। मेरे पूर्व जन्मों के शुभकर्मों का ही फल है कि मुझे इस जन्म में सरदार जी अंकल जैसे परम स्नेही, अति मृदुभाषी एवं ईश्वर स्वरूप परम संत का आशीर्वाद मिला। उनका इतना कहना–''बेटी चिन्ता मत करो गुरु महाराज कृपा करेंगे।'' सारे कष्टों को छूमंतर कर देता है। ऐसे ब्रह्म ज्ञानी महापुरुष का सान्निध्य बिरले को ही नसीब होता है।

बात उन दिनों की है जब मैं इलाहाबाद में बी.ए. में पढ़ रही थी। मेरा फाइनल वर्ष था। लगभग एक माह से मैं रक्त पेचिश से परेशान थी। दवाई बराबर चल रही थी परन्तु तबियत सुधरने का नाम ही नहीं ले रही थी। संयोगवश उन दिनों विश्वविद्यालय में छुट्टियां चल रही थीं। कहते हैं कि 'हरि इच्छा बलवान है।' बस उसी का कमाल था, अचानक समाचार मिला कि अंकल तीन दिनों के लिए सत्य प्रकाश अंकल के घर सत्संग के लिए आये हुए हैं। बस फिर क्या था मन उन तीन दिनों के वैभव को आत्मसात करने के लिए, सत्संग का असीम आनंद उठाने के लिए हर्षित हो उठा। अंकल के साथ कई सत्संगी भी आये थे। कई लोग हमारे घर भी ठहरे थे। हमारा घर सत्य प्रकाश अंकल के घर से दूर नहीं था। वाह! क्या प्रेममय वातावरण था। ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे पूरे इलाहाबाद में प्रेम की गंगा बह रही हो।

सत्संग प्रारम्भ हुआ, परन्तु अफसोस अस्वस्थ होने के कारण मैं सत्संग में न जा सकी। मेरी मां, बहन, भाई व अन्य सत्संगी, सत्संग में गये परन्तु मैं घर पर ही रही। मेरे पापा उन दिनों नागपुर में कार्यरत थे। प्रातःकाल का सत्संग खत्म होने पर मेरी मां मुझे देखने और प्रसाद देने आयीं। मैंने प्रसाद खा लिया और कुछ सामान्य खाने के बाद दवा लेकर मैं सो गई। उसी नींद में मुझे ऐसा एहसास हुआ कि सरदार

जी अंकल मेरे पास आये हैं, अपनी गोदी में मेरा सर रखकर हाथ सिर पर फेर रहे हैं और कह रहे हैं–''बेटी, सब ठीक हो जायेगा।'' चमत्कार देखिए, कहाँ तो मुझे थोड़े-थोड़े अंतराल पर शौचालय जाना पड़ रहा था, चलना भी कठिन था। लेकिन दूसरे दिन मैं पैदल चलकर सत्य प्रकाश अंकल के घर सरदार जी अंकल के दर्शन हेतु पहुँच गई। वास्तव में ऐसे परम संत का सान्निध्य बड़े सौभाग्य से मिलता है।

अंकल के ही आशीर्वाद व अनुकम्पा से कि आज मेरे बेटे ने अमेरिका में उच्च शिक्षा प्राप्त किया है। वह एक हृष्ट-पुष्ट एवं अति शालीन व्यक्ति है। बात 1987 की है। मेरा बेटा उस समय 4 साल का था। बुखार होने पर उसे कन्वल्शन (convulsion) होता था। मौसम बदलने पर वह बीमार पड़ता ही था। मेरे पति की पदोन्नति होकर पोस्टिंग गौहाटी में हो गई। वहां उचित सुविधा न होने के कारण मैं नागपुर में ही थी। मेरा संयुक्त परिवार था। वैसे तो चार-पांच दिनों में बुखार ठीक हो जाता था, पर इस बार ठीक होने का नाम ही नहीं ले रहा था। पंद्रह-बीस दिन एंटीबायोटिक देते-देते बीत गये। एक दिन वह मुझसे बोला–''ममा, इस बार तो मैं दुर्गापूजा की प्रदर्शनी देखने नहीं जा सकूंगा।'' मैंने कहा–''क्यों नहीं, मैं तुम्हें ले चलूंगी।'' तभी वह रेंगता हुआ पलंग से उतरा और पोलियोग्रस्त बच्चे की तरह घसीट-घसीट कर चलते हुए बोला, ''कैसे जाऊंगा?'' यह देखकर मेरे पैर के नीचे से जमीन ही खिसक गई। मेरे ससुर जी बोले–''चिन्ता मत करो कुछ नहीं होगा। चलो, डाक्टर के पास।'' उन्होंने अपनी गाड़ी निकाली। हम तुरन्त डाक्टर के पास पहुँचे। बच्चे का चेकअप करने के बाद डाक्टर ने छाती का एक्सरे एवं रक्त की जांच करने को कहा। डाक्टर के हाव-भाव देखने के बाद मैं समझ गई कि मामला गम्भीर है। बहुत पूछने के बाद डाक्टर ने कहा पहले इस टेस्ट की रिपोर्ट ले आइए फिर देखते हैं। इतना सुनने के बाद मेरे तो होश उड़ गये। एक्सरे व रक्त परीक्षण के लिए गये। वहां भी डाक्टर से पूछने के बाद भी वह कुछ न बोले। बस इतना कह कर टाल दिया कि आपके डाक्टर सब बतायेंगे। मेरी घबराहट बढ़ने लगी। भारी मन से घर वापस आयी। बच्चा परेशान न हो इसलिए अपना दर्द छिपाकर बच्चे को संभालती रही। मन अंदर ही अंदर रो रहा था। बस एक ही सहारा जेहन में आया। वह था श्रद्धेय अंकल का। मन में यही सवाल उठता रहा कि अगर बच्चे को दिल्ली ले जाऊँ, अंकल के पास तो बच्चा ठीक हो ही जायेगा। उस समय दिल्ली में दशहरे का भण्डारा समाप्त हुए मात्र एक दिन हुआ था। मेरा यह सोचना था कि घर के गेट पर एक मारुती वैन रुकी। उसमें से भागलपुर के घोष अंकल उतरे और पूछे–''कृष्ण मुरारी भाई साहब की बेटी यहीं रहती है।'' मेरे ससुर जी आदरपूर्वक उनको घर में लाये

और मुझे बुलाया। मैंने आकर घोष अंकल को प्रणाम किया। उन्होंने मुझे भण्डारे का प्रसाद दिया और बोले–''सरदार जी भाई साहब ने यह प्रसाद तुम्हारे बेटे के लिए भेजा है, उसे खिला दो।'' अंधा क्या चाहे दो आंखें बस कुछ ऐसा ही मेरा हाल था। प्रसाद मैंने बच्चे को खिला दिया। बस फिर क्या था रिपोर्ट भी नार्मल आयी और बच्चा भी धीरे-धीरे स्वस्थ हो गया। डाक्टर भी चकित रह गये।

मेरे जीवन का यह एक ऐसा वक्त था जिसे मैं ताउम्र नहीं भूल सकती। आज भी जब वह दिन याद आते हैं तो रोना आ जाता है। वेदना वैसी ही होने लगती है। सच यदि अंकल की छत्रछाया न होती तो न जाने क्या होता। वास्तव में मैं व मेरा परिवार बहुत भाग्यशाली हैं तभी तो सरदारजी अंकल का वरदहस्त हमारे ऊपर है। वह किसी भी परिस्थिति में हमें विचलित नहीं होने देते। आशा की एक ज्योति सदैव प्रज्ज्वलित रहती है। हम संसारी लोग इतने स्वार्थी होते हैं कि हमें अपना सुख, सुख लगता है अपना दुख, दुख लगता है। विडम्बना तो यह है कि हम अंकल से मांगते भी हैं तो केवल सांसारिक खुशियां ही। उस चिर परमानन्द, जिसका अपूर्व खजाना अंकल के पास है उसकी चाहत करते ही नहीं। मैं भी कोई अपवाद नहीं हूं। वह जो वैभव लुटा रहे हैं उसे समेटने के लिए हमारी झोली ही तंग है। छोटी-छोटी खुशी के चक्कर में हम सच्ची खुशी त्याग रहे हैं। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह हमारे अंकल को स्वस्थ और दीर्घायु करे जिससे हम लोगों को उनका स्नेह और आशीर्वाद मिलता रहे।

तेरे दर को छोड़कर किस दर जाऊँ मैं?
देख लिया जग सारा मैंने तेरे जैसा मीत नहीं।
तेरे जैसा सबल सहारा तेरे जैसा प्यार नहीं,
कैसे महिमा तेरी गाऊँ, छोड़ कहाँ अब जाऊँ मैं।।

हमारे अहोभाग्य कि इस जन्म में हमें ऐसा सबल सहारा मिला। अवश्य ही कोई पूर्व जन्म के अच्छे संस्कारों का फल है।

एक बार की बात है। मै दिवाली की छुट्टी में औरंगाबाद (महाराष्ट्र) से दिल्ली पापा-मम्मी से मिलने आई थी। उन्हीं दिनों मेरी दूर के रिश्ते की बहन भी आई थीं। उन्हें दिल्ली में मॉडल टाउन में किसी से अपने पैसे वसूलने थे। धनराशी काफी बड़ी थी। इसी सिलसिले में वे पहले भी कई चक्कर लगा चुकी थीं। मुझसे बोलीं–''मैं पैसे लेने जा रही हूँ, क्या तुम मेरे साथ चलोगी?'' मैंने मम्मी से आज्ञा चाहा। मम्मी बोलीं–''वो कई चक्कर लगा चुकी हैं। मुझे तो बड़ा संदेह होता है इनकी बातों से, कुछ

स्पष्ट नहीं है। तुम पहले सरदारजी भाई साहब के पास जाओ, इस विषय में उनसे आज्ञा ले लो तब उनके साथ जाओ।''

दीदी के साथ मैं पहले अंकल के घर गयी। तब वे पहाड़गंज में रहते थे। मम्मी के आदेशानुसार मैंने सारी बातें पहले अंकल को बतायीं। सुनने के बाद अंकल ने मुझसे पूछा–''क्या पहले तुम गई हो जहाँ तुम्हारी दीदी तुम्हें ले जाना चाहती हैं।'' मेरे नाकारात्मक जबाब पर उन्होंने कहा–''ठीक है, जाओ दुनिया देख लो।''

रास्ते भर मैं यही सोचती रही कि परोक्ष रुप में अंकल ने क्या संकेत दिया है। उन्हीं के नाम का स्मरण करते–करते हम उस जगह पर पहुँचे। जगह देखकर मन भय से काँप गया। घर के एक तरफ तालाब था और दूसरी तरफ खुला मैदान। किसी को मारकर यदि वो लोग तालाब में फेंक दें तो पता भी न चले। कुछ मुस्टंड से आदमी बड़ी अभद्र वेषभूषा में बैठे थे। खैर दम साधे मन ही मन अंकल का स्मरण करती मैं बैठी रही। दीदी उन लोगों से बातें करती रहीं। जब अंधेरा हो गया तो मैंने दीदी से कहा–''अब चलो, काफी देर हो गयी है।'' जैसे–तैसे हम लोग वहाँ से बाहर निकले। बाहर आकर ठंडी सांस लेते हुए मैंने मन ही मन अंकल को प्रणाम किया। क्या खूब दुनिया का नज़ारा देखने को मिला। अंकल की कृपा से हम सकुशल घर आ गये।

पग–पग पर अपने बच्चों की रक्षा करने वाले की महिमा अपार है। हर सांस उनके आशीर्वाद से भरी है। 3 अगस्त 2000 को मेरे पति ने गाड़ी खरीदी। कुछ महीनों तक तो आफिस का ड्राईवर आकर ले जाता था और शाम को वापस छोड़ जाता था। एक दिन सुबह का वक्त था और दिसम्बर का महीना था। बाजार से सामान खरीद कर मैं घर आयी ही थी कि घर के बाहर हरे रंग की चादर पकड़े चार व्यक्ति आए। यह अचानक ही हुआ, मैंने कहीं से उन्हें आते नहीं देखा। उनमें से एक व्यक्ति मुझसे बोले–''तुम्हारे नाम से अजमेर शरीफ में लोबान चढाना है।'' मेरे पर्स में उस वक्त केवल पचास रुपए थे जो मैंने उन्हें दे दिया। वह बोले–''बेटा! लोबान तो बड़ा महंगा होता है। इतने में तो कुछ नहीं आएगा। वैसे अगर कोई इस तरह मांगता है तो मैं भगा देती हूँ। उस दिन मुझे क्या हो गया नहीं मालूम, मैंने पूछा–''आप ही बतायें कितने का आता है, मुझे नहीं मालूम।'' वह बोले ''कम से कम हजार रुपए होना है।'' मैं कमरे में गई, देखा तो कुल मिलाकर ढाई तीन सौ रुपए ही मिले। महीने का आखिरी सप्ताह था, सारा लाकर मैंने उन्हें दे दिया। दिलो–दिमाग एकदम शून्य था। मैंने यह भी नहीं सोचा कि महीने का अन्त है यदि कोई जरुरत लगी तो क्या होगा। बाबूजी (श्वसुर जी) अस्वस्थ हैं।

वह बोले–''बेटा! यह तो अभी भी कम है।'' मैंने हाथ जोड़ दिया और बोली–''बाबा! मेरे पास जो था मैंने दे दिया।'' तब वे बोले–''बेटा! खुशी मन से तो दे रही हो? मन में कोई रंजिश तो नहीं है?'' मैंने कहा–''नहीं बाबा, जो देना था दे दिया, उसका गम कैसा।'' फिर उन्होंने कहा–''अच्छा बेटा, हाथ आगे करो।'' मैंने हाथ बढ़ा दिया। उन्होंने मुट्ठी बांधे हाथ चादर पर रगड़ा और मेरे सामने हाथ करके बोले–''लो बेटी हाथ बाहर करो और अपने कमरे में हरे कपड़े में लपेटकर इसे रख देना।'' मुझे खूब याद है कि चादर खाली थी, परन्तु मेरे हाथ पर उन्होंने एक सिक्का और कुछ फूल रखे थे। मैं निर्निवेश उन्हें देखती रही तो वे बोले–''बेटा! इसे संभाल के रख दो, फिर देखो क्या होता है। दुबारा मैं फिर आऊँगा तो एक कम्बल देना। अच्छा अब हम चलते हैं।'' मैंने उत्तर दिया–''बाबा मेरे पास जो भी होगा मैं अवश्य आपको दूंगी।'' सुनकर वे लोग आगे चले गये। थोड़ी दूर तक उन्हें जाते मैंने देखा फिर कहाँ अदृश्य हो गये मालूम नहीं। मैं चकित खोई-खोई सी देखती रही।

इस घटना के दस पन्द्रह दिन बाद ही मेरे पतिदेव का फोन आया कि आफिस से लौठते वक्त कार का एक्सीडेंठ हो गया है रोड रोलर से, बेटे को शीघ्र भेजो। अजमेर शरीफ के बाबा के रूप में कैसी कृपा उन्होंने की थी कि जो भी क्षति होनी थी, कार की हुई। मेरे पति को किसी तरह की खरोंच भी नहीं आयी। इस अपूर्व महिमा को इस अपरंपार कृपा का आप क्या नाम देंगे? मेरे पास तो इस महिमा का गुणगान करने के उचित शब्दों का आभाव है। हृदय अवश्य याद करके अभिभूत हो उठता है।

17 जनवरी 2009 को पूज्य अंकल के आशीर्वाद के फलस्वरूप मेरा बेटा सत्यजीत (मन्नू) एम.एस. करने के लिए अमेरिका गया। उन्हीं के आदेश से उसने नागपुर से electrical engineering में BE किया। कैलिफोर्निया युनिवर्सिटी से 2011 में उसने Robotics and Controls में 'A' ग्रंड में डिग्री प्राप्त की। अंकल सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और बहुत आशीर्वाद दिया। अनुसंधान में रुचि होने से उसी दिशा में नौकरी की तलाश में है। मन लायक स्थान न मिलने के कारण अभी कहीं भी join नहीं कर रहा है।

समयानुसार जहाँ भी वे उचित समझेंगे उसे कार्यरत करेंगे। अंकल का वरदहस्त सर पर है तो डर किस बात का? आज तक हर विषम परिस्थिति में उन्होंने ही तो सहारा दिया है, तो क्या अब नहीं देंगे? अवश्य देंगे यह विश्वास है। यही विश्वास वो सबल आधार है जिसके सहारे आज तक का मार्ग तय करती रही और आगे भी वही मेरा पथ प्रदर्शक होगा। यह है तो सब कुछ है, वरना कुछ नहीं है।

गुरुदेव माता गुरुदेव पिता गुरुदेव स्वामी परमेश्वरा

आदर्श कुमार व्रत
वाराणसी

जीवन में कभी-कभी ऐसी परिस्थितियां आती है। जब हम असहाय हो जाते हैं तब हम गुरु महाराज को पुकारने लगते हैं। वो हमारे हृदय की सच्ची पुकार होती है। उनसे सहायता आनन-फानन में फौरन मिलती है। 4 फरवरी 2011 की घटना है मेरा मंझला बेटा अभिषेक जो मुंबई में साफ्टवेयर इंजीनियर है ऑफिस में काम कर रहा था। अचानक काम करते-करते कम्प्यूटर के की-बोर्ड पर उसकी उंगलियाँ चलनी बंद हो गयी। उस समय ज्यादा ध्यान नहीं दिया। सोचा कहीं दब गई होगी। शाम को घर लौटकर मुझे फोन करके उसने बताया तो मैंने उसे फौरन डॉक्टर को दिखाने के लिए कहा। सुबह होते-होते असर पैरों पर भी हो गया। किसी तरह अस्पताल पहुँचे जहां उसे तुरन्त भर्ती कर लिया गया। सभी तरह के टेस्ट के बाद उसे बड़े अस्पताल जुपिटर में भेज दिया गया; उसे आई.सी.यू. में भर्ती कर इलाज शुरू कर दिया गया। बीमारी का नाम जी.बी.एस. इंफेक्शन बताया। इलाज काफी महंगा था।

पैर में फ्रैक्चर होने के कारण मैं मुंबई नहीं जा सकता था। बड़े बेटे उत्कर्ष को वहां भेज दिया। छोटा बेटा विशाल पहले ही पूना से मुंबई पहुँच गया था। सभी बातें 5 फरवरी 2011 को पूज्य शक्ति भाई साहब को फोन द्वारा बता दिया गया। उन्होंने कहा-''आप चिन्ता न करें गुरुदेव की कृपा से सब ठीक हो जायेगा। मैं गुरुदेव से कहूंगा।'' दूसरे दिन से हालत सुधरने लगी। पांच दिन का कोर्स समाप्त होते-होते काफी सुधार आ गया। हाथ-पैर हिलने लगे थे। अब उसे प्राइवेट रूम में शिफ्ट कर दिया गया। इसी बीच एक टेस्ट हुआ जिसमें एक चीज पॉज़िटिव आया था। डाक्टर ने बताया कि इसका टेस्ट केवल लंदन में ही हो सकता है, सैम्पल लंदन भेजना पड़ेगा। एक दवा जो लिखा था वह भी भारत में उपलब्ध नहीं है। अमेरिका से मंगाना पड़ेगा जिसके लिए काफी समय लगेगा। मेरे तो होश ही उड़ गये। किन्तु फिर भी डाक्टर व हम लोग दवा मंगाने का प्रयत्न करने लगे। अमेरिका में रहने वाले दोस्त रिश्तेदारों को खबर कर दिया। मैंने पत्नी के साथ बैठकर रात भर गुरुदेव से प्रार्थना करना शुरू कर दिया। प्रभु! मेरे बस में अब कुछ नहीं है। आप ही कृपा करें। प्रार्थना के सिवा मैं कुछ कर भी नहीं सकता था।

दूसरे दिन सुबह नौ बजे विशाल का फोन आया जिसे सुनकर मैं रो पड़ा। पूज्य गुरुदेव कितने कृपालु हैं, हर समय अपने संतान की पुकार सुनते हैं। उसने बताया कि सबेरे राउंड

पर डाक्टर ने बताया कि अब अमेरिका से दवा मंगाने की जरूरत नहीं है और सैम्पल भी भेजने की अब आवश्यकता नहीं है। अपने प्रामाणिक लैब से टेस्ट करने पर रिपोर्ट निगेटिव आया है। यह चमत्कार सिवा मेरे गुरुदेव के और कौन कर सकता है? उनकी लीला अपार है। अस्पताल से डिस्चार्ज करते समय डाक्टर ने कुछ व्यायाम बताये जो वह आज भी करता है। अब तो वह ऑफिस भी जाने लगा है। उनकी कृपा तो अनगिनत है। पल-पल बरस रही है।

एक बार मेरी कार बस से टक्कर खाकर इतनी क्षतिग्रस्त हुई कि मरम्मत के योग्य भी न रही। कार मेरे छोटे भाई अजय की थी। वही चला रहे थे। मैं, मेरी पत्नी, उनका पुत्र अंकुर चार लोग थे। परन्तु गुरुदेव की कृपा देखिए कि कार तो चकनाचूर हो गई पर हम लोगों को जरा सी चोट भी नहीं आयी। जो भी कार को देखता वह यही कहता-''भगवान की क्या लीला है जो आप सब लोग सकुशल हैं, अन्यथा कार तो एकदम चूर हो गयी।''

जब से मैंने होश संभाला, यानी सात-आठ वर्ष की उम्र से ही मैं सत्संग में जाता हूँ। मेरे पिताजी स्वर्गीय परमानंद व्रत संभवतः सन् 1953 से सत्संग से जुड़े हुए थे। हमको यही बताया जाता था कि पूज्य गुरुदेव ही हम लोगों के भगवान हैं। यही कारण है कि हम सभी भाई-बहन बचपन से हर छोटी-बड़ी बात के लिए गुरुदेव से प्रार्थना करते रहे हैं। मैं मथुरा वेटनरी कॉलेज में पढ़ रहा था। बहुत दिनों बीमार रहने के कारण क्लास में मैं बहुत दिनों से अनुपस्थित रहा। पढ़ाई में काफी पिछड़ गया। परीक्षा पास आने पर मैं बहुत घबराया। कोर्स पूरा करना असम्भव था। फेल हो जाऊँगा यह निश्चय था। आखिर चिन्तित और परेशान होकर मैंने गुरुदेव को अपनी सारी परेशानी लिख भेजा। प्रार्थना किया कि साल बरबाद न हो।

गुरुदेव का उत्तर आया-''परमात्मा पर भरोसा रखो। पढ़ाई ध्यान से करो। कोशिश करना मत छोड़ो। परमात्मा चाहेगा तो सब ठीक ही होगा।'' पत्र पाकर मैं चिन्ता मुक्त हो गया, और उनके आदेशानुसार जी-जान से पढ़ाई में जुट गया। कितनी कृपा है मेरे भगवान गुरुदेव की। जो मैंने पढ़ा था, परीक्षा में अधिकांश प्रश्न उसी में से आये। मेरा वर्ष उनकी कृपा से बरबाद होने से बच गया। सबका कल्याण करने वाले वही तो हैं फिर उनमें और उस भगवान में क्या अंतर है जिसे हमने देखा नहीं। इनको तो हम खुली आंखों से देख रहे हैं। विषम परिस्थितियों में घबराकर जब-जब उन्हें पुकारा, फौरन मदद मिली है। उनका ख्याल बराबर बना रहे यही मेरी प्रार्थना है। प्रभु इतनी तो कृपा करना।

प्रथम मिलन

संजय कुमार श्रीवास्तव
बनारस

मैं सन् 1985 में पहली बार अपने पिताजी के साथ सिकन्दराबाद सत्संग में गया। प्रथम बार मुझे पूज्य गुरुदेव के दर्शन हुए। न जाने मुझे क्या हुआ मैं मूक अपलक उन्हीं को निहारता रहा। चारो ओर का वातावरण शान्त था। सबसे बड़ी बात तो यह है कि मेरा मन मस्तिष्क जो चारो ओर भटक रहा था, मेरा न रहा। मैं संज्ञा शून्य हो गया। चंचल मन में जो प्रश्न लेकर मैं बनारस से आया था, उसका उत्तर बिना मांगे ही मुझे मिल गया कि धैर्य और आत्मविश्वास के साथ मैं कर्म करता रहूँ। वास्तव में पढ़ाई पूरी करके नौकरी के लिए भटक रहा था। यही चिन्ता मुझे परेशान कर रही थी। पुनः 1990 में मैं गाजियाबाद भण्डारे में पहुँचा। काफी भीड़ थी। मेरे पिताजी मुझे गुरुदेव से मिलाने के लिए परेशान थे। तीसरे दिन भण्डारे का समापन था। लोग गुरुदेव से मिलने के लिए आज्ञा ले रहे थे। जिस कमरे में गुरुदेव ठहरे थे, फूल माला व प्रसाद लेकर पिताजी के साथ मैं भी लाइन में लग गया। मुझे ऐसा लग रहा था जैसे कोई चुम्बकीय शक्ति मुझे खींच रही है। अन्दर गया। मुझे होश ही न रहा कि मैं कहाँ हूँ। उनके सामने बैठ गया। मेरी आवाज बन्द हो गयी। यह दशा कब तक रही मुझे मालूम नहीं–"तुम मुनीन्द्र जी के बेटे हो, तुम्हारी वकालत कैसी चल रही है? धैर्य रखो गुरुदेव की कृपा होगी, घबराना मत।" मधुर वाणी सुनते ही मैं होश में आ गया। मैं रोमांचित हो उठा। सोचा, दो दिन से तो भेंट हुई नहीं और बिना बताये कैसे सब कुछ जान गये। मैं तो पहले दिन से ही आपको देखकर आकर्षित हो गया था, उसी दिन से एक अपूर्व शक्ति व आत्मविश्वास ने मेरे अंतरमन में घर बना लिया था। मन में विचार उठा कि अवश्य ही मानव रूप में यह भगवान हैं। यह एक ऐसी आस्था है जो स्वतः मेरे मन में घर कर गयी जिसके सहारे जीवन की हर कठिनाई हल होती जा रही है।

सन् 1997 में पिताजी का स्वर्गवास हो गया। सब भाईयों के बीच बंटवारा हो गया। एक तो पिता का स्वर्गवास, दूसरे भाईयों का अलग होना। मुझे बड़ा दुख हुआ। मैं सोच न पाया कि इस विषम परिस्थिति से कैसे निकलूं? यह आपका ही आशीर्वाद

था जो मैं इस विषम परिस्थिति में भी डगमगाया नहीं। बनारस के सभी भाइयों के साथ रहकर मुझे बहुत सहारा मिला। उन लोगों के सहारे ही मैं गुरु भगवान के बताये आदर्शों का पालन करने में समर्थ हुआ। हे गुरु भगवान! मेरी यही प्रार्थना है कि मुझमें आत्मशक्ति, प्रेरणा व विश्वास सदा अडिग रहे ताकि आपके बताये रास्ते पर सच्चाई से चल सकूं।

हमारे सद्गुरुओं को प्रणाम

सुमन
बनारस

श्री राम श्री कृष्ण रूप में करने को उद्धार,
आदि गुरु की हुई कृपा, हमने पाया करतार ।
करता की करनी का अक्षर कैसे करें बयान,
जो आवे सो पावे कृपा, ऐसे कृपा निधान ।।
रामाश्रम सत्संग में आकर बदल जाये इंसान,
अंधियारी माया से बच कर करे ज्योति का मान ।
धन्य धन्य सब पूज्यनीय कर दें बेड़ा पार,
श्री राम श्री कृष्ण रूप में करने को उद्धार ।।

भजन

कैसा नशा गुरु नाम का है, जरा पीकर तो देखो ।
पीकर देखो जरा पीकर तो देखो कैसा नशा
राम जी ने पिया कृष्ण जी ने पिया गुरु के द्वारे जाके
जरा पीकर तो देखो
मीरा ने पिया शबरी ने पिया प्रभु को दिल में बसा के
जरा पीकर.....
स्वामी करतार जी ने भर-भर पिया सतगुरु कृष्ण को पाकर ।
जरा पीकर.....
शक्ति साईं ने भर के पिया जो बचपन से शोभा बने करतार के ।
जरा पीकर तो .....

जिसने देखा है, वही जानता इस बात को, कह नहीं सकते कि क्या जादू है तेरे प्यार में। मैंने जब कभी भी कोई भजन या गज़ल लिखा बनारस वाले बाबू जी

(श्री सच्चिदानंद लालजी) के संरक्षण में ही। दुख है आज बाबू जी हम लोगों के बीच नहीं है, परन्तु फिर भी उनकी अदृश्य प्रेरणा बराबर मिलती रहती है। मैं अपने परम पिता श्री गुरु भगवान के प्रति हृदय के भावों को कागज पर लिख पाने में समर्थ हो पाती हूँ। आज परम पिता के शतायु पर कागज पर हृदय के भाव छलक रहे हैं। यह एक अद्भुत स्वप्न था जो मैंने 14 दिसंबर 2008 में देखा था। जब याद आता है मेरा रोम-रोम पुलकित हो जाता है। मोरपंखी वस्त्र पहने मेरे दयानिधान शिवलिंग में शोभायमान हो रहे थे। एक पात्र में दही व लावा (जो नागपंचमी को चढ़ता है) लिए खुद भी पान कर रहे हैं और मुझे भी दे रहे हैं। मैं अमृतपान करती रही। प्रेमाश्रु बहता रहा, आत्मानन्द में विभोर नाच उठी। आह! दर्द से कराह उठी। मेरे प्रभु गुरुदेव अन्तर्ध्यान हो गये। सोते में रोना सुनकर मेरी मां जो काफी दिनों से बीमार थी मेरे सिर पर हाथ फेरकर बोली-''क्या बात है बेटी क्यों रो रही है?'' मेरी नींद खुल गई।

कैसे वंदना करूं तेरे स्वरूप की,
कैसे सराहूं भाग्य को, मुझे तेरी शरण मिली।

मेरी मां कैंसर की मरीज थीं। बहुत कष्ट था उनको। उनकी जैसी स्थिति थी, उस स्थिति में मैं उन्हें छोड़कर कहीं आ-जा नहीं सकती थी। 2009 का दशहरा भण्डारा पास था। मैं भण्डारे में सम्मिलित न हो पाऊंगी सोचकर ही परेशान थी। मेरी परेशानी को मेरी मां खूब समझती थीं। मैंने अपनी दीदी को कुछ दिनों के लिए मां के पास आकर रहने की प्रार्थना की। उनके आने पर मैं भण्डारे में शामिल होने के लिए चली गई। मेरे जाने के बाद मां की दशा बिगड़ गयी। जैसे ही गुरुदेव के पास पहुँची उन्होंने मुझे माला पहनाया और एक सेब देकर बोले, ''तुम्हें क्या चाहिए।'' उनके सम्मुख तो वैसे ही अपना भान नहीं रहता। उस दिन तो पता नहीं कि मैं कहां खो गई। जब घर लौटी तो बहन से पता चला और मेरी आंखें भर आईं। प्रभु कितने दयालु हैं बिना मेरे कुछ कहे सब समझ गये और मेरी मृतप्राय मां की हालत को सुधार दिया। सेब में से मैंने मां को भी दिया। उनकी स्थिति में थोड़ा सुधार हुआ। दीपावली के दिन पूजा करके मैं रामायण पढ़ रही थी। मां सुन रही थीं। इतने में मां की सांस तेज-तेज चलने लगी। चेहरे पर एक दिव्य प्रकाश छा गया। ऐसा मैंने कभी नहीं देखा। मां गुरुदेव के श्री चरणों में सदैव के लिए विलीन हो गयीं।

दोनों जहां के मालिक तेरा ही आसरा है।
राज़ी है हम उसी में जिसमें तेरी रज़ा है।

बड़े बजुर्गों से सुना है कि प्रभु जिसे बहुत प्यार करते हैं उसकी दुनिया उजड़ जाती है। अपनी इस छोटी-सी उम्र में ही मैंने जिन्दगी में बहुत से उतार-चढ़ाव देखे हैं। सहन कर पाना आसान नहीं था। यदि मेरे प्रभु गुरुदेव का आशीर्वाद मेरे ऊपर न होता तो क्या जीवन के झंझावात में मैं जीवित रह पाती? कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी मुझे बराबर ऐसा लगता था कि आप मेरे साथ हैं। हे प्रभो! मेरी यही प्रार्थना है कि मुझे सदा आपके चरण शरण में स्थान मिला रहे। प्रभो, मैंने तो बचपन से ही सदा दुख पाया है। अपना कहने वाले स्वजन से सदैव तिरस्कार ही पाया है। प्रभु इस उतार-चढ़ाव के कारण घोर नैराश्य में मैं डूब गई थी। तभी प्रकाश बनकर आये बनारस वाले बाबूजी (सच्चिदानंद) जिनके साथ मैं दिल्ली आपके शरण में पहुँची। प्रातःकाल की पूजा शुरू हुई। बाबूजी की मदद से बनाया भजन मैंने पढ़ा। भजन में मैंने अपनी सारी व्यथा उड़ेल दी थी।

पूजा समाप्त होने के बाद गुरुदेव ने मुझसे मुंह धोने के लिए कहा। जब मैं मुंह धोकर आकर बैठी तो आपने कहा-''बेटी कल सुबह बताशा लेकर आना।'' आज्ञानुसार मैं बताशा लेकर दूसरे दिन आपके पास गई। वह दिन मेरे जीवन का अनोखा दिन था। मन में छाया घोर अंधेरा एक प्रकाश पुंज के पीछे विलीन हो गया। एकांकी मन का एहसास एक सबल शक्ति में समा गई। बचपन से तिरस्कृत मैं उस अमृत जल के पाते ही खिल उठी। नवजीवन का मुझमें संचार हो गया। कहाँ मैं अकेली थी, अब मेरे ऊपर एक सशक्त छत्रछाया है। भला कोई क्या मुझे तिरस्कृत कर सकता है? मेरे नारायण का असीम प्यार मुझे मिला अब किसी की परवाह मुझे क्यों हो? मेरा जीवन धन्य हो उठा।

विरोधी मित्र बन गया

सत्येन्द्र प्रसाद
मुजफ्फरपुर

मैं जमीन के खरीद-फरोख्त के व्यवसाय में था। मुजफ्फरपुर का एक बहुत बड़ा रंगदार मुझसे रंगदारी की मांग किया करता था। मांग तो करता ही था, धमकी भी बहुत दिया करता था। उसके बार-बार की धमकी से परेशान होकर मैंने इस विषय में गुरु महाराज से बात करने का अपने मन में विचार किया। इसी उद्देश्य से मैं गाज़ियाबाद गुरु महाराज के पास गया। जून 2005 की बात है। जब मैं पहुंचा तब दिन के 11 बजे थे। बड़ा सन्नाटा था। गुरु महाराज का घर अन्दर से बन्द था। पास में ही जौहरी भाई साहब के मकान से उनकी पुत्रवधू निकलीं। पूछने पर उन्होंने बताया कि अब गुरुदेव से सन्ध्या समय ही भेंट हो सकती है। मैं पूज्य गुरु महाराज के मकान के सामने एक फूल के पेड़ के नीचे छांव में खड़ा हो गया। सोचने लगा इस धूप में कहां जाऊँ। तभी देखा दरवाजा खोलकर स्वयं मुझे अंदर बुला रहे हैं। वह मुझे ऊपर ले गये और अपने पास बिठाया। जब मैं कुछ आश्वस्त हुआ तब मुझे मिठाई खिलाये और शरबत पिलाये। मैं उनसे कुछ अपनी परेशानियों के बारे में बताता इसके पहले ही उन्होंने कहना शुरू कर दिया-''तुम कुछ नहीं कर सकते। कुछ मत सोचो।'' ऐसा बार-बार उन्होंने कहा। इसके बाद बोले-''कल इतवार का सत्संग रामनगर दिल्ली में है उसमें भाग लेने के बाद ही अपने घर वापस जाना।'' दूसरे दिन इतवार के सत्संग में गया और चलते समय उन्होंने फिर कहा ''कुछ मत सोचो'' मैं लौटकर मुजफ्फरपुर आ गया। लगभग एक महीने बाद कचहरी में उस रंगदार से सामना हो गया। वह लगभग तीस व्यक्तियों के साथ था। उसे देखकर मैं डर गया और गुरु महाराज को याद करने लगा। उसने देखते ही मुझे बुलाया और हाथ मिलाया और बोला, भाई मिलते रहा करो। रंगदारी की कोई बात उसने मुझसे नहीं कही। चलते समय दोस्त की भाँति हाथ मिलाकर चला गया। ऐसी कृपा थी पूज्य गुरु महाराज की।

बसन्त का भण्डारा 1986 में मुजफ्फरपुर में हुआ था। पूज्य नन्द भाई साहब की कृपा से मुझे गुरु महाराज ने दीक्षा दिया। उनकी कृपा से मैं भण्डारे में बराबर जाने लगा और घर पर भी सत्संग करवाने लगा। मेरा घर बहुत छोटा और खपरैल का था। सत्संग कराते समय सामान दूसरी जगह रखना पड़ता था। मेरी पत्नी इस बात से बहुत नाराज होती थी। कभी-कभी तो कोसने भी लगती थी। मकान खपरैल का था इसलिए बरसात में पानी भी टपकता था। जहाँ-जहाँ पानी टपकता था बाल्टी लगाना पड़ता था। ऐसे ही एक बार 1993 में सत्संग मेरे घर पर था। उसी समय बारिश होने लगी। पत्नी बहुत खुश थी कि पानी टपकने से मेरी बेइज्जती हो जायेगी और सत्संग बन्द हो जायेगा। परन्तु गुरुदेव की कृपा देखिए, बारिश होती रही और घर में जहाँ सत्संग हो रहा था एक बूंद भी पानी नहीं गिरा।

यह घटना 1995 की है। जून का महीना था, धूप चरम सीमा पर थी। मुझे मुजफ्फरपुर से पटना जाना था। सुबह-सुबह बिना नाश्ता किये बस से चल पड़ा। पास में मात्र बस भाड़े के लिए ही पैसे थे। यह सोचकर चला था कि वहाँ पहुँचकर भाई से पैसे ले लूंगा। मेरे बड़े भाई पटना सचिवालय में कार्यरत थे। भरी दुपहरी में बस से उतरकर सचिवालय परिसर में प्रवेश करना चाह रहा था तभी चौकीदार ने प्रवेश करने से मना किया। भूख-प्यास और गर्मी से परेशान परिसर में ही एक पेड़ के नीचे खड़ा हो गया। बेचैन होकर मैंने गुरु महाराज को याद करना शुरू कर दिया कि गुरु महाराज मैं क्या करूं? पास में एक पैसा नहीं, क्या करूं, कहां जाऊं, यही सोच रहा था, कि पीछे से किसी ने मेरे कंधे पर हाथ रखा। मुड़कर देखा तो मेरे बड़े भाई खड़े थे। बोले सत्येन्द्र यहां धूप में क्यों खड़े हो? मैंने उन्हें सारी बातें बता दीं। तब उन्होंने बताया कि सचिवालय के इस द्वार से सत्रह साल से आज तक कोई नहीं निकला। आज पहली बार निकला हूँ और तुमसे भेंट हो गयी। इस घटना को क्या कहूँ? गुरु महाराज की ही तो कृपा है जो भाई उस द्वार की ओर आ गये।

पहली मुलाकात एवं दीक्षा-ग्रहण

डा. मुद्रिका प्रसाद
मुजफ्फरपुर

चिकित्सा सेवा में आने के बाद मैं हर माह के पूर्णिमा के दिन सत्यनारायण पूजन किया करता था। यह क्रम लगातार 12 वर्ष तक चला। फिर मेरे साथ एक अप्रत्याशित घटना घटी। मेरे एक मित्र ने जिससे मेरा भाई जैसा प्यार था, हम एक दूसरे के लिए जान देने को तैयार रहते थे, मुझे धोखा देकर पैरवी व पैसे के बल से मेरा स्थानान्तरण करवा कर मेरे स्थान पर आ गया। मेरा स्थानान्तरण भभुआ से लगभग पचीस किलोमीटर की दूरी पर करवा दिया। यह स्थान दूर तो था ही, रहने की भी कोई व्यवस्था नहीं थी। अस्पताल भी एक मिट्टी के किराये के कमरे में अवस्थित था। परिवार को रखने और बच्चों की पढ़ाई की भी कोई व्यवस्था नहीं थी। इसका प्रभाव मुझ पर यह पड़ा कि पूजा-पाठ व भगवान नाम से मुझे विरक्ति हो गयी। वहाँ लगभग साढ़े तीन वर्ष रहने के बाद एक परिचित की सहायता से मेरा स्थानान्तरण गोपालगंज हो गया। इसे मां दुर्गा की कृपा समझा। थोड़ा परिवर्तन मुझमें हुआ और मैं दुर्गा सप्तशती का नियमित पाठ करने लगा। ऐसा इसलिए कि मेरा स्थानान्तरण जब मैं मां विन्ध्यवासिनी के दर्शन करके आया तब हुआ और इसे मैंने मां की ही कृपा समझा।

वर्ष 1977 की बात है, मैं गोपालगंज में ही था। एक दिन मेरे कनिष्ठ पुत्र ने, जो उस समय पांच वर्ष का था, खेल-खेल में एक नुकीली धातु की वस्तु अपनी आंख में चुभो लिया। उसने उस समय किसी से कुछ नहीं कहा। कुछ दिनों के बाद जब आंख में दर्द होने लगा और पानी गिरने लगा तब उसने अपनी मां से बताया और उनसे मुझे मालूम हुआ। मैंने देखा तो पूरा लेंस पूर्ण रूप से अपारदर्शी हो चुका था। उसे लेकर स्थानीय डाक्टर तथा मुजफ्फरपुर जाकर अपने मित्र नेत्र रोग विशेषज्ञ को भी दिखाया। उस समय के प्रसिद्ध नेत्र चिकित्सालय सीतापुर में भी दिखाया पर सबने एक ही सलाह दिया कि अपारदर्शी लेंस को निकाल देना पड़ेगा। इन कारणों से पत्नी को बहुत सदमा लगा। वह हर समय रोती रहती। उसका ब्लडप्रेशर बढ़ गया। गोपालगंज में ही पत्नी की एक दूर की सम्बन्धी लक्ष्मी जी रहती थीं। उनके

पति श्री विनायक प्रसाद वर्मा वहां जूनियर इंजीनियर थे। पत्नी का वहाँ आना-जाना था। वह दोनों कुछ दिन पहले ही किसी गुरु जो सरदार जी थे दिल्ली में रहते थे, उनसे दीक्षा लेकर लौटे थे। लक्ष्मी जी ने पत्नी को उनका पता देकर इस सम्बन्ध में उनको पत्र लिखने के लिए कहा। पत्नी ने उन्हें कई पत्र लिखा पर उन्हें एक भी नहीं मिला। इसी बीच गोरखपुर के एक प्रसिद्ध डाक्टर से अपने पुत्र की चिकित्सा कराने लगा। जिससे कुछ सुधार होने लगा, अपारदर्शिता में भी कमी आने लगी। उस समय एम्स में डा. राजेन्द्र प्रसाद के नाम से राजेन्द्र प्रसाद सेंटर फॉर आप्थैलमिक साइन्सेज (RAPCOS) खुलकर काम करने लगा था। पत्नी की बड़ी बहन व बहनोई दिल्ली में थे। बच्चों को लेकर आने और उस संस्थान में दिखाने को कहा। बच्चों को लेकर पत्नी दिल्ली चली गईं। वहां डाक्टर ने देखने के बाद उसे अस्पताल में भर्ती कर दिया और ऑपरेशन की तिथि भी निश्चित कर दी। सूचना मिलने पर मैंने आपरेशन नहीं करवाने के लिए कहा, यह मैंने इसलिए कहा कि होम्योपैथिक दवा से लेंस धीरे-धीरे पारदर्शी हो रहा था। उन दिनों मोबाइल फोन या ट्रंककाल की इतनी सुविधा न थी। मेरा पत्र पत्नी को देर से मिला और आपरेशन कर लेंस को निकाल दिया गया था। कुछ दिनों पश्चात कान्टेक्ट लेंस दे दिया गया था। पत्नी लौटकर गोपालगंज आ गई।

लक्ष्मी जी के घर उनके गुरु जी कभी-कभार आया करते थे। एक दिन लक्ष्मी जी ने कहला भेजा कि उनके गुरु जी आये हुए हैं। वह मिलने के लिए आ जायें। पत्नी ने मुझसे भी चलने को कहा पर मैंने उन्हें मना कर दिया। साधु सन्यासी तथा गुरुओं में मेरा विश्वास नहीं था। पत्नी उनसे मिली तो उनको आश्चर्यजनक अनुभूति हुई और बड़ी शान्ति मिली। उन्होंने एक पुस्तक 'नवनीत भाग 2' पत्नी को पढ़ने के लिए दिया।

सन् 1978 में लक्ष्मीजी के गुरुदेव गोरखपुर आ रहे थे। लक्ष्मी जी और उनके पति विनायक बाबू उनसे मिलने व सत्संग में सम्मलित होने के लिए जा रहे थे। पत्नी भी उन लोगों के साथ जाने व दीक्षा लेने के लिए बेचैन हो गई। इसके लिए मैं राजी हो गया पर विनायक बाबू और उनकी पत्नी ने कहा कि बिना पति की आज्ञा के वह किसी महिला को दीक्षा नहीं देते। अतः आपको भी चलना होगा। मैं किसी भी तरह जाने को तैयार नहीं हुआ। मैंने उनसे कह दिया आप अपने गुरुदेव से कह देंगे कि पत्नी की दीक्षा लेने में मेरी पूरी सहमति है। पत्नी उन लोगों के साथ गोरखपुर चली गई और दीक्षा लेकर लौट आई। आने पर उन्होंने बताया कि उनके गुरुदेव का नाम डाक्टर करतार सिंह धींगरा है। वह रामाश्रम सत्संग सिकंदराबाद के आचार्य एवं अध्यक्ष हैं।

अक्टूबर 1979 में रामाश्रम सत्संग का भण्डारा होने जा रहा था। उस समय इसका मुख्यालय सिकंदराबाद जिला बुलन्दशहर (यू.पी.) में था। पत्नी भी वहां जाने की तैयारी में थी। विनायक बाबू, लक्ष्मी जी व मेरी पत्नी मुझे भी साथ ले जाने की योजना बनाने लगे। कनिष्ठ पुत्र का चेकअप हर छह माह पर एम्स में हुआ करता था। इसी बहाने वह लोग मुझे ले चलने के लिए विवश करने लगे। अन्त में विवश होकर मैं इस शर्त पर तैयार हुआ कि मैं वहां जाकर सत्संग में नहीं बैठूंगा। नियमित समय पर बेटे, पत्नी तथा विनायक बाबू के परिवार के साथ मैं वहाँ पहुँचा। दादा गुरुदेव, डा. श्री कृष्ण भटनागर साहब के घर के ठीक पीछे के घर में ठहरा। सामान वगैरह यथास्थान रखकर वह लोग अपने गुरुदेव से मिलने के लिए निकले। मुझे टहलने के लिए चलने को कहा और साथ ले लिया। गुरुदेव पूज्य दादा गुरुदेव के घर में ठहरे थे। गुरुदेव के ठहरने वाले स्थान पर जाने के लिए स्कूल के मैदान से एक संकरा रास्ता था जिस पर दो-तीन सीढ़ी चढ़कर जाना पड़ता था। उस तरफ सतह थोड़ी ऊंची थी। संयोग देखिये कि हम लोग जब वहाँ पहुँचे तो उनके गुरुदेव कुछ भाइयों के साथ इधर की ओर ही सीढ़ियों से उतर कर आ रहे थे। वह टहलने के लिए निकले थे। सबने उन्हें प्रणाम किया। प्रणाम स्वीकार कर उन्होंने मेरी पत्नी से कहा-''सीता बहन, आप भी आई हैं।'' इस पर विनायक बाबू ने मेरी ओर इंगित करके कहा-''डाक्टर साहब भी आये हैं।'' प्रसन्न होकर उन्होंने मुझसे कुशलक्षेम पूछा और विनायक बाबू से मेरे ठहरने की व्यवस्था करने को कहा कि मुझे कोई कष्ट न हो। फिर बोले-''मैं टहलकर आता हूँ तब आप लोग आइये'' मुझसे बोले, ''डा. साहब आप भी आइयेगा।'' और विनायक जी से बोले, ''इन्हें भी लेते आइयेगा।'' मैं कुछ बोल नहीं पाया।

हम लोग थोड़ी ही देर में लौट आये और हाथ-मुंह धोकर कपड़ा बदलकर उनसे मिलने चल दिये। सब लोग उनके रहने के स्थान जो उनके गुरुदेव डा. श्री कृष्ण भटनागर साहब के घर में ऊपर के कमरे में था, पहुँचे। अंधेरा हो चुका था, बल्ब जल रहा था। बिछावन पर सफेद चादर बिछा था। सफेद पोशाक में कुछ भाइयों के साथ गुरुदेव बैठे थे। प्रणाम के बाद गुरुदेव ने हम लोगों को बैठने के लिए कहा। हम लोगों का हालचाल पूछने के बाद जो भाई बहन बैठे थे उनसे कुछ देर के लिए बाहर जाने को कहा और बोले-''डाक्टर साहब! अगर कोई बात पूछनी हो तो पूछें।'' मैंने कह दिया नहीं मुझे कुछ नहीं पूछना है। इस पर वह कुछ देर आंखें बन्द करके मौन रहे फिर थोड़ी देर बाद आंख खोलकर मुझसे मेरे विचार के विषय में बहुत विस्तार से बोलने लगे। मेरे मन में देवी-देवताओं आदि के विषय में जो धारणा थी सबके विषय में विस्तार से बताने लगे। मैंने सोचा शायद पत्नी ने इन्हें मेरे विषय में बताया होगा। लेकिन उनके विषय में उस समय मेरे मन में प्रतिक्रिया उठी, वह उस पर भी

बोलने लगे तब मेरे मन में विश्वास हो गया कि कुछ शक्ति इनमें जरूर है तभी तो मेरे मन की बातों को बता दिया। यहाँ तक कि उनकी बातों से जो भाव मेरे मन में उठ रहा है उसे भी वह भलीभाँति पढ़ ले रहे हैं। वातार्लाप होने के बाद विनायक बाबू आदि आ गये। कुछ देर रुक कर हम लोग जहां ठहरे थे वहां आ गये। लक्ष्मी जी और विनायक बाबू ने गुरु जी के विषय में मेरी राय जाननी चाही। अच्छा कहने पर उन लोगों ने मुझे दीक्षा लेने के लिए बाध्य करना शुरू कर दिया। दूसरे दिन भी जब उन लोगों ने बाध्य किया तो मैंने हाँ कह दिया। भण्डारे के दूसरे दिन उन लोगों ने प्रसाद लाकर मुझे लेकर गुरुदेव से दीक्षा दिला दिया।

उनकी भविष्यवाणियाँ

एक बार गुरुदेव गोपालगंज आये हुये थे तथा विनायक जी के घर ठहरे हुए थे। वह सुबह टहलते थे। एक दिन सुबह मुझे लेकर ऊपर खुली छत पर टहलने लगे। टहलते समय मुझसे बातें भी करते रहे। बातों-बातों में ही उन्होंने दो बातें कही। पहला ''अगर आप सही एवं सच्चे रास्ते पर हैं तो दुनिया की कोई ताकत आपका कुछ नहीं कर सकती।'' आपसे मुझे बहुत काम लेना है जो मैं बाद में बताऊंगा।'' यह घटना सम्भवतः 1982 की है। एक दिन एकाएक डा. अग्रवाल मेरे पास आये और मुझे एक अधिसूचना दिखाते हुए बोले कि मेरा स्थानान्तरण होकर आपकी जगह पद स्थापन हो गया है। अतः मैं आपसे प्रभार लेने आया हूं। मैंने उनसे कहा कि मेरा स्थानान्तरण आदेश पत्र आये बिना मैं आपको प्रभार नहीं दूँगा। इस पर वह बोले कि मैं लौटकर सचिवालय जाता हूँ तथा आपका आदेश लेकर ही आऊंगा। इसके बाद वह सिविल सर्जन से मिलने चले गये। सिविल सर्जन कुछ कारणों से मुझसे नाराज चल रहे थे। डा. अग्रवाल की बात सुनकर उन्होंने मुझे बुलाया। मैं सिविल सर्जन साहब के कमरे में गया जहां डा. अग्रवाल बैठे थे। सिविल सर्जन साहब ने डा. अग्रवाल को प्रभार देने के लिए मुझसे कहा। मेरे यह कहने पर कि जब तक स्थानांतरण आदेश नहीं आता मैं प्रभार नहीं दूंगा उन्होंने कहा कि अगर दस दिनों के अन्दर आपने इनको प्रभार नहीं दिया तो मैं अपने स्तर से आपको प्रभार मुक्त कर इनको प्रभार दिला दूँगा। आपको सचिवालय या जहाँ जाना हो, जाइयेगा। मैंने भी गुस्से में कह दिया आपको जो करना हो कीजियेगा पर मैं बिना स्थानान्तरण आदेश के प्रभार नहीं दूँगा। सिविल सर्जन साहब का बहुत पहले ही स्थानान्तरण छपरा हो गया था, वह गोपालगंज छोड़ना नहीं चाहते थे। वह पैरवी के बल पर टिके हुए थे। पूज्य गुरुदेव की कृपा देखिए कि नौंवे दिन उनको वायरलेस मैसेज आया कि अगर इस संवाद को पाकर चौबीस

घंटे के अंदर छपरा में योगदान नहीं देते, तो आप निलम्बित समझे जायेंगे। उन्होंने यथाशीघ्र अस्पताल के ही एक वरिष्ठ चिकित्सक को प्रभार दिया और दसवें दिन स्वयं गोपालगंज छोड़कर चले गये। मैं गोपालगंज में तब तक रहा जब तक मधुबनी मेरा स्थानान्तरण आदेश नहीं आया।

संभवतः 1992 की बात है। मैं सेवानिवृत्त होकर पटना में रह रहा था। रामाश्रम सत्संग मुजफ्फरपुर शाखा के आचार्य श्री नन्द जी का देहान्त हो गया था। अतः मुजफ्फरपुर के सत्संग का भार विनायक बाबू जो मोतिहारी में रहकर वहाँ कार्य देखते थे, को दे दिया गया। वह मोतिहारी से मुजफ्फरपुर आकर सत्संग कराते थे।

एक दिन पटना के एक भाई बब्बन बाबू सन्ध्या समय मेरे घर आये। मुझसे बोले–''चाचा जी एक शुभ समाचार दे रहा हूँ। पूज्य गुरुदेव जी ने आपको याद किया है तथा आपको बात करने के लिए कहा है।'' मैं दिल्ली पूज्य गुरुदेव के घर गया था। उन्होंने मुझसे कहा–''आप पटना जायेंगे तो डाक्टर साहब से कहेंगे कि वह मुझसे बात करेंगे।'' मैं उसी समय टेलीफोन आफिस गया और पूज्य गुरुदेव से बात किया। उन्होंने मुझसे कहा–''क्या आप मुजफ्फरपुर में रहना चाहते हैं? मैं चाहूँगा कि आप मुजफ्फरपुर में जाकर भाइयों की सेवा करें।'' इस सम्बन्ध में मैं बता दूँ कि बहुत पहले बातचीत के दौरान एक बार मैंने सेवानिवृत्ति के बाद मुजफ्फरपुर में रहने की इच्छा जताई थी क्योंकि वहाँ मैंने मकान बनवाने के लिए जमीन ले रखी थी। पूज्य गुरुदेव के आदेश के बाद मैंने अपने साथ किसी अप्रिय घटना या व्यवहार होने की आशंका जताई। उन्होंने कहा ''आप जायें वहाँ कोई भी आपका कुछ बिगाड़ नहीं सकेगा।'' उसके बाद लगभग एक वर्ष तक मैं पटना से हर शनिवार मुजफ्फरपुर जाया करता था और रविवार को सत्संग के बाद पटना लौट आया करता। जब मुझे मुजफ्फरपुर में मकान मिल गया तो मुजफ्फरपुर आ गया। वहाँ कुछ भाई मुझे विभिन्न प्रकार से तंग करने लगे। कुछ पहुँचे हुए भाइयों ने पत्र द्वारा भय भी दिखाया। पर गुरुदेव की कृपा से धीरे-धीरे सभी उपद्रव शांत हो गये। पग-पग पर आपका सहारा मुझे मिलता रहा और क्यों न मिलता। कभी आपने मुझे दो बातों के लिए सचेत जो किया था।

विचित्र स्वप्न

लक्ष्मी वर्मा
मोतिहारी

जीवन के रहस्य का अनुभव तब होता है जब वह साक्षात जीवन में सोते-जागते उठते-बैठते घटित होता है। ऐसी ही एक विचित्र घटना मेरे जीवन में भी घटित हुई। तब न तो मुझे पूज्य गुरुदेव मिले थे और न मैं गुरु कृपा के विषय में ही कुछ जानती थी। 1974 की बात है, दिन-तारीख तो मुझे याद नहीं है। सुबह-सुबह चार-पाँच का समय रहा होगा, मैंने स्वप्न देखा कि मैं एक जंगल में हूँ। जहां मैं खड़ी हूँ वहीं पास में रेलवे लाइन है। पास ही एक टूटी-फूटी झोपड़ी है जिसमें एक व्यक्ति कुर्ता-पाजामा पहने और शॉल लपेटे बैठे हुए हैं और मुझे बुला रहे हैं। कुछ दूरी पर मैं अपने लोगों के साथ खड़ी हूँ। मेरे मन में यह बात उठी कि ये बाबाजी एकान्त में मुझे बुला रहे हैं जरूर कुछ रुपया-पैसा मांगेंगे। कई बार उनके बुलाने पर भी जब मैं नहीं गई तब डाँटकर उन्होंने कहा-''बुलाने से नहीं आती हो, पछताओगी। जब तुम्हारी तीसरी संतान नहीं रहेगी। मैं ताबीज़ देता हूं, मेरी कचहरी में आ जाओ।'' उनके पास एक शीशा था जिस पर वह कुछ लिख रहे थे। शीशे पर कुछ हिसाब-किताब लिखकर उन्होंने मुझे बताया कि अमुक-अमुक वर्ष इक्कीस फरवरी को तुम्हारा तीसरा बेटा नहीं रहेगा। यह सुनकर मैं रोने लगी और उनके पास गई। रोते-रोते ही मैंने उनसे पूछा-''बाबा मैं क्या करूँ?'' तब उन्होंने कहा कि मेरे पास आओ तब मैं तुम्हें ताबीज दूँगा जिससे तुम्हें शान्ति मिलेगी।'' स्वप्न में ही मैं खूब रो रही थी। बाबाजी की बातें सुनकर मेरी आंखें खुल गई। मुझे रोते सुन मेरे पति, जो पास ही में सोये थे, उठ गये। बुरी तरह फूट-फूटकर रोते देख उन्होंने मुझसे रोने का कारण पूछा। बताने पर वह मुझसे नाराज हो गये। बोले तुम हमेशा खुराफात बातें सोचती रहती हो, सो जाओ, चुपचाप। इसके बाद मैं छिप-छिपकर पति से न जाने कितने साधु-फकीरों के पास व मज़ारों, मंदिरों में भटकती रही परन्तु कहीं भी मुझे संतुष्टि नहीं मिली।

मेरी बेकली और भटकन बढ़ती गई। सन् 1976 में होली के आठ-दस दिन पूर्व समस्तीपुर में मेरी ननद की लड़की की शादी थी। हम भी सपरिवार वहाँ गये थे। शादी के बाद वहां सत्संग का आयोजन था। सत्संग के विषय में मुझे कुछ भी ज्ञान

नहीं था इसलिए मैंने अपने नन्दोई से पूछा कि यह क्या हो रहा है? तब उन्होंने मुझे बताया कि सत्संग होना है और सत्संग क्या होता है इसके बारे में विस्तार से बताया। सत्संग में बैठने की मैंने उनसे आज्ञा मांगी और वहीं मैं भी बैठ गई। उस सत्संग में मेरे नन्दोई (श्री नन्द जी) व एक वरिष्ठ सत्संगी श्री गोपाल भाई साहब के साथ अन्य बहुत से भाई-बहन भी थे। पहले ही दिन सत्संग में मुझे इतना अच्छा लगा कि मेरा वहाँ से उठने का मन ही नहीं किया। दूसरे दिन हमें घर लौटना था। मेरा मन वहाँ घूम-घूमकर सत्संग में सम्मिलत होने का कर रहा था। और परिवार तो चला गया परन्तु पतिदेव को रुकने के लिए मैंने मना लिया। घूम-घूम करके समस्तीपुर में सत्संग करके जब हम मोतिहारी के लिए चलने को हुए तो स्टेशन पर मेरे नन्दोई के साथ गोपाल भाई साहब भी आये। उन्होंने मुझे तीन पुस्तक ''जीवन चरित्र'' 'नवनीत' व एक भजन की दी। मेरे पति ने उसे ब्रीफकेस में रख लिया। रास्ते में मैंने उनसे पुस्तक पढ़ने के लिए आग्रह किया तो उन्होंने मुझे जीवन चरित्र पढ़ने के लिए दिया। पुस्तक में जब मैंने फोटो देखा तो आश्चर्य से बोल पड़ी। अरे! यह तो वही बाबाजी हैं जिनको वर्षों पहले मैंने स्वप्न में देखा था। फोटो देखने के बाद मेरी व्याकुलता दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई। एक बार वही बात जब मैंने अपने नन्दोई साहब से कहा तब वह मुझे दिल्ली ले जाने के लिए बोले। कुछ दिनों बाद जब वह मुझे दिल्ली ले गये तो पूज्य सरदारजी भाई साहब से मिलकर मेरी सारी बेकली खत्म हो गई और स्वप्न साकार होकर सामने आ गया।

21 दिसम्बर 1976 को गुरु महाराज समस्तीपुर आये। जहां हमें दीक्षा मिली। मेरे पति को बाहर ले जाकर बोले - ''अब आपको डरने की कोई बात नहीं है। दुनिया की सबसे बड़ी शक्ति आपके साथ है।'' जनवरी में हम लोग फिर दिल्ली गये। मेरी इच्छा थी कि मैं अपने बेटे चुन्नू को भी साथ ले चलूँ और छोटे बेटे को लेकर चलूँ। लेकिन इन्होंने केवल बेटी और छोटे बेटे को ले चलने की आज्ञा दी। लौटते वक्त पूज्य गुरु महाराज ने एक सेब दिया और बोले यह छोटे बेटे को दे देना, सब ठीक हो जायेगा। मेरी समझ में कुछ नहीं आया और बोली छोटा बेटा तो यह है। तब आप बोले, ''अरे! नहीं छोटा बेटा आप घर छोड़ आयी हैं।'' उसे दीजिएगा। घर आने पर उनके आज्ञा का उल्लंघन करके सेब का दो भाग कर दोनों बेटों को दे दिया। वैसे तो बेटा अब ठीक है। उनकी कृपा से अच्छी नौकरी भी कर रहा है।

असीम कृपा

मेरा पुत्र राकेश 21 फरवरी 1977 को इण्टर साइंस का फार्म भरने के लिए मुजफ्फरपुर जा रहा था। अचानक बस गन्ने से भरी ट्रक से भिड़ गई। बस ट्रक की

इस दुर्घटना में मेरे बेटे राकेश को काफी चोट आई। जो जहाँ कहता वहीं दिखाती परन्तु कोई लाभ न हुआ बल्कि हाथ के घाव से बदबू आने लगी। तब पटना के पी.एम.सी.एच. में दिखाया जहाँ डाक्टर ने उसे भर्ती कर लिया और उसके हाथ का ऑपरेशन हुआ। मैं और राकेश अस्पताल के निजी कक्ष में सोये हुये थे। अचानक रात को लगभग एक बजे वह बड़ी जोर से चिल्लाकर रो पड़ा और बोला–''अम्मां कोई बड़ा ही भयंकर आदमी मेरा गला दबा रहा है।'' समझा-बुझाकर मैंने उसे फिर सुलाया। थोड़ी देर बाद फिर वह उसी प्रकार डरकर उठ गया। मैंने गुरु महाराज की फोटो उसके तकिया के नीचे रख दिया और उसे समझाया कि गुरु महाराज को याद करो और फिर उसे सुला दिया। सुबह उठने पर उसने मुझे बताया कि अम्मां गुरु महाराज के फोटो रखने के बाद जब मैं सोया तो जब-जब उस भयंकर आदमी ने मेरा गला दबाना चाहा तकिया के नीचे से दो बड़े-बड़े पैर निकल कर उसे मारकर भगा देते थे।

इस घटना से हम लोग बहुत डर गये। पटना वाले हमारे देवर उमाकांत जी बराबर आते थे। उन्होंने हमसे कहा कि उसके पास शज़रा रख दें और आप दोनों समय पढ़ें भी। शज़रा की जानकारी मुझे नहीं थी। इस घटना के विषय में मैंने पूज्य गुरु महाराज को लिखा। जल्दी ही उनका उत्तर आया कि आप दोनों समय शज़रा पढ़ा करें और जरूरी नहीं है कि आसन लगाकर बैठें। उचित समझे तो किसी अच्छे पंडित को बुलाकर कुछ पूजा करा दें। शज़रा पढ़ने और ध्यान लगाने के लिए आसन लगाना जरूरी नहीं है। काम में व्यस्त रहते हुए भी उसकी याद बनी रहे। ईश्वर की याद में रहें, वह दयानिधि है। उसकी असीम कृपा सदैव बरसती रहती है। उसको ग्रहण करना ही हमारा अभ्यास है।

यह घटना ग्वालियर भंडारा मई 1983 की है। मेरे पति श्री विनायक वर्मा का स्थानान्तरण उस समय पूर्णिया हो गया था। बच्चों की पढ़ाई और गुरु महाराज के आदेशानुसार मैं गोपालगंज में ही रही। बच्चे अपने पापा के बिना नहीं रहना चाहते थे। अतः उनकी जिद के कारण गोपालगंज के घर में ताला लगाकर मैं पूर्णिया आ गई। सरकारी आवास खाली न होने के कारण किराये का मकान कोसी कालोनी में लेकर रहने लगी। मकान बड़ा और दो मंजिला था। साथ में बहुत बड़ा आंगन। इसमें दो परिवार बहुत पहले से रहते थे। कुछ दिन बाद आंगन में अक्सर ढेला-पत्थर कोई फेंकने लगा। इन बाधाओं के होते हुए भी हम लोग उसी में रहते रहे। ग्वालियर में भंडारा होना था। हम लोगों को पटना जाकर 7 जून 1983 को प्रिय उमा बाबू और अन्य सत्संगी भाई-बहनों के साथ ग्वालियर जाना था। छह जून 1983 को शाम को मेरे पति ऑफिस से आकर बैठे थे। उन्होंने मुझे पाँच सौ रुपये दिये खर्च के लिए। मैं रुपया हाथ में लिये थी; तभी अचानक पंद्रह-बीस आदमी घर में घुस आये। उनमें से कुछ

लोग पास के घर में एक सत्संगी भाई मधुबनी के थे मिश्रा जी उनके घर में घुस गये। भंडारे में जाने के लिए दो-तीन बैग में हमने सामान रखकर तैयारी कर ली थी। घर में मेरे तीनों बेटे-बेटी, बहन की बेटी और काम करने के लिए दो बड़े-बड़े आदमी भी थे। घर में घुसने के साथ ही एक डाकू ने मेरे पति के ऊपर कट्टा तान दिया और एक ने उनके गले पर भाला लगा दिया। दूसरे डाकू सामान निकालने के लिए बोलने लगे। हमने कहा कि हम तो सरकारी कर्मचारी हैं भला हमारे पास कहाँ से माल होगा? फिर उन लोगों ने जो थोड़े-बहुत जेवर पहने थे सब उतरवा लिए और रुपये लेकर हमें धमकाकर चले गये। गुरु कृपा देखिए कि इनके ऑफिस बैग में हजार रुपये रखे थे वह बच गये। उसी बैग में दो-तीन सौ रुपये रखे थे वह उसने निकाल लिया। गुरु जी की कृपा ऐसी थी कि कुछ जेवर जो आलमारी में रखे थे वह सब बच गये। उन्होंने आलमारी खोली ही नहीं। ऊपर के हिस्से में जो किरायेदार थे वह पुलिस विभाग में थे; उनका घर खुलवाने के लिए मेरे पति को ले गये। इन्होंने दो-चार बार आवाज दिया पर दरवाजा नहीं खुला और पुलिस आ रही है ऐसा आभास पा डाकू सब भाग गये।

इस अप्रत्याशित घटना से हम लोग काफी परेशान हो गये। मेरे पति तो एकदम शून्य से हो गये थे। रात को पुलिस आई जो उसे काग़जी कार्रवाई करनी थी करके चली गई। टेलीफोन की तो उस समय कोई सुविधा न थी। समय से हम लोगों के पटना न पहुँचने से वह लोग बहुत परेशान थे।

पूज्य भंडारी भाई साहब की कृपा से हमने एक दूसरे मकान में अपना सारा सामान रख दिया। दोनों बच्चों और सामान की देख-रेख करने के लिए आश्वासन देकर दोनों बेटियों के साथ पटना भेज दिया। हम लोग पटना देर से पहुँचे इसलिए और सब लोग निश्चित समय से चले गये। हम लोग बिना रिजर्वेशन के ग्वालियर के लिए ट्रेन में बैठे। दोनों बेटियों के साथ मैं एक किनारे खड़ी थी। चेकिंग के लिए जब टी.टी. आया तो उसने पूछा-''आप लोग यहाँ क्यों खड़ी हैं? क्या रिजर्वेशन नहीं है?'' हमने अपनी परेशानी बताकर एक बर्थ के लिए उससे प्रार्थना किया। मेरे प्रभु की कृपा हुई। टी.टी. ने हमारे लिए बर्थ का इंतजाम कर दिया। वाह रे, मेरे गुरु! आप कहाँ नहीं हैं? हर जगह तो हमारी रक्षा करने के लिए आ जाते हैं।

दूसरे दिन ग्वालियर पहुँचकर जैसे ही हम आपके पास गये सर्वज्ञाता ने देखते ही कहा-''आप लड़कर भी भंडारे में पहुंच ही गईं। खूब लड़ी मरदानी, वह तो झांसी वाली रानी थी।'' हजारों मील दूर बैठे गुरु महाराज को अपने बच्चों पर होने वाले आघात का आभास कैसे हो गया, यह तो वही जानें। बातचीत के दौरान मैंने बीच में रोकर उनसे कहा-''भाई साहब! अब तो सब्र का बांध टूट गया, अब सहन भी नहीं होता।''

न जाने क्या हुआ और क्यों उनका चेहरा तमतमा गया लेकिन बोले–''गुरु महाराज कृपा करेंगे'' थोड़ी देर बाद बोले जाइये ग्वालियर घूम आइये। ग्वालियर हम लोग घूम चुके थे। फिर भी उनकी आज्ञा मानकर दुबारा घूम आये। जिस दिन ग्वालियर से हम लोगों को चलना था उसी दिन हम लोगों को बोले कि आगरा घूमते हुए पटना जाना। उनके आज्ञानुसार पटना हम लोग आगरा घूमते हुए गये। पटना से पूर्णिया जाते समय रास्ते में एक जगह जब चाय पानी के लिए रुके तो वहाँ एक परिचित मिल गये जिनसे मालूम हुआ कि पूर्णिया से मेरे पति का स्थानान्तरण मोतिहारी के लिए हो गया है। यह आश्चर्य से उन सज्जन को देखते रहे कि यह असम्भव से सम्भव कैसे हुआ। हम लोग अंदर ही अंदर गुरु कृपा की वर्षा में भीग गये। मन प्रफुल्ल हो गया। हर बाधाओं को भोगकर इन्होंने मोतिहारी पदभार संभाल लिया। ऐसे हैं हमारे गुरु महाराज जिनकी छत्रछाया में हर अनहोनी होनी बन जाती है। मेरी प्रार्थना है जैसे मेरे ऊपर उनकी असीम कृपा है वैसी ही कृपा प्रभु सब पर करें।

भक्त वत्सल श्री राम

हरि शंकर तिवारी
सासाराम

सन् 1992 की घटना है। सिकन्दराबाद भंडारे में जाने के लिए मैंने आरक्षण करा लिया था। दैवयोग से उसी समय मेरे पिताजी की तबियत खराब हो गयी। उनको बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय अस्पताल में भर्ती करा दिया था। जब उनको अस्पताल से छुट्टी मिल गयी उनको घर पहुँचाना असम्भव था। यदि उनको लेकर मैं गांव जाता तो मुझे अपनी ट्रेन छोड़नी पड़ती। इधर मन भंडारा छोड़ने को तैयार नहीं था। न जाने किस प्रेरणा से प्रेरित होकर मैंने मां से कहा–''मां दो दिन की तो बात है। आप पिताजी को लेकर यहीं अस्पताल के बरामदे में रहो, भंडारे से लौटकर मैं आप लोगों को ले चलूंगा।'' यह कह कर उन लोगों को वहीं छोड़कर मैं सिकन्दराबाद के लिए चला गया। जब मैं वहाँ पहुँचा उसी वक्त पूज्य गुरुदेव देहली से आये थे। मुझे देखते ही पूछे ''आप आ गये।'' मैं चुपचाप खड़ा रहा। पूज्य दिनेश बाबू ने मेरे पिताजी की बीमारी और उन्हें अस्पताल के बरामदे में ही छोड़कर चले आने के विषय में सविस्तार बता दिया। सुनकर उन्होंने मेरी ओर देखकर कहा–''चलो कोई बात नहीं।'' भंडारा समाप्त होने के बाद जब मैं बनारस पहुँचा तो मां-पिताजी को अस्पताल के बरामदे में न देखकर बहुत घबड़ाया और सब जगह उन्हें ढूंढ़ा। यहाँ तक कि मैं श्मशान घाट जाकर रजिस्टर तक देख आया पर कुछ पता न चला। दुखित होकर चिन्तित मैं घर गया। गुरु की अद्भुत कृपा देखकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा और मेरी आंखों से आंसू बहने लगे, पिताजी लाठी के सहारे दरवाजे पर टहल रहे थे। मुझे देखते ही उन्होंने प्रसाद मांगा। प्रसाद खाकर बोले–''तुमने बहुत अच्छा किया कि भंडारे में चले गये। '' दीनबन्धु पूज्य गुरुदेव की कृपा से वह दो वर्ष तक सकुशल रहे और गुरुदेव के पास जाने के लिए बराबर प्रोत्साहित करते रहे।

सन् 1973 में पिताजी के सेवा-निवृत्त होते ही घर में एकदम से बीमारी और आर्थिक परेशानियों ने हम सब पर हमला कर दिया। इस आघात को पिताजी सह न पाये और बीमार रहने लगे। मुझे कोई संतान न थी इसलिए मेरी पत्नी भी बहुत उदास रहती थी। एक भाई को बोन टी.बी. था और दूसरे

भाई को हृदय रोग था। इस तरह चारों ओर से घर के परिजन परेशानियों से घिरे हुए थे। मैं शिवजी की पूजा करता था, और कई सालों से कांवर लेकर बाबाधाम जाता था परन्तु शान्ति मन में न थी। अंदर ही अंदर मैं बहुत परेशान रहता था। मेरे ही विभाग के पूज्य भगीरथ पंडित जी के घर सत्संग था। दिनेश बाबू सत्संग करा रहे थे। सत्संग में मैं भी सम्मिलित हुआ और मुझे अच्छा भी बहुत लगा। सत्संग समाप्त होने के बाद भगीरथ पंडित ने मेरा परिचय कराया और मेरी पारिवारिक परिस्थितियों के विषय में उन्हें बताया। वह दोनों मुझे घर तक छोड़ने आये। दिनेश बाबू प्रतिदिन मेरे घर आते और सब भाइयों के घर मुझे लेकर जाते। मुझे बनारस लेकर गये जहाँ पूज्य सच्चिदानंद जी के घर सत्संग था। पूज्य गुरुदेव वहाँ पधारे थे। सत्संग हो रहा था। मौन की साधना चल रही थी। मेरा मन उनसे मिलने के लिए बेचैन हो रहा था। खड़ा होकर एकटक उनका मुंह देख रहा था। सत्संग के समाप्त होने के पश्चात् पूज्य गुरुदेव ने मुझे अपने पास बुला लिया। मैं रो रहा था। एकाएक पूज्य गुरुदेव मुझे अपने गोद में ले लिए। अब तक जो मैं कुछ बोल नहीं पा रहा था, बोला–''आप मुझे अपनी शरण में ले लें। मैं बहुत दुखी हूं।'' पूज्य गुरुदेव ने बनारस के पूज्य जय नारायण गौड़ साहब को बुलाकर मेरा हाथ उनके हाथ में देकर बोले, ''आप इन्हें अपने घर ले जाइये। सुबह सत्संग में लेकर आइयेगा।'' मैं सुबह तैयार था कि देखा पूज्य गुरुदेव सतीश भाई साहब (लखनऊ वाले) को लेकर जयनारायण गौड़ भाई साहब के घर पधारे। मैं वहीं घूम रहा था। उनको देखते ही मैं उनके चरणों में गिर पड़ा। मेरी दीक्षा 31-12-80 में हुई। दीक्षा के बाद धीरे-धीरे मेरे अंदर की परेशानियों की जगह एक अपूर्व शांति का विस्तार होने लगा। मैंने अनुभव किया कि धीरे-धीरे मेरे घर की परेशानियां भी कम होती जा रही हैं।

वसन्त भंडारा 1981 में भभुआ में हुआ। समाप्ति के दिन सब लोग गुरुदेव से मिल रहे थे। भाइयों ने मुझे अबीर से रंग दिया था। गुरुदेव के श्री चरणों में मैं वैसे अबीर से रंगा हुआ होते हुए गिर पड़ा। उन्होंने मुझे उठाकर अपने छाती से लगा लिया। मुझे हनुमान जी कहकर बहुत देर तक छाती से लगाये रहे। मुझे बड़ा सुकून मिल रहा था। मैं रो रहा था और पूज्य गुरुदेव भी रो रहे थे। वह रोते हुए बोले–''तू चिन्ता क्यों करता है? मैं हूँ न।'' उनसे इतना सम्मान पाकर मेरी प्रसन्नता का पारावार न रहा। उस दिन से सभी भाई मुझे हनुमान कहने लगे। पूज्य गुरुदेव की कृपा तले मेरी आध्यात्मिक उन्नति तो हुई ही मेरा संसार भी बड़े सुचारू रूप से चलने लगा। यह उनकी कृपा नहीं तो और क्या है? जो उन्होंने दिया वही तो ईश्वर देता है। क्या अंतर है? उन तक मुझे पहुँचाने की जो कृपा श्री भगीरथ पंडित व दिनेश बाबू ने किया उसे क्या मैं कभी भूल सकता हूँ? उन्होंने तो मुझे साक्षात भगवान का दर्शन

करा दिया। पूज्य गुरुदेव की कृपा हर परेशानी में मुझे छाया की तरह ढंक लेती है। पता ही नहीं चलता कि मुझे कोई परेशानी भी हुई। मुझे ऐसा लगता है कि कोई हर वक्त मेरे साथ है। कितना भाग्यशाली हूँ मैं। जय हो, जय हो।

प्रेम के सागर

जीवन में कभी कुछ ऐसा घट जाता है जब मानव चकित हो जाता है। अवाक् सोचता है मानव शरीर में कृपा करने वाले असहाय के सहायक दया सागर गुरु ही तो साक्षात दयानिधि हैं। क्या परमात्मा इनसे भिन्न कोई और है? मेरे जीवन में तो ऐसी कितनी ही घटनायें हुई हैं जिससे मेरा विश्वास दृढ़ हो गया कि परमात्मा अलग कुछ भी नहीं हैं। गुरु ही है जो हर वक्त बेवक्त अपने शिष्यों के लिए प्रभु के रूप में खड़े होते हैं।

मेरा छोटा भाई रामलखन बचपन से हृदय रोग का मरीज था। बी.एच.यू. के डाक्टर लहरी ने मुझसे 1980 में ही कहा कि अगर तुम्हारी कोई पैरवी दिल्ली में हो तो अपने भाई को बचा सकते हो। बिना आपरेशन के तुम कुछ नहीं कर सकते। दवा करते रहो। मैं कोई बहुत बड़ा अफसर या व्यापारी तो था नहीं। साधारण परिवार का था। दिल्ली में मेरी कोई पैरवी भी नहीं थी। मेरे सामने विकट समस्या थी। पिता जी जीवित थे और डाक्टर की बात सुनकर बहुत दुखी हुए। उनको लगा कि उनके सामने ही उनका बेटा नहीं रहेगा। इस सोच ने उनको बीमार बना दिया।

दिसम्बर 1980 में पूज्य गुरुदेव बनारस आये। उन्होंने पूज्य दिनेश बाबू को अस्पताल भेजा। इस बात की मुझे कोई जानकारी नहीं थी। पूज्य गुरुदेव ने दीक्षा देने के बाद मुझसे कहा कि आप डाक्टर से दिल्ली के लिए रेफर कराकर टिकट करा लें। मैंने डाक्टर से कहा और उन्होंने रेफर कर दिया। दयानिधान की कुछ ऐसी कृपा हई जिसे लिखने में मेरा हाथ काँप रहा है। मेरे मन की ऐसी हालत है कि बस आँख बंद कर उन्हीं में डूब जाऊँ। मन भर गया। भावों से मैं शब्दहीन हूँ, कैसे वर्णन करूं अपनी मनःस्थिति का। मैंने गुरु महाराज से निवेदन किया कि मेरे पास न तो इतना पैसा है और न कोई पैरवी, मैं दिल्ली जाकर क्या करूंगा। रात का समय था। पूज्य गुरुदेव ने कहा आप दिल्ली लेकर आयें तो सही। उनके आदेशानुसार मैं भाई को लेकर दिल्ली गया। अपने निवास स्थान पर आपने मेरा परिचय पूज्य बी.एम. शर्मा जी से कराया और मुझसे बोले–"आप कुछ न सोचे, सब मेरे ऊपर छोड़ दें।" इतना ही नहीं मेरे प्रभु मुझे पूजा के कमरे में ले गये और बोले दिल्ली के किसी भाई बहन से कुछ नहीं कहेंगे, जो जरूरत हो मुझसे कहेंगे।

पूज्य बी.एम. शर्मा सी.पी.डब्ल्यू.डी. में लेखपाल थे। मेरे भाई को कुछ दिनों तक अपने पास रखे और उसको दीक्षा भी दिला दिये। उन्होंने जी.बी. पंत अस्पताल में भाई को डाक्टर गम्भीर से दिखाया। डाक्टर गम्भीर ने डाक्टर सत्संगी के पास आपरेशन हेतु परामर्श के लिए भेज दिया। पूज्य गुरुदेव की कृपा मेरे ऊपर कितनी है मैं शब्दों से बता नहीं सकता। दोनों समय मुझे यदि नहीं देखते तो परेशान हो जाते और शर्मा भाई साहब से पूछते। एक दिन शर्मा जी ने मुझसे यह बताया कि गुरुदेव तुम्हें न देख कर परेशान हो जाते हैं। कहते हैं यदि मैं उसकी सहायता नहीं करूँगा तो उसका परमात्मा पर से विश्वास उठ जायेगा और वह टूट जायेगा। शर्मा जी के मुख से यह सुनकर मैं एकदम रो पड़ा। मेरे प्रभु कितने दयालु हैं। मुझ अकिंचन पर कितना प्यार है। इस बात से मैं इतना व्यथित हुआ कि एक दिन गुरुदेव के सम्मुख मैं फूट-फूटकर रो पड़ा। मुझसे अधिक तो मेरे भाई और मेरे दुख से मेरे प्रभु दुखी थे। मैं उनके सम्मुख सचमुच अपने को रोक न सका। उन्होंने मुझे उठाकर मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए कहा-''तिवारी जी! अगर मैं चिन्ता नहीं करूँगा तो आप कहाँ जायेंगे। घर-द्वार छोड़कर आप यहाँ मेरे भरोसे आये हैं। मेरे आसरे आप हैं तो मैं किसके सहारे आपको छोड़ दूँ।'' मुझे धैर्य बंधाते हुए बोले चिन्ता मत करिये। सब ठीक हो जायेगा।

परम पूज्य गुरुदेव की कृपा हुई। डा. डी.के. सत्संगी ने 1999 में जी.बी. पंत अस्पताल में बेड दे दिया। शर्मा जी रोज आफिस जाते समय अस्पताल आते और भाई का समाचार गुरुदेव को जाकर बताते। कुछ महीनों के बाद डाक्टर ने मुझसे कहा कि भाई इतना दुबला है कि इसका आपरेशन करना खतरे से खाली नहीं है। मैंने पूज्य गुरुदेव से डाक्टर की बात बतायी। आपने मुझसे कहा कि ''आप रामलखन को समझाइये।'' मैंने रामलखन से जब कहा कि डाक्टर कह रहे हैं कि आपरेशन करने से जान जाने का खतरा है। अतः आपरेशन न कराना ही उचित है। मेरा यह कहना था कि वह मेरे ऊपर बरस पड़ा और चिल्ला कर बोला-''आप तो चाहते हैं कि मैं मर जाऊं ताकि मेरे हिस्से का खेत आप ले लें। आप यहाँ से चले जाएं। मेरा आपरेशन होगा और यहीं मेरी सांस अस्पताल में ही निकलेगी। आप खुद नहीं चाहते कि मैं स्वस्थ होऊं।'' उसके इन कठोर शब्दों से मेरा हृदय विदीर्ण हो गया और मैं रोने लगा। मरता क्या न करता। मैंने जाकर गुरुदेव से कहा कि प्रभो! वह मेरे कहने से नाराज हो रहा है, और आपरेशन करायेगा ही। उन्होंने कहा, ''अधिक जिद करना ठीक नहीं है। डाक्टर जब मना कर रहा है तब उनकी बात तो माननी ही पड़ेगी। मैं तो डाक्टर नहीं हूं। डाक्टर वह है और आपरेशन भी वही करेगा। आप पुनः समझायें।'' मैं क्या कहता, रोने लगा। मेरी ओर देखकर मेरे कृपा सागर अपने को रोक न सके। मुझे गले से लगाकर बोले-''अच्छा, मैं हूँ न, आप उदास न हों।'' पूज्य गुरुदेव से मैंने अर्ज

किया–''प्रभु, मुझसे अब और बर्दाश्त नहीं हो रहा है। मन करता है कि आत्महत्या कर लूं।'' मेरा इतना कहना था कि वह मेरा सिर सहलाने लगे और बोले–''डाक्टर से आपरेशन करने के लिए बोलिए, आगे जो होगा देखा जायेगा।'' दूसरे दिन डाक्टर से मैंने आपरेशन करने के लिए कह दिया। शाम को गुरुदेव ने मुझे पूज्य कृष्ण मुरारी बाबू के घर जाने को कहा। मैं गुरुदेव के आज्ञानुसार पूज्य कृष्ण मुरारी बाबू के घर गया। सारा वृतांत मैंने उनको सुना दिया। उन्होंने अपने बड़े भाई प्रोफेसर पी.एन. श्रीवास्तव से, जो पहले जे.एन.यू. के वी.सी. थे और वर्तमान में योजना आयोग के सदस्य (स्वास्थ्य सेवा) थे, से फोन पर बात की। क्या बात हुई यह मैं नहीं जानता परन्तु दूसरे दिन सबेरे मेरे पूज्य गुरुदेव के पास आये और उनको गुरुदेव ने अस्पताल भेजा, साथ में मैं भी गया। कृष्ण मुरारी बाबू ने भी रामलखन से बात की परन्तु कोई निष्कर्ष नहीं निकला। रात को 11 बजे डॉक्टर ने मुझे अपने कमरे में बुलाया और सारी रिपोर्ट देते हुये बोले कि किसी और डॉक्टर को दिखा लीजिये। पूज्य डॉ. शक्ति बाबू को पहले भी बनारस का रिपोर्ट दिखाया था। यह रिपोर्ट भी दिखाया। उन्होंने भी वही बात कही जो डॉक्टर डी.के. सत्संगी ने कहा था, परन्तु रामलखन था कि अपनी ही जिद पर अड़ा था। हार मानकर मैंने डॉक्टर सतसंगी से ऑपरेशन करने के लिये कह दिया। मेरी बात सुनकर डॉक्टर बड़ा नाराज हुआ। मुझे मारा नहीं बाकी सब कुछ सुना दिया। यहाँ तक कि कहा कि ऐसा करो पांच गज कफन एवं एक टिक्टी लेकर तैयार रहो। रामलखन के जिद से हम सब लोग विवश थे। मैंने हाथ जोड़कर डॉक्टर से कहा कि साहब आप ऑपरेशन करें बाकी मेरे गुरु पर छोड़ दें। डॉक्टर तैयार हो गया। दस बोतल रक्त के प्रबंध के लिये मुझसे बोला। रक्त के लिए मैंने डॉक्टर शक्ति को फोन किया। वह बोले मैं और मेरी पत्नी तैयार हैं। डॉक्टर से टाईम लेकर मुझे सूचित करें। मैंने इस बात को पूज्य गुरुदेव से कहा कि डॉक्टर ने दस बोतल रक्त के लिये कहा है। डॉक्टर शक्ति और उनकी पत्नी तो रक्त देने को तैयार हैं। बाकी आठ बोतल का प्रश्न है। सुनते ही गुरुदेव बोले, आपने उनसे क्यों कहा मुझसे कहना चाहिये था। चिंता मत करें। मेरे रहते कोई दिक्कत नहीं होगी, सब हो जायेगा। रक्त के लिये मैं हजारों आदमी खड़ा कर दूँगा। डॉक्टर तैयार हो गया, कहा कि बस अब सब मुझ पर छोड़ दो।''

दूसरे दिन प्रातः मुझे और शर्मा जी को आज्ञा दिये कि आप दोनों रक्त दे दें। बाकी ऑपरेशन के समय दिया जायेगा। हम दोनों ने रक्त दे दिया। जो डॉक्टर रक्त ले रहा था उसने कहा कि बाकी रक्त ऑपरेशन के समय दे देना। डॉक्टर ने कहा कि अब केवल दो बोतल और रक्त आप लोगों को देना है। प्रभु की इस कृपा को याद कर अब भी मैं रोमांचित हो जाता हूँ। उनकी असीम दया से मेरा हृदय भरा हुआ है।

शाम पांच बजे जब मैं गुरुदेव के पास गया और बताया कि अब केवल दो बोतल और रक्त देना है तब आपने दोनों हाथ ऊपर करके कहा–''गुरुदेव की बड़ी कृपा है।'' जून का महीना था डॉक्टर ने ऑपरेशन की तिथि निश्चित कर दी। मुझे बड़ी घबराहट हो रही थी।

बुधवार का दिन था। मैं पूज्य गुरुदेव के घर पर बैठा था। मेरा मुंह लगातार वह देख रहे थे। मैंने अनुभव किया कि मेरे दुःख से वह भी बहुत दुःखी हैं जिसे लेखनी द्वारा मैं वर्णित नहीं कर पा रहा हूँ। अचानक मुझे याद आया। मैंने कहा–''पिताजी! आज उसका ऑपरेशन है। मुझे वहाँ रहना जरूरी है। कुछ कागजात पर मुझे दस्तखत करना पड़ेगा।'' मेरी पीठ थपथपाते हुये बोले–''मैं पूजा घर में रहूँगा। माताजी से बोले कि कोई मिलने आये या फोन आये तो मुझे मत बुलाइयेगा।'' जब मैं चलने को हुआ तो मुझे बुलाकर बोले कि यह कुछ लोगों का आरक्षण कराना जरूरी है, करा दो तब अस्पताल जाओ।'' मैं मन ही मन बड़ा घबरा रहा था कि मुझे अस्पताल पहुँचना है। इधर पूज्य गुरुदेव मुझे टिकट आरक्षण कराने के लिये भेज रहे हैं। क्या करूं, देर हो जायेगी। मेरी उलझन को वह समझ गये, बोले–''जल्दी जाओ, सोच क्या रहे हो।'' मैं जब स्टेशन गया तो देखा कि एक सत्संगी भाई वहाँ पहले से खड़े हैं। मैंने उनसे कहा। वह अपने एक रिश्तेदार जो रेलवे में बड़ा बाबू थे, के पास ले गये।

जा पर कृपा राम की होई।
ता पर कृपा करे सब कोई।

फौरन टिकट मिल गया। मैं दौड़ता हुआ आया और टिकट उन्हें दिया। गुरुदेव मुझसे बोले कि आप ऑपरेशन के बाद दो बजे मेरे पास आइयेगा। मैं आपका इंतजार करूँगा। जब मैं अस्पताल गया तो देखा भाई बेड पर नहीं है। आस-पास के लोगों से मालूम हुआ कि डॉक्टर साहब उसे लेकर ओ.टी. में गये हैं। मुझे घबराहट हुई कि अभी दो बोतल रक्त और देना है। बिना रक्त दिये ऑपरेशन कैसे होगा। डरते-डरते मैं जहां रक्त दान किया जाता है, वहाँ गया। मुझे देखते ही डॉक्टर ने कहा–''रक्त का प्रबंध अस्पताल से हो गया, अब आप जाइये।'' पूज्य गुरुदेव की असीम कृपा पाकर मैं फूट-फूटकर रोने लगा। करीब एक बजे डॉक्टर साहब स्ट्रेचर के साथ बाहर आये। मैंने डॉक्टर साहब को धन्यवाद दिया। वह बोले, ''धन्यवाद उनकी करो जिसने उसका ऑपरेशन किया है।'' ऐसे हैं मेरे प्रभु (कुछ न बोल कर भी सब तरह से मेरी सहायता किये)। पग-पग पर मिल रही सहायता से तो मेरा दृढ़ निश्चय हो गया कि यह और कोई नहीं साक्षात् ईश्वर हैं।

कहाँ तो उसके बचने की आशा नहीं थी और अब उसका दो-दो बार हृदय का ऑपरेशन हो गया है। वह ठीक है। मेरी माताजी-पिताजी सदैव डरते थे कि उनका

बेटा उनके जीवन काल में चला जायेगा, यह पूज्य गुरुदेव की ही तो कृपा है कि भाई ठीक है। माता-पिता, मेरा भतीजा व पत्नी सब स्वर्ग सिधार गये। निश्चिंत होकर भाई सब जगह जाता है। अकेले अपना घर-परिवार चला रहा है। हमारे पूज्य गुरुदेव उसकी रक्षा बराबर कर रहे हैं। भगवान कितने विवश थे जब डॉक्टर ने इसके स्वास्थ्य के विषय में बताकर ऑपरेशन करने से मना कर दिया था यह कह कर कि इसका बचना मुश्किल है। तब पूज्य गुरुदेव ने इसे बहुत समझाया कि ऑपरेशन न कराओ दवा खाते रहो तो मेरा भाई उन पर भी बिगड़ गया था, बोला-''आप जो कष्ट मुझे है उसे क्या समझें? दवा खाकर तिल-तिल मरना मैं नहीं चाहता। क्या हुआ ऑपरेशन करते हुये अगर मैं मर जाऊंगा। आप मना कर रहे हैं तो मेरे कष्टों को दूर कर दीजिये। अन्यथा मुझे मरने दीजिये।'' उसके इस चुनौती भरे वाक्यों से गुरुदेव अपलक उसे देखते हुये मुस्कुरा दिये अैर मुझसे बोले-''ठीक है ऑपरेशन करने दीजिये, जैसी कृपा गुरुदेव करें।'' भाई के अशिष्ट स्वभाव से तो मैं परिचित था, किन्तु वह पूज्य गुरुदेव से भी अशिष्टता से बोलेगा, मुझे उम्मीद न थी। मैं मन ही मन बहुत दुःखी हुआ। मेरी मनःस्थिति ही ऐसी थी कि मैं कुछ बोल न सका। फिर क्षमा कैसे माँगता? आप मेरी मनःस्थिति को भाँप गये। मेरे प्रभु मेरे सर पर हाथ रखते हुये बोले-''कोई बात नहीं।'' जब भी इन बातों को मैं सोचता हूँ तो बराबर यही ख्याल आता है कि प्रभु अपने भक्तों की हर चुनौती को कैसे स्वीकार करते हैं। होनी भी अनहोनी हो जाती है। यही तो भगवान करते हैं।

गुरु मिले अविनाशी

नगीना श्रीवास्तव
लहरिया सराय

हम संसारी लोगों को यदि किसी महान संत के चरण-शरण का सहारा मिल जाये तो लगता है जैसे दुनियां की सारी नेमतें ही मिल गयीं। मैं बड़ी भाग्यशाली हूँ, मेरी भाभी व भाई डॉक्टर मुद्रिका प्रसाद व लक्ष्मी बहन पूज्य गुरुदेव के पास देहली सत्संग के लिये जाया करते थे। वह लोग गुरुदेव की बराबर चर्चा करते रहते थे। उनकी बातों से प्रभावित होकर उनके दर्शन करने की जिज्ञासा मेरे मन में बलवती होने लगी। एक बार मैं अपने डॉक्टर भाई के घर गोपालगंज गई हुई थी। उस समय लक्ष्मी बहन भी गोपालगंज में ही थीं। उनके पति श्री विनायक प्रसाद वर्मा सिंचाई विभाग में इंजीनियर थे। अक्सर मैं उनके घर मिलने जाती थी। वहां भी वह पूज्य गुरुदेव के विषय में चर्चा किया करती थीं। एक दिन उन्होंने मुझे एक रजिस्टर पढ़ने के लिये दिया। उस रजिस्टर में पत्र और पत्रोत्तर ही भरे थे। उसको पढ़कर मैं गुरुदेव के दर्शन के लिये व्यग्र हो उठी, परन्तु परिस्थिति कुछ ऐसी रही कि देहली मेरा जाना न हो सका। एक दिन सीता भाभी का पत्र आया कि पूज्य गुरुदेव गोपालगंज आ रहे हैं। आप आ जायें तो उनसे भेंट हो जायेगी। मैं गोपालगंज गई और उनके दर्शन करके धन्य हो गई। तीन दिन सत्संग में भी सम्मिलित हुई। सत्संग स्वर्गीय विनायक भाई साहब के घर हुआ। मैं लक्ष्मी बहन के घर ही सत्संग के दरम्यान रुक गई थी। अचानक एक दिन मैं बाथरूम में फिसल कर गिर गई। अत्यधिक कष्ट होने के कारण भईया मुझे अपने घर ले गये। वहाँ चेकअप के बाद पता चला कि पसली में क्रैक है। हल्का प्लास्टर लगा दिया। दूसरे दिन सवेरे होम्योपैथिक दवा लेकर पूज्य गुरुदेव मुझे देखने आये। मुझे आशीर्वाद रूपी दवा देते हुये बोले-''यह दवा खाओ, ठीक हो जाओगी।'' उनके प्रेम के आगे मैं भाव-विभोर हो गई। दवा के साथ जो प्रेम व आशीर्वाद उनसे मुझे मिला मैं लिख नहीं पा रही हूँ। मेरे पास प्रायः शब्दों का अभाव है। गोपालगंज सत्संग के बाद तो आसपास जहाँ भी सतसंग होता मैं बराबर जाने की कोशिश करती और जहाँ तक होता जरूर जाती। मेरे साथ मेरे पतिदेव भी जाते। मेरे पति श्री शम्भूनारायण जी भी प्रथम दर्शन में ही गुरुदेव के परम भक्त हो गये और दीक्षा

लेकर ही घर आये। गुरुदेव ने मेरे पति के हाथ मेरे लिये दवा भेजी जिसके सेवन से मेरा कष्ट शीघ्र ही दूर हो गया।

मुझे दीक्षा काफी दिनों बाद मिली और दीक्षा के बाद तो मैं बराबर सत्संग और भण्डारे में जाने लगी। समय का प्रवाह चलता रहा। स्थानीय सत्संगी भाईयों के विचार-विमर्श से दैनिक संध्या पूजा की व्यवस्था 1997 में मेरे ही घर पर होने लगी। 17 मई 1997 की बात है। सभी भाई-बहन ध्यान में बैठे थे। मैं भी चुपचाप जाकर बैठ गई। गुरु वन्दना होने के पश्चात् सब लोग मौन साधना में लीन थे। मौन साधना के मध्य ही मुझे ऐसा आभास हुआ जैसे पूज्य गुरुदेव मेरे समीप आकर बैठ गये हैं। थोड़ी देर बाद वहाँ से उठ कर उस कमरे में गये जहाँ मेरे देवर का बेटा सदन लेटा था। वह बहुत दिनों से अस्वस्थ था। उसके सिरहाने काफी देर तक खड़े रहे, फिर उसके बालों में हाथ फेरने लगे। पूजा समाप्त होने पर आंख खुली तो देखा गुरुदेव कहीं नहीं हैं। मैंने कभी ऐसा स्वप्न में भी नहीं सोचा था। लेकिन पूजा में साधना के समय आपके दर्शन से जो खुशी मुझे हुई वह मैं लिख नहीं पा रही हूँ। उनका आशीर्वाद ही तो मेरे जीवन का सम्बल है। गुरुदेव के श्री चरणों में मेरा शत्-शत् प्रणाम है।

मेरा गर्व खत्म हो गया

एन.सी. धर
जमशेदपुर

मैं सत्संग में तो बहुत पहले से आता था। गुरु के प्रति निष्ठा भी मन में थी, लेकिन वह केवल यहीं तक कि वह मेरी ही तरह हैं, लेकिन ज्ञान में मुझसे अधिक हैं। मैं बहुत बुद्धिमान और होशियार अपने को समझता था। ऐसी ही गलत भ्रान्तियों के कारण अहंकार भी बहुत था मुझमें। यह भावना मेरे अंदर बहुत दिनों तक रही, किन्तु एक ऐसी घटना मेरी जीवन में घटी, झूठे भ्रम से जिसमें मैं वर्षों से उन्नत सर लिये घूम रहा था, सत्य के धरातल पर लाकर खड़ा कर दिया। बात 1992 की है। मेरी मां का निधन राँची में हो गया। हम सब भाई और परिजन उनकी अंत्येष्ठि के लिये एकत्र थे, तभी अचानक मेरे बाँये जबड़े में भयानक दर्द उठा। किसी तरह अंत्येष्ठि क्रिया समाप्त कर हम लोग घर आये। राँची में ही मैंने डॉक्टर को दिखाया। देखते ही डॉक्टर ने कहा यह कैंसर हो सकता है। आप किसी अच्छे विशेषज्ञ को दिखायें। क्षणिक आराम के लिये दवा लेकर जैसे-तैसे किसी तरह मां के मृत्यु पश्चात् का कार्यक्रम पूरा करके मैं टाटा आया। वहाँ टाटा अस्पताल में दिखाया। उन्होंने भी यही कहा कि बायीं तरफ नीचे जबड़े में कैंसर है। इसके पहले देहली एस्कॉर्ट अस्पताल में मेरी ओपन हार्ट सर्जरी हो चुकी थी और शीघ्र ही यह नया आघात पा मैं घबरा गया। वेल्लौर में उनका परिचित एक डॉक्टर कैंसर स्पेशियलिस्ट है उनके पास उन्होंने मुझे रेफर कर दिया। बिना समय गंवाये मैं कलकत्ता गया और वहां से हवाई जहाज द्वारा वेल्लौर गया। अच्छी तरह जाँच-पड़ताल करने के बाद दूसरे दिन का समय डॉक्टर ने ऑपरेशन के लिये दिया। दूसरे दिन जब मैं ऑपरेशन थियेटर में था तब चेकअप के दौरान डॉक्टर ने कहा, ''बीमारी अगर वोकल कार्ड तक फैल गई होगी तो मुझे वहाँ तक ऑपरेशन करके उस अंग को निकाल देना पड़ेगा। इस क्रिया में ऐसी संभावना भी हो सकती है कि आपकी बोलने की शक्ति खत्म हो जाये। डॉक्टर की बात सुनकर मैं घबरा गया और बोला-''अरे डॉक्टर साहब! मैं वकील हूँ। अगर बोल ही नहीं पाऊंगा तो मेरी प्रैक्टिस कैसे चलेगी? इससे तो मैं मर जाना पसंद करूँगा।'' ऐसा बोलते हुये टेबल से उठ कर बाहर भाग गया। डॉक्टर और अस्पताल के कर्मचारी

मुझे रोकते रह गये। बाहर आकर मैंने देहली पूज्य गुरुदेव को फोन लगाया और जो कुछ भी डॉक्टर ने कहा था मैंने गुरु महाराज को एक-एक बात बता दिया। सुनकर आप आश्चर्य करेंगे। मैं तो चकित था ही। जरा भी चिंता प्रकट करने की जगह ठहाका मारकर वह हंस पड़े और बोले-''अरे धर साहब! अभी तो आपको वकालत करना है, कुछ नहीं होगा।'' वापस आकर मैंने डॉक्टर साहब से ऑपरेशन करने के लिए कहा। वह चकित होकर मुझे देखने लगा और पूछा-''तुम कहाँ गये थे? किसने तुम्हें ऑपरेशन कराने को कहा है?'' मैंने झट से उत्तर दिया-''मैं जीसस क्राइस्ट के पास गया था। उन्होंने ही मुझे ऑपरेशन कराने के लिये कहा है।''

डॉक्टर आश्चर्य से मेरा मुँह देखने लगा। इस तरह दूसरे दिन मेरा ऑपरेशन सफलतापूर्वक हो गया। कुछ दिनों बाद ठीक होकर मैं जमशेदपुर लौट आया। उसके बाद मैंने देखा कि मैं जो कुछ भी बोलता हूँ वह अस्पष्ट होने के कारण दूसरे समझ नहीं पाते। मैं बहुत घबराया क्योंकि एक केस मेरे हाथ में था। मैं चिन्तित हो उठा। ऐसी अस्पष्ट बोली से मैं कैसे कोर्ट में बोलूंगा? हताश होकर मैंने गुरुदेव को देहली फोन किया और अपनी परेशानी से अवगत करा दिया। सुन कर बोले-''अरे धर साहब! निश्चिंत होकर कोर्ट में जाइये। जज आपकी बात को बहुत अच्छी तरह समझेगा। चिन्ता मत करें।'' दूसरे दिन डरते-डरते मैं कोर्ट गया। मैं नहीं जानता, लेकिन आपको याद करके कोर्ट में बेधड़क बोल गया। बोलते समय मुझे बराबर लग रहा था जैसे मेरी जगह कोई और बोल रहा है। मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब मुझे मालूम हुआ कि मेरे तर्क से जज साहब पूरी तरह संतुष्ट थे और मैं केस जीत गया। ऐसे हैं मेरे भगवान! हम ऐसे हैं जो उन्हें समझ नहीं पाते। आखिर भगवान भी तो मानव शरीर धारण करके पृथ्वी पर आते हैं। इस तरह मेरी बीमारी से घर की आर्थिक स्थिति जो चरमरा गई थी फिर से संभलने लगी। उनकी कृपा से मेरी स्थिति पहले से भी अच्छी हो गई है। यह सब मेरे गुरु भगवान की ही तो कृपा है। उनकी कृपा को मनन करता हूँ तो खो जाता हूँ कृपानुभुति में।

अपनी बुद्धि और पौरुष का मुझे बड़ा अभिमान था। आपके श्री चरणों का सहारा मिलते ही मुझमें परिवर्तन होने लगा। परिवर्तन का कारण भी है। आपकी कृपा से मेरे एक से एक गंभीर संस्कार उभर कर मुझे घेरने लगे। जब-जब मेरा धैर्य टूटने लगा आगे बढ़कर टूटने से आपने मुझे बचा लिया। आपकी कृपा से ऑपरेशन से मैं बच गया। वकालत पुनः अच्छी तरह से चलने लगी। सब कुछ शांतिपूर्वक चल रहा था कि मेरे कुसंस्कार की मार फिर मुझ पर पड़ी। सीढ़ी से गिरने के कारण मेरी पुत्रवधु की

मृत्यु हो गई। पुत्रवधु की मृत्यु का दुःख तो था, उसकी दो छोटी बच्चियाँ जो माँ के बिना विक्षिप्त सी हो गई थीं उनको कलेजे से लगाये मैं अपने भाग्य पर रो रहा था कि एक नया प्रहार मुझ पर हुआ। पुत्रवधु की माँ ने मेरे बेटे को अपनी बेटी की मृत्यु का जिम्मेदार ठहराते हुये पुलिस में एफ.आई.आर. दर्ज कर दिया। इस प्रहार से मैं बहुत घबरा गया। गुरुदेव के दरबार में पुनः अपने दुःखों का पिटारा मैंने खोल दिया। उन्हीं का तो सहारा है। सारी बातें सुनकर आप बोले–''चिंता मत करिये, गुरुदेव सब ठीक करेंगे।'' उनकी बातों से कुछ तो मन शांत हुआ लेकिन अंदर ही अंदर बेचैनी बनी रही। पर वाह रे मेरे कृपा निधान! आखिर कोर्ट से लड़का बेदाग छूट गया। इस परेशानी को अभी भूल भी न पाया था कि पत्नी बुरी तरह बीमार हो गई। दो बच्चियों को संभालना, पत्नी को संभालना सब कितना कठिन है। घर का काम, कोर्ट का काम, केस की सारी तैयारी करना क्या इतना आसान है? घबरा कर पुनः गुरुदेव से अर्ज किया–''भाई साहब मैं तो अब एकदम हताश हो गया हूँ। दो बच्चियों और बीमार पत्नी सबको संभालना और सेवा करना, मैं मर जाऊंगा या पुनः बीमार पड़ जाऊंगा तो कौन मुझे देखेगा? आपने बड़े ही शान्त स्वरों में कहा–''आप चिंता क्यों करते हैं, आपकी सेवा मैं करूँगा।'' प्रभु की बातों ने मुझमें एक नवीन शक्ति का संचार कर दिया। मैं भूल गया कि एक बार मेरी ओपन हार्ट सर्जरी हो चुकी है और अब फिर दो मुख्य धमनियों में अवरोध है। उनकी ही तो कृपा है जो मैं स्वयं अस्वस्थ होते हुये भी निभाता चला जा रहा हूँ। चुन-चुन कर मेरे संस्कारों को वह साफ करते जा रहे हैं मुझे निर्मल बना कर अपने अंक से लगाने के लिये। परेशानियाँ तो हैं पर एक अपूर्व धैर्य उन्होंने मुझमें भर दिया है, तभी तो बिना डगमगाये मैं रास्ते पर चला जा रहा हूं। उनका वरदहस्त यदि सर पर न होता, तो आज मेरा अस्तित्व ही संसार में न होता। बेटे की दोनों लड़कियाँ बड़ी हो गईं, पढ़ रही हैं। पत्नी आज भी बीमार है। उसकी सेवा मैं कर रहा हूँ। मेरे संस्कार घर-बाहर के कार्यों को करते हुये धुल रहे हैं। गुरुदेव की कृपा बनी हुई है। वह कटा रहे हैं और मैं काटे जा रहा हूँ। मेरे प्रभु! मुझ अकिंचन पर अपनी कृपा बनाये रखियेगा, यही मेरी प्रार्थना है।

गुरुदेव और अरविंद आश्रम झुंझनू

हरवंश लाल भायला
झुंझनू

मेरा ये प्रारब्ध, जन्मजात प्रवृत्ति, स्वभाव कहिये, मेरा भला हो न हो दूसरे का भला हो जाये, आफते जां बनी हुई है या रहमते खुदा, नहीं जानता। मेरे गुरुदेव ने पहली ही नजर में मेरी सारी मुसीबतें आर्थिक, शारीरिक और राजनैतिक उथल-पुथल, हेरा-फेरी और चार सौ बीसी की आदतें सब न जानें कहाँ गायब कर दीं, आश्चर्य है। मेरे गुरुदेव के रहमों करम की वर्षा सावन-भादो की घनघोर काली घटा की तरह मेरे ऊपर बरसने लगी है। मेरे संरक्षक जो हैं।

चंद्रप्रकाश खेतान ने, जिसने कनाडा में सरकार के वित्त सलाहकार के पद पर रहते हुये कई प्रकार का आश्चर्यजनक सुधार किया, जैसे-फिजिकल पॉलिसी आदि को छोड़छाड़ कर भारत लौट आये। आप विलासराय, जिनकी हरिद्वार में गंगा के किनारे हर की पौड़ी के पास बिड़ला भवन से भी पहले की बनी हुई कोठी है और धर्मशाला है, के सुपुत्र हैं। भारतीय संस्कृति का एसेंस सत्य की खोज में चातक की तरह आगोश फैलाये भविष्य की खोज में पाँच-सात जिज्ञासुओं को साथ लिये इधर-उधर गली-कूचों की, नालियों की सफाई कराते और एक छोटी सी पाठशाला के साथ-साथ जूझ रहे थे। अचानक मेरे साथ एक दिन उनकी भेंट हो गई, फिर तो गुरुदेव करतार साहब के पास पहुँचने में जरा भी देर न लगी। सत्य का खोजी सही जगह पहुँच गया, फिर तो अपने पिताश्री परमेश्वर लाल जी और माता रुक्मणी देवी को लेकर गुरुदेव के रामनगर स्थित निवास पर जा पहुँचा। ऊपर जाकर गुरुदेव से भेंट कराई। गुरुदेव ने उनको देखा, एक नजर उन्होंने गुरुदेव को देखा और देखते रह गये। काफी समय तक बैठे रहे और बातचीत करते रहे। चलते समय गुरुदेव ने उनको प्रसाद दिया, बोले-''मेरे लायक कोई और सेवा हो तो बताइये।'' वह बोले-''मैंने तो जो पाना था पा लिया। पर नीचे चन्द्र की मां खड़ी हैं ऊपर चढ़ने में असमर्थ हैं।''

ऊँची मेड़ी सतगुरु (करतार) की, मोसो चढ़ो न उतरो जाय ।
कोई कहियो रे मेरे सतगुरु से, मोहे बाँह पकड़ ले जाय।

चलो नीचे चलते हैं, ऊपर की उड़ानें तो हो गईं। बोले, चलिये नीचे चलते हैं, चन्द्र की माँ तो हमारी भी माँ हैं। नीचे उतर आये सड़क पर, गली में। चन्द्र की माँ को पैर छूकर प्रणाम किया। बस फिर क्या था। नजर से नजर का मिलना था कि सभी तनाव और कमजोरियाँ रफूचक्कर। परमेश्वर लाल जी की ओर मुखातिब होकर बोले– ''आपकी सांस भी कुछ फूली-फूली सी लगती है। आप भी चढ़ने-उतरने से थक गये हैं मालूम पड़ता है।'' चाय वाले की दुकान के सामने पड़े बेंच की ओर ईशारा करके बोले–''बैठ जाइये!'' सर पर हाथ रख कर पीठ थपथपा कर बोले। फूली हुई सांस नौ दो ग्यारह हो गई। बेटे से बोले–''चन्द्र तू धन्य है आज तूने सच्चे सद्गुरु से मिला दिया।''

झुंझनू आकर कनाडा में अपनी बेटी चित्रलेखा और दामाद अनिल को फोन किया, ''पा लिया धरती पर हमने एक सच्चा संत, तुम भी जल्दी आकर दर्शन कर लो।'' चमक उठा है चन्द्र और उसका अरविंद आश्रम, उत्तरी भारत को चकाचौंध करने वाला बन गया है दूसरा केन्द्र। रिसर्जेंट शेप एंड एनर्जी का विश्वविद्यालय स्पष्ट है। अगर डॉक्टर बनना है तो मेडिकल कॉलेज, इंजीनियर बनना है तो इंजीनियरिंग कॉलेज में जाइये। सरकार ने खूब खोल रखे हैं। अगर आत्मा पर, चेतन पर, सत्य पर चल कर सतगुरु इंसाने काबिल बनना है तो आइये अरविंद आश्रम में, जहां अरविंद और मीरा का वरदहस्त जगमगा रहा है, और सतगुरु करतार साहब का आशीर्वाद खुले हाथों मिल रहा है। पिछले वर्ष जब परमेश्वर लाल जी (15-4-2011 में) जीवन-मृत्यु के बीच छटपटा रहे थे, चन्द्रबाबू अपनी लेबोरेट्री (पूजा कक्ष) में उनके दुःख दर्द दूर होने के हेतु ध्यान में लीन थे। सभी तरह के मेडिकल यंत्र डाक्टर, वैद्य, हकीम सभी समीप थे और परमेश्वर जी कष्ट से लड़ रहे थे। उनके नौकर-चाकर, तीन-चार कारें दरवाजे पर खड़ी थी जयपुर देहली से बराबर सम्पर्क बनाये हुये। स्वभाव से संत सद्गुरु का प्रिय शिष्य था, हर वक्त इशारे का तलबगार रहता था। पिताजी भी इससे बहुत खुश रहते थे जो 1993 में गाडिया टाउन हॉल झुंझनू में दीक्षा लेकर गुरु सेवा में संलग्न हो गया। तब से हर रविवार दो गुलदस्ते लेकर सामूहिक सत्संग में जाता-गाज़ियाबाद। हर भंडारे में दो गुलदस्ते भेंट करता। धन्य है वह भी। भागचन्द कुम्हार, जिसका परिवार खेतान परिवार का खानदानी निगहबान था, उठाना-बैठाना, नहलाना-धुलाना व उनका सभी दैनिक कार्य माथे पर बिना किसी सलवट के अनेक नौकरों के होते हुये भी हृदय से समर्पित सेवा करता। मारिगसर में डॉ. शक्ति भाई उसकी झोपड़ी में सत्संग का अलख जगा आये। सच है सेवा ही मेवा है।

निस्बत (आन्तरिक सम्बन्ध) भी एक अजीबोगरीब देन व बरकत (गिफ्ट) है नक्शबन्दियों की। तब भानू दीदी पटेल ने जो लंदन में अपना सब कुछ छोड़-छाड़कर

करोड़ो रुपये लेकर आई हैं आश्रम में, ने महाराज जी करतार सिंह जी को फोन किया। मेरे पिताजी गंभीर दशा में कष्ट से जीवन और मृत्यु से दो-चार हो रहे हैं। मेरी मदद कीजिये। बिना बुलाये मौत भी नहीं आती, जब तक इंसान उसे खुद न बुलाये, क्योंकि इंसान ब्रह्मा की फैक्टरी का माडल है और मौत यम उसी का सहायक बनकर आया है। मनमानी करने वाला शैतान नहीं, दुःखों तकलीफों से छुटकारा दिलाने वाला बिना बुलाये नहीं आता। भानू बहन के फोन पर गुरुदेव ने कहा, ''15-4-2011 को चली आओ।'' शाम को सत्संग करने के बाद बोले-''सुबह का सत्संग करके प्रसाद लेकर जाना। उन्होंने अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लिया है।'' भानू दीदी ने रात को चन्द्र प्रकाश को फोन किया और जो बातें महाराजजी से हुई थीं उनको बता दिया। उन्होंने कहा तुम चली आओ जो होना था वह हो गया। होता क्यों न! पुराना आशीर्वाद जो था। तीसरी मंजिल से नीचे उतर कर तसदीक हुई थी कि प्रेम ही हमारा मार्ग है। जिसके आगे रामबाण और सुदर्शन चक्र सब नतमस्तक हैं। 15 अगस्त 1993 में अरविंद महाराज की समाधि पर सत्संग कराने के बाद मैंने कहा कि मेरा कमरा भी देखते जाइये। मीरा भवन में रहता था। बोले-''चलो।'' मैंने चन्द्रप्रकाश से उधर का गेट खुलवाने को कहा कि सरदार जी गुरुदेव मेरा कमरा देखेंगे। साथ में भाभी जी (सरदारनी जी बीवी जी), चन्द्रप्रकाश, बहन ललिता व खाकसार गाड़ी में बैठ गये। चन्द्रप्रकाश की पुरानी 100 साल खस्ताहाल धर्मशाला आवाम की नजर में जिसमें भूत-प्रेत रहते थे, ऊबड़-खाबड़ रास्ता कांटों से भरा था, गुरुदेव को उस धर्मशाला का निरीक्षण कराया और आशीर्वाद माँगा। बाद में मेरी कोठरी में गये। बड़े खुश हुये। मैंने कहा-''कृपा करिये'', आप बोले ''कृपा तो है ही।'' मैंने भरे गले से कहा-''नहीं रहमो करम करो, शरण में ले लो।'' आप बोले, पीछे माँ के पास जाओ (बीबीजी के पास)। ऐसा महसूस हुआ माँ ने मुझे गोद में उठा लिया। गोद में उठाना था कि मुझे पता नहीं कि मैं कहाँ चला गया। मुझ पर एक अनोखी लय तारी हो गई। सब हक्का-बक्का देखते रहे। गाडिया टाउन हॉल में आकर बुलाया और बोले-''तुम्हारा स्थान तो बहुत अच्छा है, शांत, एकांत, खुश रहो।'' उस जगह आज संगमरमर की दीवारें जगमगा रही हैं। अरविंद आश्रम की पाठशाला बनी हुई है। सबके लिये खाना-पीना बनता है। हाथ कंगन को आरसी क्या! आईये आप भी प्रसाद ग्रहण करें तो पता चलेगा महत्व आशीर्वाद का।

हमारे संत सद्गुरु करतार जी की नम्रता देखिये। एक बार किसी ने उनसे कहा, ''यू आर अ सेंट।'' आपने उत्तर दिया, ''नो, आई ऐम अ सर्वेंट।'' उस सज्जन ने पूछा, ''व्हाट इज द डिफरेंस बिटवीन अ सेंट एंड सर्वेंट?'' पूज्य सरदार जी ने उत्तर दिया, ''सेंट मेक्स अ सेंट, सर्वेंट मेक्स अ सर्वेंट। आई मेक द सर्वेंट्स फॉर सर्विस। सर्विस इज गॉड, गॉड इज सर्विस। सेवा ही मेवा है।'' डा. इकबाल कहते हैं-

''खुदी को कर बुलंद इतना, कि हर तकदीर से पहले,
खुदा बंदे से खुद पूछे, बता तेरी रजा क्या है?''

हमारे पूज्य गुरुदेव कहते हैं–''खुदी से खुदा नहीं मिलता, खुदी को कर इतना पस्त कि खुदी खुदा हो जाये। दीनता तो अपनानी ही पड़ेगी वरना दूरियाँ बनी रहेंगी, हदें सरहदें बरकरार रहेंगी।'' सरहद क्या है? दो ये जानम की सिसकियां जो आपस में टकरा कर दीवारें खड़ी कर देती हैं। मसला हिमालय पर्वत की तरह बढ़ता ही जाता है, पर मिल नहीं सकता। एक नहीं हो सकती बदगुमानी में अहम् से निहित स्वार्थों के कारण। इन सरहदों को तोड़ने के लिए कोई ब्रह्मास्त्र है क्या? जय नारायण गौतम जी कहते हैं–''है अहद शब्द, शब्द की सूक्ष्म तरंग जिसे जागृत कर देते हैं। ये मुस्लिम सूफी, हिंदू संत महात्मा, इसाई आदि सभी प्रयत्नशील हैं।''

एक दिन आचार्य स्तर के एक सत्संगी भाई ने पूज्य गुरुदेव सरदार जी से पूछा कि ये भायला आश्रम में पड़ा है, इसका आपने क्या सोचा? बोले–''कीमत चुकाता हूँ, ऐसे नहीं पड़ा (खड़ा) है, जिद्दी है, नहीं मानता किसी की भी, मैं भी ऐसा हो जाऊँ क्या (जिद्दी), तो फिर इसमें और मुझमें फर्क क्या है? करेगा सो भरेगा ही।

पूज्य भाई साहब की शरण में जाना

शांता कृष्णमुरारी श्रीवास्तव
दिल्ली

हम लोग सर्वप्रथम 1958 में सिकन्दराबाद दशहरा भंडारा में गये। कृष्ण मुरारी जी के भाई व भाभी गुरु महाराज की सेवा में जाया करते थे। प्रथम भेंट में ही हम दोनों की स्थिति कुछ ऐसी हुई कि हम उसका वर्णन नहीं कर सकते। भंडारा समाप्त होने के बाद हम लोग दो-तीन दिन और रुक गये। ये तो इस तरह आकर्षित हुये कि यह भी भूल गये कि कालीबंगन (गुजरात में) से देहली (हेड ऑफिस) किसी काम से आये हैं और उत्खनन के समय छुट्टी नहीं मिलती। जिस दिन हम चलने वाले थे पूज्य चाचा जी (गुरु महाराज डा. श्री कृष्ण भटनागर) ने हमसे पूछा, ''बाबू साहब, देहली में आप कहाँ रहते हैं?'' इन्होंने बताया कि हम पुरानी देहली पुलमिठाई रेलवे बंगलो में रहते हैं अपने मौसेरे भाई के साथ। चाचाजी ने कहा- ''अगर आप रूहानियत में कुछ करना चाहते हैं तो सरदार जी का साथ पकड़ लें। वहीं आपकी रुहानी तरक्की होगी।'' फिर तो हम दोनों बराबर पहाड़गंज भाई साहब के पास जाने लगे। बात तो कभी कुछ नहीं होती। चुपचाप आंख बंद कर हम लोग बैठते और चले आते। अपने विषय में तो मैं केवल इतना ही कह सकती हूँ कि बिना बोले एक अपूर्व आनन्द का अनुभव होता। उस अपूर्व आनन्द रस से ओत-प्रोत हमारा समय व्यतीत होता रहा।

भारत-पाकिस्तान के बीच 1965 में युद्ध शुरु हो गया। रविवार का सत्संग भाई साहब के निवास स्थान पहाड़गंज में होता और बृहस्पतिवार को क्रमानुसार घूम-घूम कर अन्य सत्संगी भाई के घर पर होता। वह रविवार मेरे जीवन का बड़ा ही महत्वपूर्ण रविवार था। पूजा के बाद भाई साहब ने कहा-''बृहस्पतिवार को रक्षाबंधन है और सत्संग शान्ता बहन के घर होगा। आनन्दातिरेक से मेरी आंखें भर आई। मैं सोचने लगी कि भाई साहब का मैं कैसे स्वागत करूँगी। युद्ध के कारण प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री ने हफ्ते में एक दिन अन्न का प्रयोग न करने का आह्वान किया था। मेरे पूज्य भाई साहब की भी यही आज्ञा थी कि बृहस्पतिवार के सत्संग में अन्न का प्रयोग न किया जाये। त्योहार का दिन था। उस दिन मैंने केवल लौकी और शकरकंद बनाया जो व्रत में खाया जाता है। कुछ नमकीन और मीठे व्यंजन डरते-डरते बनाया यह

सोचकर कि सब लोग ऑफिस से सीधे सत्संग में आयेंगे। कुछ तो ऐसा होना चाहिये जो सम्पूर्ण भोजन हो सके। सत्संग के बाद घर पहुँचते-पहुँचते काफी रात हो जाती थी। वह दिन है कि भाई साहब का वरदहस्त सदैव छत्र की तरह इस अकिंचन बहन पर फैला है। उस छत्र के नीचे हम दोनों का आध्यात्मिक पथ प्रशस्त होता गया। उन्होंने हमें आध्यात्मिक सम्पदा तो दिया ही, साथ ही साथ हमारे सांसारिक जीवन की परेशानियों को भी सहज करते रहे। आज भी उनके वरदहस्त का ही प्रभाव है जो जीवन में आये हर झंझावात में पग डगमगाये तो, परन्तु गिरी नहीं।

मेरा बेटा लगभग ढाई वर्ष का था, बहुत बीमार पड़ा। उस समय देहली में साम्प्रदायिक मतभेद के कारण कर्फ्यू लगा था। बेटा रात को बेहोश हो गया। हम दोनों घबड़ा गये क्योंकि डॉक्टर की सहायता कहीं से भी मिलने के आसार न थे। मेरे देवर ने रेलवे के डॉक्टर को फोन किया। उसने भी ऐसी स्थिति में आने से मना कर दिया। भाई साहब का घर हमारे घर से दूर न था। सवेरा हो गया था। बिना कुछ बताये कृष्ण मुरारी जी भाई साहब के पास गये। इनके साथ भाई साहब कुछ दवा और कच्चा आम लेकर आये। उनको देख कर मैं रोने लगी। भाई साहब बच्चे (संजय) के पास बैठ गये। आम मुझे देकर भून कर लाने को कहा। भुना आम पानी में घोलकर संजय के शरीर पर मलने लगे। मध्याह्न तक शरीर पर आम रस मलते रहे और बीच-बीच में दवा भी आशीर्वाद के साथ देते रहे। मध्याह्न पश्चात् वह होश में आ गया। दवा देते रहने को कहकर आप चले गये। ये साथ जा रहे थे। इनको संजय के पास बैठने का आदेश दिया, बोले, ''बहन बहुत परेशान हैं।'' हम निर्विकार उनको जाते देखते रहे। मुंह से न तो धन्यवाद कह सके और न यही कहा कि दोपहर हो गई भोजन तो करके जायें। पुस्तकों में पढ़ा है कि भगवान का दर्शन जब भक्त को होता है तब वह मूक संज्ञाहीन हो जाता है, वही स्थिति हमारी थी। आज वह बेटा पूज्या भाभी जी (सरदारनी जी) का 'नाटी' है।

एक बार न्यू राजेन्द्र नगर में पूज्य चौबे भाई साहब के घर सत्संग हो रहा था। इनको अटैक पड़ा और ये भाई साहब की गोद में गिर कर बेहोश हो गये। प्राथमिक उपचार करने के बाद भाई साहब वहाँ आये जहाँ मैं नतमस्तक खड़ी रो रही थी इनके पास। आपने इनके विषय में कुछ पूछताछ किया। मेरे प्रभुरूपी भाई से क्या कुछ छिपा था? उस दिन से बराबर हर माह दवा की शीशी मुझे देते रहे। यह कैसा रहस्य था

जिसे आज तक समझ सकने में मैं असमर्थ हूँ। जीवन में अनेक उतार-चढ़ाव के साथ पूरे भारत में जगह-जगह स्थानान्तरण के पश्चात् अंत में पुनः देहली पदस्थापना हुई। आपका आदेश हुआ कि हमलोग पदभार मुक्त होने के पश्चात् देहली ही रहें। इन्होंने कहा कि पेंशन से देहली में मकान किराये का लेकर रहने में घर चलाना कठिन होगा। भाई साहब ने कहा-''कोई चिंता नहीं, सब हो जायेगा।'' आपका ही तो आशीर्वाद था जो पदभार मुक्त होने से लगभग आठ माह पहले बहरिन (खाड़ी देश) सरकार की ओर से उत्खनन का ऑफर मिला। वहाँ बहुत पुराने प्राचीन स्मारक और कब्र थे। शहर के विस्तार के लिये वहाँ की सरकार चाहती थी कि यदि आवश्यक न हो तो उसे हटाकर शहर का विस्तार हो। हमारा पत्राचार डिप्लोमेटिक बैग द्वारा होता था। भाई साहब का पत्र लेकर जब मैं पहाड़गंज गई तब हाल चाल पूछने के बाद आपने वहाँ के उत्खनन के विषय में पूछा। मैंने बताया कि कोई महत्वपूर्ण अवशेष नहीं मिल रहा है। आपने बड़े ही शांत भाव से केवल 'अच्छा' कहा। दूसरे दिन पत्र आया कि हरप्पा काल (भारत की प्राचीन सभ्यता) की ढेरों टेराकोटा सील (मृदुभांड मुद्रायें) मिली है। स्पष्ट है कि भारत और अरब देश से व्यापारिक संबंध बहुत पुराना है। इस कृपा का क्या नाम दिया जाये। मैं तो यही कहूँगी कि जब भी हम हृदय से प्रार्थना करते हैं, प्रभु उसे जरूर सुनते हैं। तब क्या समय-समय पर जो पूज्य भाई साहब से आशीर्वाद मिलता है वह ईश्वरीय मदद नहीं है? यह गुण ही तो ईश्वर है।

कलकत्ता में इनकी पदस्थापना के कारण मेरे पुत्र ने ग्रेजुएशन (स्नातक) वहीं से किया। व्यापारी पुत्रों की मित्रता ने व्यापार के चमक-दमक से संजय (मेरा पुत्र) को मुग्ध कर लिया। व्यापार करने की धुन उसे भी चढ़ गई। इस बीच कलकत्ता से इनकी पदस्थापना निदेशक के पद पर देहली हो गई। संजय के इस विचार से मैंने भाई साहब को अवगत कराया। आपने बड़े शांत भाव से कहा-''कोई बात नहीं।'' मैंने कहा-''भाई साहब, हम लोगों को तो कोई अनुभव नहीं है और न ही इतनी पूंजी है जो उसे दे सकें व्यापार करने के लिये।'' आपने कहा-''तो क्या हुआ बहन! किसी कार्य को करने के लिए विल पावर की जरूरत है। देखिये बाबा बन्धु जिनकी क्राकरी बहुत मशहूर है, आज इसी तरह इतना बढ़ा सके हैं। मैं चुप हो गई। उन्होंने संजय से देहली में कार्य करने को कहा। उसने कहा-''अंकल दिल्ली में लेबर बहुत महंगा है और कठिनाई भी है।'' कितने दिनों नित्य प्रातः उसे बुलाते। पूज्या भाभी जी जो संजय को बहुत प्यार करती थीं, एक दिन बोलीं-''सरदारजी आप उसे हुक्म क्यों नहीं देते रोज दौड़ाते हैं।''

''उसकी जिंदगी का सवाल है बिना आदेश मिले कैसे उसे जाने का कहूँ।'' और अंत में पन्द्रह दिन बाद जाने की आज्ञा दे दी। कलकत्ता पहुँच कर संस्कारों के चक्रव्यूह में जिस तरह संजय घिरे वह भी एक अजीब गाथा है। मैं सुनती और घबरा जाती। संजय खुद तो कुछ कहता नहीं, किंतु उसके एक मित्र से मुझे सब बातें मालूम होतीं। घबराती, रोती, तभी गुरुदेव की कही बातें कानों में गूंजती, ''बेटी यह तो संस्कार भोगने आया है।'' यह वाक्य गुरु महाराज ने उस समय मुझसे कहा था जब सिकन्दराबाद में पाँच माह के बच्चे (संजय) का मुंडन संस्कार कराने के बाद उसे मेरी गोद में दिया था। उसके भविष्य के विषय में चेतावनी देते हुये यही तो कहा–''नन्हीं, इसे अपना बेटा मत समझना। मेरी अमानत समझकर पालना। अपना समझने की भूल भारी पड़ेगी। यह तो संस्कार भोगने आया है।'' जब उसके कष्टों के विषय में मुझे मालूम होता तो घबरा कर मैं भाई साहब से कहती। वह भी यही कहते थे, ''बहन! मेरा भान्जा है। कुछ नहीं होगा।'' उनका स्नेह मुझे टूटने और संजय को गहन अवसाद में डूबने से बचा लेता। (यदि गुरुदेव ने चाहा और लिखवाया तो उनकी इस भविष्यवाणी को और उसे सहने की जो शक्ति उन्होंने दी उस पर लिखने का प्रयास अवश्य करूँगी)। गुरु महाराज के आदेशानुसार संजय से थोड़ी दूरी बनाये रखने का बराबर प्रयत्न करती, पर मोह का प्रवाह जब तब कमजोर कर ही देता। माँ जो ठहरी। कितना कठिन है एक माँ के लिये अपने ही पुत्र से दूरी बनाना। फिर भी मैंने दूरी बनाने की कोशिश की। सौतेली माँ से भी बुरी माँ के तमगे से भी नवाज़ी गयी। बाहर वालों ने तो कहा ही, खुद अपने बच्चे ने भी कहा। सूक्ष्म रूप में गुरु महाराज और प्रत्यक्ष रूप में भाई साहब से सहारा मिलता रहा। सब सामान्य हो गया क्षणिक अपवादों के मध्य।

भाई साहब ने उसकी शादी भी करा दी। बहू उसके साथ कलकत्ता चली गई। वाह रे! प्रारब्ध संस्करों का झंझावात विकराल रूप लेकर अब आया जिसमें बहू–बेटा दोनों उलझ गये। संस्कारों के उस झंझावात में भी भाई साहब का वरदहस्त सदैव छाया की तरह साथ रहा और बिना किसी तरह की मानसिक हानि से त्रस्त हुये देहली आकर ही शान्ति की सांस ले पाये। वैसे भी बंगाली लोग प्रवासी बंगाली को नहीं सहन कर पाते, फिर एक हिंदी भाषी को वहां पैर जमाते देख कैसे सहन करते। संजय ने एक छोटी जमीन खरीद ली। भला यह बात वह लोग कैसे सहन करते जिनका कार्य केवल मारपीट कर उपद्रव मचा दूसरे से पैसा वसूल करना था। जमीन के कागजात और मोटरसाइकिल वगैरह उससे छीन लेने के लिये जो हथकंडे उन लोगों ने अपनाये, उन घटनाओं को वर्णित करने में मेरी लेखनी असमर्थ है। स्मृति मात्र से ही हृदय विदीर्ण हो जाता है। मेरा स्वर्गीय भतीजा जो कभी कम्युनिस्ट पार्टी का सक्रिय कार्यकर्ता था,

मनीषा को लेकर पार्टी के जनरल सेक्रेटरी के पास इस विषय में उनसे कुछ मदद मिलेगी, ऐसी आशा से गया। उनसे जो उत्तर मिला बड़ा ही निराशापूर्ण था। कुछ भी कर सकने में वह असमर्थ थे। दादाजी (संजय के ताऊजी) ने मुख्यमंत्री ज्योति बसु के एक विशिष्ट मंत्री से इस विषय में बात किया किंतु परिणाम शून्य ही रहा। वहाँ के पार्टी के कार्यकर्ताओं के सम्मुख कम्युनिस्ट सरकार की भी कुछ न चली। इन सब बातों को सुनकर हम लोग स्तब्ध रह गये। क्या कहने हैं उस कम्युनिस्ट सरकार के, जब पार्टी और अधिकारियों में ही सामंजस्य नहीं है तो भला वह सरकार देश की क्या देख-रेख करेगी। अनुभवहीन संजय और युवा उम्र की गर्मी, मरने-मारने पर उतारू हो गये। जिस पर भगवान गुरु की कृपा हो उसका भी भला कोई कुछ अनिष्ट क्या कर सकता है? देहली में बैठे भाई साहब अपने भांजे की प्रत्येक गतिविधि से अवगत थे, फलस्वरूप एक दिन वहाँ अर्जित चीजों के मोह को छोड़ संजय देहली आ ही गया। आज उनकी कृपा तले वह सुख शांति से अपने कार्य में रत है। हर प्रकार की परेशानियों से दूर चिन्तामुक्त सुख शांति का जीवन दोनों व्यतीत कर रहे हैं। अपार है प्रभु आपकी कृपा।

गुरु कृपा

भाई साहब ने मनीषा की शादी बिहार निवासी अजय से निश्चित कर दिया। हम लोगों से जब आपने इस विषय में बताया तो हम दोनों आश्चर्यचकित हो गये। अगर-मगर का तो प्रश्न ही नहीं उठता। बिहार जाकर किसी शुभ तिथि को कुछ मंगल कार्य करने का आदेश मिला। अजय (चंदन) के परिवार में उस वक्त उनकी माँ और चंदन के सिवा और कोई सत्संगी न था। वहाँ जाने पर ऐसी कोई विशेष बात नहीं हुई। फिलहाल हमें तो भाई साहब के आदेश का पालन करना था। न उन लोगों ने कुछ विशेष बात की और न हम लोगों ने कोई बात की, लेकिन देहली लौट कर आने पर एक दिन मैंने भाई साहब से कहा-''भाई साहब, शादी तो आपने बिहार में तय कर दिया, परन्तु बिहार के लोग तो दहेज बहुत मांगते हैं। हमारे पास तो इतना रुपया है नहीं।'' मेरी बात सुनकर भाई साहब मुस्कुराये और बोले-''बहन, शादी क्या आप कर रही हैं? शादी गुरु महाराज करेंगे।'' सचमुच शादी खुशी-खुशी सम्पन्न हो गई। कहीं कोई न तो कमी हुई और न उन लोगों की ओर से कुछ अड़चन ही पड़ी। भाई साहब के कथनानुसार शादी सच ही गुरु महाराज ने किया। ऐसी लीला प्रभु की है। पग-पग पर उतने दिन गुरु कृपा के मय से सराबोर हम विचार शून्य हर कार्य को यंत्रवत् करते रहे।

शादी के तीन वर्ष भी नहीं व्यतीत हुये थे और वज्रपात हम लोगों पर हुआ, यदि आपकी प्रेम छाया सर पर न होती तो क्या हम संभल पाते? मनीषा को आपने ही संभाला। भाभी जी रोतीं और कहतीं–''मैंने तुझे सुहागिन बनाया, आज मैंने ही तुझे दोहागिन बनाया।'' उनके रूदन पर भी प्रभु की कुछ प्रतिक्रिया नहीं हुई। हम लोग तो पाषाण से हो गये थे। मनीषा की सास ने रोते हुये भाई साहब से कुछ कहा, दुखी होते हुये उन्होंने केवल इतना ही कहा–''बहन, मेरी बेटी है, उसे गोद में खिलाया है। मुझे भी तो समझिये।''

उन कठिन परिस्थितियों में मनीषा को उन्होंने संभाला ही नहीं, अपितु उसके कारोबार में बराबर बढ़ोत्तरी कराते रहे हैं। आज भी बराबर कार्य के विषय में पूछते और निर्देश देते हैं। यह है भगवानरुपी मामा का भांजी के प्रति प्यार।

आपकी कृपा से जब नई आफसेट मशीन मनीषा ने लिया तो आप अस्वस्थ होते हुये भी ऑफिस आये। मशीन और ऑफिस का निरीक्षण करने के पश्चात् अपना आशीर्वाद मशीन पर 'ऊं' लिख कर दिया। नाश्ता करते समय आपने इनसे (कृष्ण मुरारी जी) कहा–''गुरु महाराज बिहार शरीफ गये थे।'' मैं जो कई वर्ष से परेशान थी यह जानते हुये भी कि मनीषा अत्यधिक महत्वाकांक्षी और कैरियर माइंडेड है, शादी के झमेले में फंसना नहीं चाहती, क्यों शादी कराया? कई बार विवाह प्रस्ताव ठुकराने के पश्चात् बिना किसी विरोध के कैसे सहज ही तैयार हो गई? इस आन्तरिक मंथन से मैं बराबर परेशान रहती। उसका निदान संभवतः हो गया। मेरे अंतर में उठ रहे संशयात्मक प्रश्नों पर पूर्ण विराम (फुल स्टॉप) लग गया।

मुझसे करा लिया, वही जो तुमने चाहा

1984 में बी.एससी. करने के बाद मनीषा आपके पास पूछने गई कि आगे क्या करूँ। माइक्रोबायलॉजी में एम.एससी. करना चाहती थी। प्रतिशतता कम होने के कारण देहली विश्वविद्यालय में प्रवेश मिलना कठिन था। बनारस या अन्य कहीं जाकर पढ़ना नहीं चाहती थी। पिता से असीम लगाव होने के कारण दूर जाना उसे पसंद नहीं था। इसीलिये मैंने उसे भेजा कि जाओ, भाई साहब से पूछो। जो आज्ञा वे दें उसे मान लो। भाई साहब से पूछने पर उन्होंने कनाट प्लेस में एक कम्प्यूटर संस्थान में प्रवेश लेने की आज्ञा दी। बोले–''मैं उनको जानता हूँ। वहाँ जा कम्प्यूटर कोर्स कर ले।'' कम्प्यूटर का कोर्स करने के पश्चात् Apple Computers USA के भारतीय आफिस राबा कान्टेल में उसे कार्य मिला। कई माह कार्य करने के पश्चात् भी जब उसे कोई वेतन नहीं मिला तो वह हताश हो गई। यद्यपि वहाँ उसे बहुत-कुछ सीखने को मिला। उसने तो केवल प्रोग्रामिंग ही किया था, किंतु राबा में प्रकाशन आदि का भी

काफी कुछ ज्ञान अर्जित करने को मिला। वेतन न पाने से निराश, वह एक दिन भाई साहब के पास जा पहुँची। कम्प्यूटर के विषय में बहुत-कुछ पूछने के बाद हँसते हुये बोले-''चिंता क्यों करती है, तेरा वेतन तो मैं दूँगा।'' आश्चर्य! दूसरे दिन उसको एक साथ बारह सौ प्रति मास के हिसाब से बकाया वेतन मिल गया। वहाँ से छोड़ कर उसने दो-तीन जगह और काम किया। अंत में कुछ माह कांग्रेस ऑफिस में मैनेजर के पद पर काम करके छोड़ दिया।

इसने अपना प्रिंटिंग का काम करना चाहा। मैं निजी प्रेस खोलने के विरुद्ध थी पर भाई साहब ने तो आज्ञा दे दी। मैंने ही कहा-''भाई साहब! हम कायस्थों में तो जो लड़के इस तरह निजी कार्य करते हैं उनको नीची नजर से देखते हैं, फिर यह तो लड़की है। लोग व्यर्थ की बातें करेंगे, शादी में भी अड़चन पड़ेगी।'' मेरी बात को आपने बड़े गौर से सुना तो, लेकिन निर्णय जो सुनाया, सुनकर मैं हतप्रभ रह गई। मेरी बोलती बंद हो गई, आंखें भर आयीं। कैसे हैं यह भगवान! बड़े दृढ़ स्वरों से बोले-''जा तू कार्य शुरु कर, मैं तेरा हेड क्लर्क बन जाऊँगा।'' मेरी तो जो उस समय बोलती बंद हुई तो फिर कभी मैंने उनके किसी भी निर्णय का प्रतिवाद किया ही नहीं। क्या आप प्रतिवाद कर सकते हैं? उनके निर्णय का खंडन करने की क्षमता आपमें है? एक छोटा सा किराये का ऑफिस लेकर नारायणा में शुरु किया, उनकी कृपा से आज नोयडा में अपना निजी ऑफिस है, दो आफसेट प्रिंटिंग मशीनें हैं, और अन्य कई मशीन, कम्प्यूटर व अन्य उपकरण हैं। बड़े-बड़े वैज्ञानिकों यहाँ तक की संयुक्त राष्ट्र संघ (UNO) तक के कार्य नियमित रुप से होते हैं। सबमें उन्हीं की तो कृपा है। हर मशीन में उन्हीं की ज्योति जगमगा रही है। शत आयु होकर भी वह भगवान हेड क्लर्क बन आज भी देख-रेख कर रहे हैं। तभी तो ऑफिस सुचारु ढंग से संचालित है। पंद्रह-बीस व्यक्ति नित्य कार्य करते हैं। अपरम्पार है आपकी कृपा। कौन समझ सकता इस गुह्य लीला को? ऐसी है लीला, हेडक्लर्क बने देख रहे हैं प्रिंटिंग प्रेस। भगवान श्रीकृष्ण ने सारथी बन कर रथ चलाया था। आज भगवान आफिस के बड़े बाबू बन संचालन कर रहे हैं प्रेस का। भगवान आपकी लीला अपूर्व है।

वहीं आ गये मदद को जहाँ हमने उन्हें पुकारा

बात 1994 की है। मेरा भतीजा असाध्य रोग से बीमार पड़ा। डाक्टरों ने हर तरह से अपनी असमर्थता जाहिर कर दी। सब लोग कोई मंदिर में, तो कोई पंडित के पास ग्रह शांति के लिए दौड़ने लगे। मेरी छोटी बेटी मनीषा भाई को इस हाल में देखकर बहुत दुखी थी। वह पूज्य भाई साहब (डा. करतार सिंह जी साहब) के पास गयी। भगवान सब देखते हैं कि कोई उनकी पूजा करता है या नहीं। वह तो अपने बच्चे

की एक पुकार पर दौड़ पड़ते हैं। अपने बच्चे के आँसुओं को क्या वे सह सकते है? प्रभु तुम्हारी लीला अपार है।

मेरा भतीजा राहुल गाज़ियाबाद प्राधिकरण में इंजीनियर है। सन् 1994 में वह गम्भीर रूप से बीमार पड़ा। पन्त अस्पताल देहली में उसे भर्ती किया गया। परीक्षण के पश्चात् डाक्टरों ने बताया कि वह लीवर सिरोसिस से ग्रसित है, साथ-साथ पीलिया भी है। डाक्टरों की सतर्कता के बावजूद भी उसकी हालत दिन प्रतिदिन गम्भीर होती जा रही थी। कानपुर से राहुल के मामा-मामी जो स्वयं डाक्टर थे आ गये। उनके आने से यद्यपि हम लोगों को सांत्वना मिली, फिर भी उनके चेहरे को देख कर हम लोग सकते में थे। अन्ततः एक दिन डाक्टरों ने नाउम्मीदी जाहिर कर दिया। एक सैम्पल ले कर प्रसिद्ध डा. लाल की लेबोरेट्री से टेस्ट करा कर लाने को कहा।

मनीषा अस्पताल से साधे भाई साहब के पास गयी। उस समय भाई साहब रामनगर में रहते थे। तारीख याद नहीं है इतना याद है कि दूसरे दिन से गाज़ियाबाद में हम लोगों का दशहरा भण्डारा प्रारम्भ होना था। दूसरे दिन सुबह भाई साहब गाज़ियाबाद जानेवाले थे। जब मनीषा वहाँ पहुँची तो भाई साहब देखकर चकित हो बोले-''इस वक्त तू यहाँ, क्या बात है बेटी?'' जैसे ही उन्होंने पूछा मनीषा रो पड़ी। सन्त हृदय तो नवनीत समान होता है। वे कब किसी को दुखी देख सकते हैं। भाभी और भतीजे को तो कोई श्रद्धा नहीं थी पर मनीषा के मुँह से उसके कष्ट को सुनकर भाई साहब व्यग्र हो उठे, बोले-''बेटी, ऐसी स्थिति में मैं कुछ कर तो नहीं सकता हूँ किन्तु भगवान से प्रार्थना करूँगा कि वह स्वस्थ्य हो जाए। तुम भाई साहब (मनीषा के पापा) व बहन से कहना कि वे भण्डारे में न आएं, घर में ही उसके स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना करें।'' थोड़ी देर बाद पता नहीं क्या सोच कर बोले-''नहीं बेटी, तुम भाई साहब से कहना कि सिर्फ वे भण्डारे में आएं, बहन न आएं, घर में रहकर उसके स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना करें।'' खैर ये तो भण्डारे में चले गये, मैं उनके आदेशानुसार घर पर ही रह गयी। काफी लोग थे जो देर रात तक अस्पताल में रहते थे उनके लिए मैं शाम का खाना बनाकर ले जाती थी। मैंने मनीषा से कहा-''सामान हम लोग गाड़ी में रख लेते हैं, जैसी राहुल की हालत होगी उस हिसाब से सोचेंगे।'' यदि तबियत में सुधार होगा तो उधर से भण्डारे में चले जाएंगे अन्यथा लोगों को खाना खिलाकर घर आ जायेंगे। खाना लेकर जैसे ही हम लोग अस्पताल पहुँचे, लोगों के उतरे चेहरे देखकर हम लोग डर गये। पता चला डाक्टर ने जबाब दे दिया है और कहीं भी ले जाने का आदेश भी दे दिया है। पन्त अस्पताल में उस समय वेंटिलेटर की व्यवस्था नहीं थी। भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में डेंगू के प्रकोप के कारण कोई व्यवस्था नहीं हो सकती थी। सब लोग असहाय एक दूसरे का मुँह देख रहे थे। तभी अचानक

मनीषा ने पूछा–''डा. लाल के लैब से क्या रिपोर्ट आयी है?'' सबने कहा कि वहाँ से तो रिपोर्ट आयी ही नहीं है, कोई लाने वाला नहीं था। रसीद लेकर मनीषा कनॉट प्लेस रिपोर्ट लेने गयी। उसके आने पर परिणाम जानने के लिए सभी उत्सुक थे। जब वह रिपोर्ट लेकर आयी तो उसके चेहरे पर अपूर्व धैर्य और शांति देखकर मैं समझ गयी कि घबराने की कोई बात नहीं है। एक साथ सबने पूछा कि रिपोर्ट क्या आयी है? मुस्कुराते हुए उसने उत्तर दिया कि रिपोर्ट ठीक है, घबराने की कोई बात नहीं है, भईया जल्द ठीक हो जायेंगे। राहुल के मामा–मामी ने भी देखकर यही दोहराया।

भाई साहब की अपूर्व कृपा से रोमांचित हो मन ही मन उनको प्रणाम किया। प्रभू! एक दिन पहले तक तो सभी रिपोर्ट चिंताजनक थीं। डाक्टर निराश थे। आज लीलाधार की कैसी अनोखी लीला थी जो आँसुओं से द्रवित हो उठी। नैराश्य के बादल छंट गये। डाक्टर से बातचीत करने के बाद भतीजे की लम्बी उम्र की कामना करते हुए हम दोनो गाज़ियाबाद भण्डारे में चले गये। वहाँ पहुँचे तो दिन भर की थकान मिटाने के लिए भगवान भास्कर पश्चिमांचल की तरफ प्रस्थान कर चुके थे। पूजा समाप्त हो गयी थी। हॉल में न जाकर मैं वहीं दरवाजे पर खड़ी हो गयी। जैसे ही भाई साहब बाहर निकले मैंने उनको प्रणाम किया। थोड़ा आगे जाकर वह पुनः पीछे लौटे। पास आकर आपने पूछा–''बहन! वह लड़का कैसा है?'' मैंने उत्तर दिया–''भाई साहब आपकी कृपा से अब वह खतरे से बाहर है और सभी रिपोर्ट ठीक आयी हैं।'' इतना सुनते ही एक हाथ मेरे सिर पर और एक मुँह पर रख कर मुझे उस भीड़ से खींचते हुए अलग ले गये और जोर से बोले–''चुप! आज के बाद फिर कभी इस बात को जबान पर मत लाना।'' इतना कहकर आप ऊपर कमरे में चले गये जहाँ लोग मिलने के लिए प्रतीक्षा कर रहे थे। मैं जहाँ खड़ी थी, खड़ी रह गयी ये सोचती हुई कि प्रभू कैसे हैं भाई साहब, इतनी बड़ी कृपा की और मुँह से कहने की भी मनाही। नहीं चाहते कि कोई उनका गुणगान करे। उनकी अभूतपूर्व कृपा के विषय में मैं सोचती रही। बाहर मेरी आंखें बरस रही थीं और अंदर हृदय कृपा रस से भीग रहा था।

आज विदेह होकर भी तो कृपा रस बरसा रहे हैं। आज उनकी कृपा का वर्णन करते हुए भी कानों में उनके शब्द गूँज रहे हैं–''चुप! आज के बाद फिर कभी इस बात को जबान पर मत लाना।'' उनका गुणगान लिखूँ या ना लिखूँ! उनकी उपस्थिति की अनुभूति तो बराबर हो रही। क्षमा करेंगे यह आज्ञा उल्लंघन नहीं है, कृपा गान से ही तो समीपता है। प्रशंसा सुनना भले ही नहीं चाहते पर प्रशंसा में ही तो दर्शन है, हमारा आनन्द है। उसी में निहित है वह प्रशस्त मार्ग जो हमें आनन्द की ओर, श्रेय की ओर ले जाता है।

गुरु महराज ने मुझे सरदार जी भाई साहब को सौंप दिया

के.बी. सक्सेना
लखनऊ

अर्थाभाव के कारण काफी दिनों से गुरु महाराज (डा. श्री कृष्ण भटनागर) के दर्शन हेतु मैं सिकन्दराबाद न जा सका। मैं बहुत व्याकुल था और अपनी असहाय स्थिति पर रोना भी आता था। मन बड़ा व्याकुल रहने लगा। दोनों समय पूजा पर बैठता तो रोने लगता। यही प्रार्थना करता प्रभु मुझे दर्शन दो।

अचानक एक अजीब बात घटित हो गई। 19 मई सन् 1970 को जब मैं प्रातः पूजा पर बैठा तो उसी ध्यानावस्था में लगा कि पूज्य गुरु महाराज ने मुझे गोद में उठा लिया और पूज्य सरदार जी भाई साहब की गोद में डाल कर फरमाया कि "सरदार जी। यह बच्चा बहुत ही नाजुक मिजाज है, इसे सम्भालना।'' तीन दिन बाद मुझे गुरुमहाराज के विशाल होने का तार मिला। इस खबर से जो वेदना मुझे हुई उसे मैं लिख नहीं पा रहा हूँ। मेरी परेशानी से मेरी पत्नी भी बहुत दुःखी हो गई। घर में स्त्री होने के कारण घर का खर्चा बढ़ जाता है और पैसे के अभाव से सिकन्दराबाद न जा सके गुरु महाराज के अन्तिम दर्शन भी ना कर सके कह कर वह रोने लगी। गुरु महाराज के विशाल के बाद अन्तिम कार्य के लिए सिकन्दराबाद गया। देखा और मिला तो उनसे बराबर था परन्तु उस दिन पूज्य सरदार जी भाई साहब को देख कर जो अनुभूति हुई वह अलौकिक थी। स्वप्न साकार हो गया। एक आवाज अन्तर्मन में उठी, दीनता की इस मूर्ति के श्री चरणों में ही तो तुझे गुरु महाराज ने डाल दिया है सौंप दे अपने को उनके श्री चरणों में। मिलता तो उनसे बराबर था परन्तु पहले कभी न ऐसा अनुभव हुआ और न ऐसी छवि ही कभी देखा था। समय बीतता गया सत्संग के विस्तार के लिये बात चलने लगी। सत्संग सम्बन्धी कागज़ात मुझसे मंगाये गये। सारे कागज दिल्ली में मैंने भाई साहब को दिया जिसे उन्होंने शर्मा जी को देने का निर्देश दिया।

हरी भाई साहब का निर्देश

मेरा मन एक आन्तरिक द्वन्द से जूझ रहा था। सोच नहीं पा रहा था कि सिकन्दराबाद

शाखा में रहूँ या गाज़ियाबाद शाखा में जाऊँ। इसी ऊहापोह में फँसा था। आखिर एक दिन हिम्मत करके मैंने हरी भाई साहब से (हरी भाई साहब मेरे गुरु महाराज के बड़े सुपुत्र थे) गुरु महाराज के विशाल के तीन दिन पहले जो ध्यान में देखा था सब कुछ बातें पत्र द्वारा उन्हें सूचित कर दिया। आपने कृपा उत्तर दिया। उनका स्नेहसिक्त निर्देश मिला पूज्य गुरुदेव ने तो स्पष्ट कर ही दिया है कि तुम सरदार जी भाई साहब के साथ रहो। तुम्हारा अंश उनके पास है। तुम्हारी आध्यात्मिक उन्नति उन्हीं से होगी।

गाज़ियाबाद शाखा बनने के बाद जब हम दोनों भण्डारे में उनको प्रणाम करने उनके पास गये तो वह आश्चर्य से बोले–''अरे आप यहाँ आ गये?'' मैंने कहा जी आपने ठीक फरमाया मुझे हरि भाई साहब से बहुत प्रेम है। विशाल से तीन दिन पूर्व ध्यान में गुरुदेव ने जो कुछ निर्देश मुझे दिया था उसके अनुसार हरी भाई साहब ने मुझे आपके चरणों में रहने के लिए कहा है। मेरा कथन सुनकर पूज्य सरदार जी भाई साहब का मुख मंडल दीप्तिमान हो उठा, आँखों में आँसू आ गये, हाथ जोड़ कर नमन करते हुए बोले–"हरी भाई साहब बहुत महान हैं। धन्य हैं।"

अद्भुत घटना

यह घटना सन् 1975 की है। मेरे पिता जी के स्वर्गवास की सूचना पाकर नवनीत हृदय पूज्य सरदार जी भाई साहब महेश भाई साहब के साथ लखनऊ पधारे। मेरी माता जी को बहुत देर तक सान्तवना देते रहे, फिर बोले–''चलो पूजा कर लें।'' पूजा के बाद माताजी में एक अपूर्व धैर्य दिखा। पूज्य भाई साहब अन्य सत्संगी भाई बहनों से मिलने चले गये। मैं मन ही मन सोचने लगा पूजा के बाद ऐसी क्या बात हुई जो विक्षिप्त माता जी इतनी शान्त और धैर्यशील हो गईं। आफिस की समस्या से उन दिनों मैं भी बहुत परेशान था। शाम की पूजा के बाद मैंने साहस करके आपसे निवेदन किया कि मेरे डिप्टी सेक्रेटरी मुझसे नाराज हैं दिन भर में पाँच छः बार किसी कार्य का स्पष्टीकरण माँगते हैं। उनके पिता जी चीफ सेक्रेटरी हैं इससे कहीं स्थानान्तरण होता है तो रुकवा लेते हैं। बिना कुछ उत्तर दिये चुपचाप सुनते रहे। सब कुछ उनसे कह कर अन्दर ही अन्दर उठ रहे द्वन्द से मैं यद्यपि मुक्त हो गया फिर भी उत्तर न पाकर मैं कुछ चिन्तित था। पिताजी की तेरहवीं के बाद जब मैं आफिस गया तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा सेक्रेटरी साहब का स्थानान्तरण हो चुका था।

अपरोक्ष मदद

पिताजी की बीमारी और कार्यालय की परेशानी के कारण मैं काफी दिनों से आराम न कर पाया और न ढंग से सो पाया था। मैं स्वयं बीमार पड़ गया। भाई साहब

इसी बीच अन्य भाई बहनों के आग्रह पर लखनऊ पधारे थे। अस्वस्थता के कारण मैं उनके स्वागतार्थ स्टेशन पर न जा सका। मेरे क्षमा माँगने पर आपने बड़े प्यार से कहा–"मन में चिन्ता मत रखो चारपाई पर लेटे–लेटे पूजा करो सब ठीक हो जायेगा" पूज्य डा. दीना भाई साहब भी आये, पूजा के बाद दोनो में कुछ विचार विर्मश हुआ कि यह साधारण बुखार नहीं है। जाँच के बाद ही कुछ पता चलेगा। सरदार जी भाई साहब ने निर्देश दिया कि हर हफ्ते अपना हाल लिखकर उनको सूचित करता रहूँ। मेरी पत्नी रमा के भाई नागपुर से दिल्ली सरकारी काम से आये थे। जब वह भाई साहब से मिलने उनके निवास स्थान पहाडगंज गये तो आपने उनसे कहा–"सतीश भाई साहब की तबियत काफी खराब है इलाज काफी महंगा है उनके पास अर्थ का अभाव है। मेरी मदद वह लेना नहीं चाहते तुम कुछ मदद करो" मेरे साले साहब ने नागपुर पहुँचते ही पाँच हजार का बैंक ड्राफ्ट भेजा और छुट्टी लेकर मुझे देखने आ गये।

सात माह पश्चात् बिमारी से मुक्त हो कर मैं आपके दर्शनार्थ देहली गया। सुबह पूजा नाश्ता से निवृत्त होकर मैंने बुखार नापा। भाई साहब के पूछने पर मैंने उन्हें बताया कि 99 डिग्री से नीचे बुखार जाता ही नहीं है। मेरे हाथ से थर्मामीटर व दवा लेकर बोले–"सतीशबाबू यह थर्मामीटर और दवा अब रख दो" मैंने उनको बताया की साल भर तक डाक्टर ने दवा लेने को कहा है। तब उन्होंने कहा ''कोई चिन्ता नहीं है।'' उस दिन से मैं अपने को स्वस्थ्य महसूस करने लगा।

बुरी आदत को छुड़ाना

कुछ गलत आदत ऐसी थी जिसे मैं चाह कर भी छोड़ नहीं पा रहा था। संयोग से मेरे साले साहब के घर इन्द्रपुरी में सत्संग था। पूज्य सरदार जी भाई साहब बहुत पहले ही वहाँ पहुँच गये थे। अकेले पाकर आखिरकार साहस करके मैंने भाई साहब से अपनी गलत आदत के बारे में अर्ज कर ही दिया। आपने बड़े शान्त भाव से कहा–"जवानी में ऐसा ही होता है, आप चिंता न करें।" मैं चकित था जैसे गलती, गलती ना होकर एक साधारण बात हो जिसका कोई महत्व ही नहीं। कुछ दिनों बाद वह आदत ऐसी छूटी कि फिर कभी उसकी याद आई ही नहीं।

मकान बन गया

मेरी पत्नी रमा मकान बनवाने के लिये कहा करती थी। संयोग से आवास विकास की एक योजना और लखनऊ विकास की योजना प्रकाशित हुई। नगर निगम के मुख्य अभियन्ता दोनो फार्म ले कर मेरे पास आये। उन्होंने कहा–"सक्सेना साहब यह फार्म भर दीजिये अन्यथा आप कभी मकान नहीं बनवा सकेगें क्योकि दिनों दिन दाम बढ़ते

जायेंगे।'' मैंने फार्म भर दिया। गुरुदेव की कृपा से सबसे पहले आवास विकास परिषद ताल कटोरा योजना में एक प्लाट की लाटरी निकली। मुख्य अभियंता ने फौरन पैसा जमा करने को कहा अन्यथा दाम बढ़ते जायेंगे। इस खबर से मेरे पिता जी बहुत प्रसन्न हुए। दूसरी योजना के तहत दाम अधिक होने के कारण मैं लोन न ले सका। पहले प्लाट के लिये तो मैंने होम लोन लिया ही था। इस बीच पिता जी का स्वर्गवास हो गया और मैं बहुत अधिक बीमार पड़ गया।

पूज्य सरदार जी भाई साहब लखनऊ आये हुये थे। उस दिन मेरे घर पर सत्संग का आयोजन था। मेरे एक सम्बन्धी जिसका प्लाट मेरे प्लाट के बगल में था अपना घर बनवा रहे थे। उन्होंने मुझसे कहा मेरा घर तो बन ही रहा है मै तुम्हारा घर भी बनवा दूँगा। इस कथन को पूज्य सरदारनी भाभी जी ने सुन लिया था उन्होंने भाई साहब से कहा कि आप सतीश को घर बनवाने की आज्ञा दे दें। भाई साहब गम्भीर हो गये बोले बड़ी मुश्किल से तो वह बीमारी से उठा है, मकान बनवाने की इज़ाज़त देने का मतलब है कि वह फिर बीमार हो जाये। मकान बनवाते समय व्यस्तता तो होगी ही रुपयों का आभाव होने पर तनाव बढेगा वह पुनः बीमार हो जायेगा। जब मैं पूर्णतः स्वस्थ्य हो गया तब आपने मुझे मकान बनवाने के लिये कहा। सन् 1970 में नवरात्रि के दिन आपका आशीर्वाद मिला, आपके कर कमलों के द्वारा भूमि पूजन हुआ। गृह निर्माण के पश्चात पुनः आपके चरण इस आशीर्वाद के साथ पड़े कि गुरुमहाराज ने तुम लोगों की इच्छा पूर्ण कर दी। महेश भाई साहब ने कहा कि अब सफेदी बगैरह करा कर घर को सजा लो। पत्नी बोली "भाई साहब अब जब पैसा होगा तब यह भी हो जायेगा।" इन बातों को पूज्य भाई साहब ने सुन लिया। मेरी पत्नी से बोले "पैसा मैं दूँगा।" इन सभी बातों को आज भी मैं जब सोचता हूँ तो कहीं खो जाता हूँ। उस आशीर्वाद को जो पग-पग पर मेरी सहायता करता रहा धनाभाव तो मुझे हुआ ही नहीं। सब कुछ कैसे सम्भव हुआ मेरे लिए आज भी अबूझ है। धन्य हो गुरुदेव धन्य हो सन्त श्री भगवान् क्या अपने बच्चों की कोई इच्छा अपूर्ण रखता है?

काफी दिनों से मैं रक्त अर्श से पीड़ित था। सिकन्दराबाद भण्डारे में आपको इसका आभास हो गया। मुझसे पूछा-"आपको कब से यह तकलीफ है?" मेरे निवेदन पर की कई साल से है आपने कहा ''दिल्ली आना मैं दवा दूँगा।'' दिल्ली आने पर आपने कहाँ-"अपने साले साहब से मिल आओ मैं दवा दूँगा। रवि के घर से लौट के आने पर आपने एक शीशी दवा दी और फरमाया-"पूज्य गुरु महाराज की कृपा से कल ही

रक्त आना बन्द हो जायेगा।" हमारा लखनऊ जाने का आरक्षण कन्फर्म न होने से चिन्ता थी; किन्तु जब निश्चित बोगी मे चढ़ा तो चकित था आरक्षण कन्फर्म हो गया था। सोने से पहले दवा खाना भूल गया। मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा जब उस दिन अर्श से रक्त नहीं आया।

रमा ट्रेन से गिर गई

घटना पाँच वर्ष पूर्व की है। 17 मई को पूज्य गुरुदेव की निर्वाण तिथि के भण्डारे के बाद रात्रि की गाड़ी से लखनऊ वापस जा रहे थे, लखनऊ स्टेशन पहुँचने के पहले ही गाड़ी रुक गई। हमारा घर उस जगह से पास पड़ता था। वहीं उतर जाने का निश्चय कर मैं तो उतर गया परन्तु रमा न उतर पाई और न ही मुझे समान पकड़ा पाई। ट्रेन चल दी, घबराहट में उसके दोनों हाथ छूट गये वह धडाम से पत्थरों पर गिर गई। मैं हक्का बक्का देखता रहा पास पहुँच कर जब मैंने आवाज दिया तब वह बोली ट्रेन निकल जाए तब उठूंगी। ट्रेन निकल जाने पर वह उठी और हम बाहर आये। सामान ट्रेन में छूट गया था जिसे लेकर एक सत्संगी भाई बाद में आये। दूसरे दिन रविवार का सत्संग था। राधा कृष्ण का पुत्र टेम्पो लेकर आया और एक्सरे कराने के लिये ले गया। एक्स रे कराने पर पता चला कि घुटने की हड्डी टूट गई है। प्लास्टर लगाने से गर्मी में बहुत परेशानी होती है कहकर डाक्टर ने बेल्ठ बाँध दिया। चलती ट्रेन से गिर कर भी चोट अधिक नहीं लगी, यह कृपा मेरे प्रभू की ही तो है जिसकी अनुभूति बार-बार पूज्य भाई साहब से मिलती रही।

आपरेशन से बच गया

एक दो बार नहीं, मैं तो अनेकों बार उस सदानन्द की अनुपम कृपा से सराबोर हुआ हूँ। एक बार मेरे पेट में भयानक दर्द हुआ। पेट फूलता जा रहा था। मेरा भतीजा डाक्टर दीना भाई साहब से बोला-"चाचा! मेरे पापा का इसी प्रकार स्वर्गवास हो गया आप इन्हें बचाइये आपरेशन करा दें।" डाक्टर साहब ने कल के लिए टाल दिया। मैंने सन्ध्या से कहा पूज्य सरदार जी भाई साहब को मेरी बिमारी के विषय में पत्र लिखने को। सन्ध्या ने चिट्ठी डाक में डाल दी। चिट्ठी लिखने की देरी थी, प्रभू की अदृष्य कृपा मेरे ऊपर बरसने लगी। रात भर थोड़ी-थोड़ी देर पर गैस पास होता रहा। सुबह तक मैं एकदम स्वस्थ्य अनुभव करने लगा। गैस के कारण एक्स रे में स्टोन का पता नहीं चला, मुझे अस्पताल से छुट्टी मिल गई।

इसी तरह जब तब प्रभू रुपी गुरु की कृपा हम पति पत्नी पर बराबर होती रही। इस बीच रमा फिर अस्वस्थ्य रहने लगी। कई टेस्ट होने पर पता चला कि ब्लड शुगर

तो है ही किडनी में काटेंदार स्टोन है। डाक्टर ने दर्द होने पर आपरेशन करने के लिए कहा। कुछ दिनों बाद देहली गया। रिपोर्ट देखने के बाद भाई साहब ने कहा सोच कर दवा दूँगा। समय बीत गया आपने कोई दवा नहीं दिया। कुछ समय बाद आगरा में सत्संग हुआ, दवा के बारे में पूछने पर उत्तर मिला–''इतनी जल्दी कोई दवा नहीं बता सकता।'' दिल्ली से आपने मुझे पत्र लिखा लखनऊ में किसी अच्छे होम्योपैथ डाक्टर को दिखा कर दवा कराओ। आफिस के होम्योपैथ डाक्टर से मैंने रिपोर्ट दिखा कर दवा के लिये प्रार्थना किया। उन्होंने कहा–"इतनी गम्भीर बीमारी में मरीज को बिना देखे दवा नहीं दे सकता।" दूसरे दिन रमा को लेकर मैं उनके पास गया। काफी कुछ पूछने के बाद दूसरे दिन उन्होंने दवा दिया। तीन माह दवा देने के बाद ब्लड शुगर ब्लड प्रेशर में तो काफी सुधार हुआ। कुछ माह बाद दिल्ली गया भाई साहब को रिपोर्ट दिखाया। रिपोर्ट देखकर आपने कहा–"शुगर तो कम नहीं होती है दवा बराबर करते रहो और परहेज भी जरुरी है टेस्ट भी कराओ।" लखनऊ आने पर जब टेस्ट कराया तो शुगर बढ़ा निकला। तब से रमा दवा बराबर लेती है और उनकी कृपा से ठीक है। आश्चर्य तो इस बात की है कि अल्ट्रासाउन्ड कराने पर स्टोन का कहीं नामों निशान भी नहीं मिला। प्रभू की यह असीम कृपा हम दोनों को बराबर मिल रही है। हम सरदार जी भाई साहब में उनके नित दर्शन कर जीवन पथ पर आगे बढते जा रहे हैं।

गुरुदेव ने जीवन की दशा और दिशा ही बदल दी

अनिल कुमार
पटना

धार्मिक माता पिता की चौथी एवं कनीयतम सन्तान हूँ मैं। पिताजी 'भारत के महान सन्तों की जीवनियाँ' पुस्तक घर पर लाया करते थे। बचपन से ही गीता-रामायण के श्लोक सन्ध्या में पिताजी के आफिस से लौटने के पश्चात् उन्हें कन्ठस्त कर सुनाने का कार्य मिला करता था। इसी क्रम में बचपन में महान सन्तों, साधकों व विभूतियों के सम्बन्ध में कहानी के तौर पर पढ़ने का अवसर मिलता था। काफी रोचक लगता था। सोचता था ऐसे भी महान सन्त हैं? खैर, बचपन उनके द्वारा किये अद्भुत कृत्यों की कल्पना में बीत गया। किशोरावस्था फिर युवावस्था।

फरवरी सन् 1990 में विवाह एक ऐसे सत्संगी परिवार में हुआ जिनपर आपकी असीम कृपा रही। विवाह के पश्चात् आपके सम्बन्ध में पत्नी से सुना। सहसा यकीन नहीं हुआ कि इतने ऊँचे सन्त, वक्त के पूरे शहंशाह वर्तमान में सशरीर हैं। जून 1990 में आपके परम दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आप उन दिनों नई दिल्ली में पहाड़गंज में वास करते थे।

प्रथम दर्शन में ही आपने मुझे अपना बना लिया। आपकी दृष्टि का मिलना था कि मैं अपने आप को भुला बैठा। मेरे रोम-रोम में विद्युत की एक लहर सी चमक उठी। आपने कृपा दृष्टि के साथ-साथ सर व पीठ पर हाथ फेरा। मैं अपनी पत्नी और उनके परिवार के साथ गया था। आपने पूज्य मम्मीजी (सरदारनी जी) से कहा-''शगुन दो, दामाद आया है।'' पूज्यनीय मम्मीजी ने अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर का एक उत्तम वस्त्र व कुछ रुपये मेरी फैली हथेली पर रख दिये। वह क्षण मेरे जीवन का अद्भुत एवं अविस्मरणीय क्षण था। स्मरण मात्र से आज भी शरीर रोमांचित हो रहा है।

वर्ष 1991 के सम्भवतः मई माह में वाराणसी में भण्डारा था जिसमें पहली बार शामिल होने का सुअवसर मिला। वहाँ अन्य लोगों के अतिरिक्त पूज्यवर महेश, गौतम व कृष्ण मुरारी चाचाजी व चाचीजी से भी मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यहीं पर पूज्य उमाकान्त चाचाजी से भी सम्पर्क हुआ। वहीं भण्डारे में मैंने आपसे प्रश्न किया-''पूजा कब और किसकी करनी चाहिए।'' यह प्रश्न करते समय मेरे अन्तर्मन में

अनेक देवी-देवता थे। पहले तो आपने मेरी तरफ देखा, फिर फरमाये-''बेटे! साधना तो चौबिस घंटे करनी चाहिए, और स्वयं की पूजा करो।'' उस समय तो कुछ समझ में नहीं आया। वर्ष खत्म होने के पश्चात् कदाचित कुछ-कुछ अंश अपनी अल्प बुद्धि से समझ में आने लगा। यह तो प्रारम्भ है। यात्रा तो दूर की करनी है। इसी बीच एक दिन मैंने आपसे कहा कि मैं राज्य असैनिक सेवा की लिखित परीक्षा में पुनः सफल हुआ हूँ, मौखिक परीक्षा के लिए आपका आशीर्वाद चाहिए। आपने कहा-''मेरा आशीर्वाद सदैव तुम्हारे साथ है- I am always with you.'' उस समय मैं काफी रंगीन कपड़े पहने हुआ था जिसको छू कर बोले-''यह पहन कर साक्षातकार में मत जाना। कपड़े ठीक और सादे होने चाहिए।'' आपकी कृपा से राज्य असैनिक सेवा परीक्षा में मैं सफल हो गया और डिप्टी कलेक्टर के रूप में मेरी सेवा आरम्भ हुई। इससे पूर्व दो बार राज्य असैनिक सेवा परीक्षा में और एक बार भारतीय प्रशासनिक सेवा (IAS) की लिखित व प्रारम्भिक परीक्षा में सफल होने के बावजूद भी मैं पूर्णतः उत्तीर्ण नहीं हो सका था।

डिप्टी कलेक्टर के पद पर योगदान के पश्चात् सीधे आम आदमी से सरोकार रखने वाली विभिन्न पदस्थापनाओं में अनेकों समस्याएं आयीं, परन्तु आपकी कृपा से मैं एक बार भी असफल नहीं हुआ। सब कुछ तो किया आपने पर नाम मेरा हुआ। आपके कृपा पत्र आज भी मैंने सम्भाल कर रखा है जो मेरे पथ प्रदर्शक हैं। अनेक अवसर ऐसे आये जब आगे का मार्ग सही ढंग से पार करने में मैं अपने आप को असमर्थ महसूस कर रहा था तब आपकी स्मृति मात्र से ही समस्या का समाधान तत्क्षण हो गया। मैंने एक नहीं अनेक बार ऐसा अनुभव किया है कि जब-जब किसी विषम परिस्थिति में व्याकुल होकर मैंने हृदय से आपको पुकारा आपने मीलों दूर बैठे मुझे सम्भाला है। ऐसे एक नहीं अनेक अनुभव हैं।

वाराणसी के भण्डारे में मैं पहली बार गया था। पहली बार में ही अपनी सुध-बुध खो बैठा। उस स्थिति का वर्णन करने में तो मैं असमर्थ हूँ किन्तु उनके प्रवचन का एक वाक्यांश आज भी कानों में गूंजता रहता है-''मनुष्य को ऐसे रहना चाहिए जैसे वस्त्र खूंटी पर लटका रहता है।'' इसका मर्म उस समय तो समझ में नहीं आया। अब जब भी इस पर अमल करने का प्रयास करता हूँ-खासकर विषम समय में या द्विविधा की स्थिति में, आगे का मार्ग स्वतः निखर जाता है।

गुरु गुण कौन बखान सकता है? मैं तो प्रयास भी नहीं कर सकता, न ही कर रहा हूँ। परन्तु निज अनुभव का कुछ हिस्सा कलमबद्ध करने का प्रयास है। गुरुदेव कृपा करें कि उनकी इच्छा व आदेश के अनुरूप जीवन बन सके।

महान विभूति

बीना भटनागर
दिल्ली

ईश्वर की असीम कृपा से हमने ऐसे देश में जन्म लिया है जहाँ समय-समय पर महान विभूतियाँ अवतरित होती रही हैं जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन दीन-दुखियों की सेवा और भूले भटके को राह दिखाने में व्यतीत कर दिया। मेरे पूज्यनीय फूफाजी (डॉ. श्रीकृष्ण लाल जी) जो आध्यात्मिक रिश्ते से मेरे दादा गुरुदेव, जिनकी कृपा छाया में पलने बढने का सौभाग्य हमें प्राप्त हुआ, वे उच्च कोटि के सन्त थे। उनका समस्त जीवन सत्संगी भाई बहन व दीन-दुखियों के लिए समर्पित था। उनका कहना था कि जो सत्संगी हैं वही उनके रिश्तेदार हैं। निःस्वार्थ प्रेम करने वाला सदैव उन पर भरोसा कर सकता था। प्रेम, त्याग, सेवा की वे साक्षात मूर्ति थे।

ईश्वर की असीम कृपा थी कि मुझे व मेरे परिवार को उनके साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। हम रहने वाले सहारनपुर के थे, हमारी जमीन-जायदाद भी वहीं थी, पर हम रहे फूफाजी की छत्रछाया में। जब भी हमने कहीं और जाने का सोचा तो फूफाजी ने जाने नहीं दिया। एक बार की बात है, हमारे पिताजी जिन्हें हम बाबूजी कहते थे (पूज्य श्री जगमोहन स्वरूप भटनागर) ने अलग एक मकान ले लिया। जाने से पूर्व जब वे फूफाजी से मिलने गये तो उन्होंने आदेश दिया कि यहाँ से कोई नहीं जाएगा। मैं तुम्हें अपने से अलग नहीं करूँगा। कितना प्यार भरा आदेश था। फिर क्या था हम बच्चे तो खुश हो गये, बंधा सामान खुल गया। तत्पश्चात् हम सब उनके अन्तिम क्षण तक वहीं रहे। ऐसा अपनापन, इतना प्यार कहाँ मिलेगा? हमारे मानसपटल पर तो उनकी स्मृतियाँ ही स्मृतियाँ छायी हुई हैं। हम लोग गर्मी की छुट्टियों में बाहर चले जाते थे। जुलाई के प्रथम सप्ताह में विद्यालय खुलता था, उस दिन विद्यालय जाना अनिवार्य होता था। किसी कारणवश एक बार हम लोग देर रात तक सिकन्द्राबाद नहीं पहुँचे तो फूफाजी बहुत चिन्तित हो गये। सोचने लगे कहीं मैंने गाज़ियाबाद में तो नौकरी नहीं join कर ली। जब काफी रात गये हम लोग पहुँचे और देर से आने का कारण बताया तो आप बहुत खुश हो गये।

एक बार बच्चे खेल रहे थे तो मेरे पैर में चोट लग गयी। आपने बच्चों को बहुत समझाया और भाभीजी व भाई साहब से शिकायत किया। मुझे इंजेक्शन लगवाने के लिए आदेश दिया और बोले दूध पियो अन्यथा फोड़ा बन जाएगा। मैं बहुत घबरायी और कृपालु फूफाजी से हठ करने लगी कि आप कहें कि फोड़ा नहीं बनेगा। तब हँस कर बोले–''जा दूध पीयेगी तो फोड़ा नहीं बनेगा।'' आज भी उस स्थान पर फोड़ा उभरा हुआ है, किन्तु उनकी कृपा से फोड़ा नहीं बना। उनका कथन सदैव सत्य होता था।

उनका व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली था कि उनके सम्पर्क में जो भी आता अवश्य उनसे आकर्षित हो जाता। समय के वे बड़े पाबन्द थे। असहाय और जरूरतमंदों की मदद करना उनका पुनीत कार्य था। यात्रा के दौरान medical aid box बराबर साथ रखते। कितने ही अनाथ लड़के–लड़कियों व विधवाओं को पढ़ा लिखाकर योग्य बनाया। विधवाओं को शिक्षा दिलाकर इस योग्य बना देते कि वे इज्जत से अपना जीवपयापन कर सकें। कोई बेसहारा और आर्थिक रुप से असमर्थ व्यक्ति को अपने पास रखकर न सिर्फ इलाज करा देते वरन् उसकी सेवा सुश्रुषा भी कर देते। ऐसा मसीहा कहाँ मिलेगा जिसका सम्पूर्ण जीवन आध्यात्मिक पथ पर अग्रसर होते हुए भी सामाजिक व पारिवारिक दायित्वों को निभाने में व्यतीत हुआ।

पूज्य फूफाजी ने नारी उत्थान के लिए भी बहुत कुछ किया। पढ़ाने में मदद तो करते ही थे, स्कूल कालेज भी खुलवाये। कर्मठता, दूरदर्शिता, त्याग, सेवा व लगन उनके व्यक्तिव के विलक्षण गुण थे। हालाँकि वे कभी प्रकट नहीं करते थे परंतु उनकी आध्यात्मिक स्थिति एक महान संत की थी। नित्य पूजा करने की शिक्षा देते थे परंतु अपने सांसारिक दायित्वों से विमुख होकर नहीं। ईश्वर द्वारा सौंपे हुए दायित्वों का पूजा समझकर निर्वाह करो। हम बच्चों को प्रातः सन्ध्या में बैठने का आदेश था, उसके बाद अध्ययन नियमित रूप से करना। गर्मी के दिनों में सांयकाल की पूजा आंगन में होती थी। सब पलंग, कुर्सी पर बैठकर ध्यान करते। एक दिन उन्होंने मुझे अपने सामने बैठाया और पूछा कि मुझे कौन से भगवान अच्छे लगते हैं। मैंने कहा ''रामचन्द्रजी'' तो बोले ''उन्हीं का ध्यान करो।'' हम लोग नित्य उनके साथ पूजा में बैठते थे। एक दिन पूजा समाप्त होने के बाद उन्होंने मुझसे पूछा–''बीना तू क्या लेगी।'' यह सुनकर मैं बहुत खुश हुई और मैंने कहा–''फूफाजी मुझे घड़ी चाहिए।'' सुनकर वे चुप हो गये। मैं नादान उस समय उनके बात की गहरायी नहीं समझ सकी, घड़ी का महत्त्व बहुत बड़ा लगा सो माँग लिया। कासगंज वाली बुआजी (डॉ. महेश चन्द्र की माताजी) वहाँ मौजूद थीं, बोलीं–''बेटा, यह क्या माँगा तुमने, कृपा माँगो।'' उनके कहने पर मैंने

कहा–''फूफाजी, कृपा कीजिए।'' किन्तु अब क्या होता, स्वर्णिम क्षण तो बीत गया। कहावत है–

घर का जोगा जोगना, अन्य गाँव का सिद्ध

तीर कमान से निकल चुका था। दिया तले हमेशा अंधेरा रहता है। फूफाजी के रूप में प्रभु के गुण व उस तेज को समझ न पाये कि क्या कुछ वे नहीं कर सकते थे जो ईश्वर कर सकते हैं। हम तो सांसारिक चमक–दमक में ही फंसे रहे। उनमें विद्यमान ईश्वरीय गुणों का अहसास तो हमें उनके अन्तिम दिनों में हुआ। तब तक हम अवसर खो चुके थे। फूफाजी का स्वास्थ्य काफी खराब चल रहा था। उस दिन एम.एल.सी. के लिए मतदान हो रहा था। मैं पूज्य हरि भाई साहब (फूफाजी के ज्येष्ठ पुत्र) के घर गयी कि उनके साथ वोट डालने जाऊँगी। उन्होंने कहा–''बसन्ता बाबू आये हैं, उनके साथ चली जा।'' लौटते वक्त बसन्ता भाई साहब हरि भाई साहब के घर रुक गये। मैं गैलरी से निकल रही थी तो देखा गोपाल भाई साहब (कनिष्ठ पुत्र), हरि भाई साहब तथा डॉ. श्री कृष्ण फूफाजी के पास बैठे हैं। हरि भाई साहब ने पूछा–''वोट डाल आयी?'' इतना सुनकर फूफाजी ने कहा–''एम.एल.सी. के लिए वोट डालने गयी होगी, बसन्त बाबू के साथ।'' यह सुनकर हम सबको आश्चर्य हुआ। तब समझ में आया कि संत अपने अंतः चक्षु से सब देख लेते हैं।

मेरी सर्विस अभी नयी–नयी लगी थी। फूफाजी कालेज के प्रेसीडेंट थे। मैंने उनसे कहा–''फूफाजी मैं एम.ए. का फार्म भर दूँ?'' बोले–''नहीं, तीन वर्ष बाद फार्म भरना। अभी तुमने नयी–नयी नौकरी शुरु की है। तीन वर्ष बाद मैं स्वयं फार्म भरवाऊँगा। नियमानुसार काम करना चाहिए।'' तीन वर्ष बाद फूफाजी ने स्वयं मेरा फार्म भरवाया।

मैं कितनी भाग्यशाली हूँ जो उनकी छत्रछाया में पली–बढ़ी। अफसोस सिर्फ इस बात का है कि जिस विभूति को वे चारो ओर बिखेर रहे थे उसे आत्मसात न कर सकी। कितनी अज्ञान थी मैं! आज हम भाई–बहन जो भी हैं उन्हीं की कृपा से हैं। जैसा हमें पूज्यनीय फूफाजी का प्यार व आशीर्वाद मिला वैसा ही पूज्य पिताश्री (सरदारजी भाई साहब) से प्राप्त हुआ। उन्हीं से नहीं वरन् सिलसिले के अन्य सन्त, निर्वाण प्राप्त डा. हरि कृष्ण, बसंता भाई साहब इन सभी लोगों से मुझे व मेरे परिवार को बराबर आशीर्वाद मिलता रहा। मैं सदैव यही प्रार्थना करती हूँ कि प्रभु! इन महान विभूतियों की महान कृपा तले हम सब आध्यात्म मार्ग पर अग्रसर होते रहें। उनके बताये मार्ग पर चलकर जीवन संवर सके। गुरुदेव के चरणों में कोटि–कोटि नमन है।

हमारे गुरुदेव

ध्रुव तारे की तरह चमकता हुआ एक तारा दिव्य ज्योति से दीप्त इस धरा पर उतरा। वह तारा और कोई नहीं हमारे पूज्य गुरुदेव थे–डा. करतार सिंह जी ढ़ींगरा। वह परमात्मा स्वरूप ईश्वर के सच्चे पुत्र थे। सही मायने में वह एक ऐसी विभूति थे, जिनकी रहनी–सहनी व कथनी–करनी का जो भी उनके संपर्क में आया उसपर गहन प्रभाव पड़ा। जन मानस में प्रेम, सेवा व दीनता की शंख ध्वनि प्रवाहित कर दिया। वे स्वयं भी तो इसी की मूर्ति थे। कितनों का उन्होंने उद्धार किया।

ईश्वर की मेरे ऊपर बड़ी कृपा थी जो मुझे पूज्य गुरुदेव के संपर्क में आने का अवसर मिला। अधिकतर लोग गुरुदेव को भाई साहब कहते थे। भाई साहब मेरे पूज्यनीय फूफाजी डा. श्रीकृष्ण लाल जी, जो उनके गुरू थे, के पास सिकन्द्राबाद आते थे। हम भाई बहन सिकन्द्राबाद में फूफाजी के संरक्षण में पले बढ़े और हम लोगों की शिक्षा भी उन्हीं की देखरेख में हुई। उनके जीवन के अन्तिम दिनों में भी हम वहीं थे। उस दौरान हम सब पूज्य भाई साहब से बहुत प्रभावित हुए। फूफाजी के विदेह होने पर मेरे भाई सब नौकरी पर बाहर चले गये। मुझे फूफाजी ने वहीं कन्या विद्यालय में शिक्षिका के पद पर लगा दिया था। अपनी माँ के साथ मैं वहीं सिकन्द्राबाद में ही रहती थी। माँ का स्वर्गवास हो गया और मैं अवकाश प्राप्त करने के बाद भाई के पास दिल्ली आ गयी। दिल्ली आने के बाद भाई साहब से निकटता बढ़ती गयी। पूज्यनीय भाई साहब व भाभीजी हम लोगों पर वैसे ही कृपा करते थे, जैसे फूफाजी। वे हमेशा खुश रहने व नेकी, सच्चाई और इमानदारी की शिक्षा देते थे। उनकी कृपा ही हमारे परिवार की संबल थी। एक बार खाना बनाते समय मेरा हाथ तेल से बुरी तरह जल गया। दशहरा भण्डारे के लिए गुरुदेव सिकन्द्राबाद आये थे। मैंने नमस्ते किया तो मेरा जला हाथ देखकर बोले–''अरे! यह क्या हुआ, किस बात की सजा मिली?'' यह शब्द उनके मुख से उच्चरित हुए और सच मानिए मेरे हाथ में जो असहनीय पीड़ा थी वो पता नहीं कहाँ गायब हो गयी। देखने वालों को लगता था मुझे बहुत कष्ट है। कितने दयामय थे, किसी का दुख–दर्द उनका अपना दुख दर्द बन जाता था।

समने वाले का मनोभाव वे सहज ही जान जाते थे। दशहरे का भण्डारा गाज़ियाबाद के चौधरी भवन में हो रहा था। आप थोड़ी दूर किसी विद्यालय में ठहरे थे। पूजा में प्रसाद चढ़ाने के लिए मिठाई का डिब्बा मेरे हाथ में था। उनसे मिलने गयी तो डिब्बा मैंने उन्हें पकड़ा दिया, पर मन में सोचने लगी कि यह तो मैं पूजा में चढ़ाने के लिए लायी थी। आपने कहा–''बेटी! ले जाओ सत्संग में चढ़ा देना।'' पूजा खत्म होने के पश्चात् भोजनोपरान्त चलते समय जब मैं उनसे मिलने गयी तो मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब वही डिब्बा मुझे लौटाते हुए आपने कहा–''बेटी यह प्रसाद लेती

जाओ।'' अपनी मनोदशा पर मैं बहुत लज्जित हुई। सब कुछ तो दिया है फिर भी मन इतना छोटा है। आज भी जब बात याद आती है तो अन्दर तक झकझोर डालती है। सत् के आयाम में रहने वाली आत्मा हमारे भाव से सदा अवगत रहती है। हमारे सभी क्रिया-कलाप उन्हें दृष्टिगोचर होते रहते हैं। उनकी ही कृपा थी कि मैं शिक्षिका के पद से प्रधानाचार्या के पद पर पहुँच गयी, कुशलतापूर्वक अपना कार्यकाल भी पूरा किया। अपनी योग्यता का तो मुझे भली-भाँति आभास है-छोटी-छोटी बात पर घबराना, परेशान होना। जब कभी मैं अपनी परेशानियाँ उनसे कहती वह यही कहते-''क्यों इतना घबराती है, मैं तो तेरे साथ हूँ। खुश रहा कर।''

उनकी कृपा का ही परिणाम था जो प्रधानाचार्या के पद से ही मैंने अवकाश ग्रहण किया। अपवाद तो हर जगह होते हैं, यदा कदा मुझे भी झेलना पड़ा। मेरे स्टाफ का एक कर्मचारी खुद तो काम करता नहीं था, दूसरे को भी भड़काता था। अनुशासन बिगाड़ने के प्रयास में सदा रहता था। बहुत परेशान होकर आखिर एक दिन मैंने गुरुदेव से निवेदन कर ही दिया। वे बोले कुछ नहीं केवल आंख बन्द करके बैठे रहे। इसी प्रकार मैंने फूफाजी को भी कुछ समस्या बताने पर चुप होकर आंख बन्द करके बैठ जाते देखा था। हम समझ तो नहीं पाते थे परंतु इसी चुप्पी से समस्या का समाधान हो जाता था। मेरे साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ। सिकन्द्राबाद जाने पर जब मैं कालेज गयी तो उस कर्मचारी का बदला हुआ स्वभाव देखकर स्तब्ध रह गयी। समझते देर न लगी कि यह गुरुदेव का ही करिश्मा है।

पूज्य गुरुदेव हम सबके सहारे थे। आज यद्यपि वे विदेह हैं किन्तु उनकी उपस्थिति का आभास हमें सदा होता है। जब भी ये भाव मन में उदित होता है कि हम अनाथ हो गये, तब हमें लगता है जैसे कि कह रहे हों-''मैं तो हमेशा तुम्हारे साथ हूँ।'' उनके यही शब्द हमारी शक्ति हैं, साहस हैं और हैं जीवन का आधार।

गुरु गुण लिखा न जाये

पुष्पा
बक्सर

पूज्य गुरुदेव डा. करतार सिंह ढींगरा साहब का दर्शन मुझे श्री गिरिजा बाबू के घर पर मिला। वसंत का भण्डारा हो रहा था। मैं अपनी उस वक्त की स्थिति का बयान तो नहीं कर पा रही हूँ, पर हाँ कुछ ऐसा था कि उनके मुखमण्डल पर छाये तेज को देखकर और कानों में अमृतवाणी पड़ने से मैं अपलक सुध-बुध खोये बैठी थी। पूजा समाप्त हो गयी पता भी न चला। जब किसी ने कहा ''बहनजी प्रसाद लीजिए'' तब होश आया। बसंत के इस भण्डारे में हम लोग पहुँचे भी बड़े चमत्कारिक ढंग से। सत्संग से हम लोग नये-नये जुड़े थे, अधिक कुछ जानते नहीं थे और न ही कभी सत्संगी भाई बहन के घर ही गये थे। वसन्त भण्डारे में अपने माता-पिता के साथ मैं गयी, रास्ता पता नहीं था, देर हो रही थी। आठ-नौ बजे का समय हो गया था; तभी कान में कुछ ऐसी आवाज आयी कि लगा प्रवचन हो रहा है, उसी आवाज के सहारे हम लोग जहाँ गुरुदेव ठहरे थे, पहुँच गये। वे तो अपने शिष्य के मन की बात जानते हैं, हमारी बेकली को वे समझ गये और आवाज के सहारे अपने पास बुला लिये।

दूसरे दिन पूज्य गुरुदेव किसी सत्संगी भाई के घर जा रहे थे। मैं माताजी को कार में बैठाने गयी। माताजी बोलीं-''बेटी! तुम भी मेरे साथ चलो।'' कार में जगह नहीं थी, गुरुदेव ने मुझे अपने समीप बैठा लिया। मेरे आनन्द का तो पारावार ही नहीं रहा। जो स्थिति मेरी रही उस स्पन्दन को याद करके मैं आज भी आनन्दित हो जाती हूँ। पूज्य गुरुदेव ने उसी भण्डारे में कृपा करके मुझे नामदान भी दे दिया।

मेरी शादी हो गयी। दो बच्चे भी हो गये। अपने पिताजी के साथ मैं भण्डारे में गाज़ियाबाद गयी। सब बहन-भाई खड़े थे दर्शन हेतु। बहुत बड़ी लाइन देखकर मैं घबरा गयी और निकासी गेट पर आकर खड़ी हो गयी कि वहाँ तो दर्शन मिल ही जाएगा। मेरे अन्तर्यामी ने मेरी पुकार सुन ली और गाड़ी रोक कर मुझे दर्शन ही नहीं, आशीर्वाद भी दिए। उस समय के अपने अनुभव का बयान करने में मेरी भाषा एवं लेखनी दोनो ही असमर्थ हैं।

सब धरती कागद करूँ, लेखनी सब बन राय।
सात समुद्र की मसि करूँ, गुरु गुण लिखा न जाये।

केवल भगवान ही कर सकते हैं

चेतन स्वरूपलाल
बक्सर

बचपन से ही मैं अपने पिताजी के साथ भण्डारे में जाता था जहाँ गुरुदेव के दर्शन बराबर होते थे। मुझे उनके चरण रज माथे पर लगाने का अवसर मिलता था, और मिलता था, आशीर्वाद। उनके अपरिमित आशीर्वाद के बावजूद भी अपने माता-पिता की दृष्टि में मैं बहुत शरारती बालक था। उनका कहना मैं कम मानता था जिससे परेशान होकर मेरे पिताजी (गिरिजा नन्द लाल) ने नवम्बर 1980 में पहली बार मेरी शिकायत बक्सर रेलवे स्टेशन पर किया, उनके सामने खड़ा कर के। उस समय वे चाय पी रहे थे और हाथ में बिस्कुट भी था। पिताजी से मेरी शिकायत सुनकर उन्होंने मुस्कुराते हुए मेरी ओर देखा और बिस्कुट मुझे दिया। चाय पी रहे थे, वो चाय भी उन्होंने मुझे दे दी। चाय पीने से मैं मना कर रहा था, परन्तु लोगों के कहने पर मैंने पी लिया। बस उस समय पिताजी की शिकायत के बदले में मुझे डाँटने के इतना ही दिया। परन्तु आज मैं समझता हूँ कि उस चाय व बिस्कुट में उन्होंने मुझे वो दिया जिससे मेरा जीवन ही संवर गया। आज जो मैं हूँ वो उन्हीं का तो प्रसाद है। पटना से दिल्ली लौटते समय मैं स्टेशन उनके दर्शन हेतु गया तब मेरे सर पर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा-''मुझे पत्र लिखना, मैं तुम्हें उत्तर अवश्य दूँगा।'' इस प्रकार उनसे मेरा पत्राचार प्रारंभ हो गया। मेरे व्यक्तित्व में धीरे-धीरे परिवर्तन आता गया, मैं जन्म का शैतान, उद्दण्ड बालक एक धीर गंभीर युवक में परिवर्तित होने लगा। एक दिन आपने आदेश दिया कि बेटा चेतन तुम मिलिट्री में भर्ती हो जाओ। 1984 में दिसम्बर माह में मेरा चयन सेना में हो गया। कोर ऑफ सिग्नल में मेरी नियुक्ति टेलिफोन आपरेटर की हैसियत से हुई। कठिन ट्रेनिंग के कारण घबराकर मैंने नौकरी छोड़ने का विचार बना लिया, परन्तु गुरुदेव ने ऐसा पत्र लिख दिया कि मैं छोड़ने का विचार त्यागकर दूने उत्साह से कार्य में संलग्न हो गया। खुशी-खुशी मेरी ट्रेनिंग समाप्त हुई और अलवर (राजस्थान) में मेरी पोस्टिंग हुई। बाद में कोटा पोस्टिंग होने पर मैं दिल्ली गुरुदेव से (तब वे रामनगर में रहते थे) मिलने गया।

नौकरी लगने के बाद मेरे माता-पिता ने शादी की चर्चा शुरु कर दी। पिताजी से मैंने यही कहा कि जहाँ गुरुदेव कहेंगे वहाँ मैं शादी करुँगा। कुछ दिनों पश्चात् गुरुदेव के आज्ञानुसार सासाराम के बाटा मैनेजर श्री रामचन्द्र सिन्हा की पाँचवीं पुत्री राखी से

मेरा विवाह 22 जनवरी 1988 को बसन्त भण्डारे पटना में गुरुदेव को साक्षी मानकर सम्पन्न हुआ। उनके आशीर्वाद तले हम दोनों का जीवन बहुत हँसी-खुशी से बीत रहा था। हमारे दो बच्चे भी हो गये। 1992 में मैं जम्मू तवी में था। मेरे बड़े बेटे का जन्मदिन था। परिवार मेरे साथ जम्मू-तवी के नजदीक साम्बा में रहता था। दोनो बच्चे कुछ बीमार थे। दवा सैनिक अस्पताल की चल रही थी। पत्नी ने गलती से छोटे बच्चे को दवा कुछ अधिक मात्रा में दे दिया जिससे उसकी हालत बहुत गम्भीर हो गई। उस वक्त मैं सैनिक अस्पताल में ही था। बच्चे को डाक्टर ने फौरन ऑक्सीजन लगाया और कपड़े सारे उतार दिया। वह जोर-जोर से हिचकी ले रहा था। पत्नी रो रही थी। मैं बुत बना देख रहा था और सोच रहा था कि अब ये हमारे हाथ से सदैव के लिए अलग हो रहा है। मैं मन ही मन गुरुदेव को याद करने लगा। याद करके एक तरह से सोचने लगा कि घरवालों के विपरीत जाकर मैंने उनकी आज्ञा से परिवार नियोजन का आपरेशन करा लिया था। जब मैंने उनसे कहा था कि परिवार के लोग आपरेशन के खिलाफ हैं तब आपने यही कहा था कि कुछ नहीं होता, दुनियादार लोग ऐसे ही कहते हैं। मेरा हृदय रो-रो कर उन्हें पुकारने लगा। तब तक देखता क्या हूँ कि अस्पताल में लगे सभी चित्रों में मुझे गुरुदेव का रूप दिखने लगा। एक अजीब सी स्थिति हो गयी, लगा भूचाल आ गया, अस्पताल की जगह मुझे मन्दिर दीखने लगा। चारो ओर से घंटी की आवाज आने लगी। तभी डाक्टर ने आकर हम दोनो को बाहर बैठा दिया यह कहकर कि हम लोगों को अपना कार्य करने दीजिए। लगभग बीस-पच्चीस मिनट बाद ऐसा लगा कि बच्चे की स्थिति में कुछ सुधार हो रहा है। थोड़ी देर बाद किसी ने कहा कि अभी आप लोग घर जाइये। थोड़ी देर के बाद जब आवें तो दूध लेकर आइयेगा बच्चे के लिए, अस्पताल से दूध वगैरह उसे कल से मिलेगा। बच्चा केवल पन्द्रह माह का था छोड़कर आने की हिम्मत नहीं हो रही थी। गुरुदेव से मन ही मन उसे देखने की और कृपा करने की प्रार्थना करते हुए वहाँ से हटकर हम लोग घर न जाकर टेलिफोन एक्सचेंज (अपने आफिस में duty off होते हुए घर जाकर फिर आफिस) में आकर बैठ गया। उस दिन मेरी टेलिफोन आफिस से छुट्टी थी फिर भी बड़े बेटे को लेकर आफिस में बैठा हुआ था। उन दिनों साम्बा में एस.टी.डी. सुविधा नहीं थी।

आश्चर्य की बात, आफिस में बैठा मैं सोच रहा था गुरुदेव को कैसे खबर करूँ, उन्हें बताना और उनका आशीर्वाद लेना तो बहुत जरूरी है; कि तभी देहली से फोन आ गया। ड्यूटी पर न होते हुए भी मैंने फोन उठा लिया। जिनका काल था उनसे बात न हो सकी। मैंने दिल्ली वाले आपरेटर से प्रार्थना किया कि दिल्ली में मेरे पिताजी हैं उनको बच्चे की बीमारी व गम्भीर हालत के बारे में बताना जरूरी है। इतना सुनकर उसने गुरुदेव का नम्बर मिला दिया। दोपहर डेढ़ बजे का समय था। गुरुदेव भोजन के लिए बैठे थे। उन्होंने फोन उठाया बोले-''इस वक्त कैसे ?'' मुझसे बोला नहीं जा रहा था, रूँधे गले से मैंने

बताया कि छोटा बेटा बीमार है। जीवन मृत्यु के बीच की स्थिति है। उन्होंने मुझसे विस्तार से बच्चे के विषय में पूछना चाहा परन्तु मैं बोल न सका। बार-बार गला भर आता। मैं फोन पर भी रोता रहा। गुरुदेव थोड़ी देर चुप रहे, मैंने सोचा शायद फोन कट गया। पर नहीं, दो मिनट बाद आप बोले-''बेटा शुक्र है, जो होना था हो लिया, अब शाम को बताना उसकी तबियत कैसी है।'' इतना कहकर फोन उन्होंने बंद कर दिया। यह घटना 24 सितम्बर 1992 की है। बाद में मैंने फैमिली वार्ड में फोन लगाया। पता चला कि बच्चा अब होश में आ गया है। आप जल्द से जल्द दूध लेकर आ जाएं। गुरुदेव के पास खबर पहुँची नहीं कि उनकी कृपा मेरे बेटे पर हो गयी। वाह रे मेरे प्रभू, आपने यम से मेरे बेटे को बचा लिया। प्रभू! आप कितने कृपालु हैं। हम माँगने से चूकते नहीं, और आप देने से थकते नहीं। उन्होंने इस बात की चर्चा न करने के लिये मुझे कहा भी था। परन्तु मैं ऐसा कैसे करूँ प्रभू! आज आप नहीं हैं, हम दुनियादार उस सूक्ष्म रूप को क्या समझें जिसकी आप चर्चा प्रवचन में करते रहते थे। आपसे जो कृपा समय-समय पर मिलती रही है उसे कैसे भूलें? वह स्मृति स्तुति ही तो आज हमारी पूजा है। हर रोज गुरुदेव बच्चे की हालत के विषय में जानना चाहते। एस.टी.डी. सुविधा न होते हुए भी दिल्ली का फोन आता रहा और मैं प्रार्थना करके उनको सारी खबर से अवगत कराता रहा। 1992 का दशहरा भण्डारा नजदीक आ रहा था। गुरुदेव ने मुझे बताया कि अब मैं गाज़ियाबाद जा रहा हूँ। तुम जल्दी करके बेटे को तब तक घर न ले आना जब तक डाक्टर न छुट्टी दे दें। एक हफ्ते बाद बेटे को छुट्टी मिल गयी। भण्डारे (दशहरा) में आने से गुरुदेव ने मना कर दिया था।

एक बार ही नहीं उन्होनें अनेक बार मेरे उपर कृपा की है। ऐसी कृपा को हम दुनियाँदार लोग चमत्कार कहते हैं। नौकरी में मेरा मन नहीं लगता इस बात को गुरु देव अच्छी तरह से जानते थे। उन्हीं के प्रेरणा और आज्ञा से मैं मन न लगते हुऐ भी नौकरी करता रहा। 1999 में एक दिन कमांड़िग आफिसर से मेरा झगड़ा हो गया। क्रोध तो मुझे वैसे भी बहुत आता है उस दिन तो क्रोध में गुरूदेव के लिये भी कुछ अपशब्द बोल गया। मेरी पोस्टिंग श्रीनगर में था। गुरूदेव से कह दिया कि यहाँ मेरी जान को खतरा है, आप हमेशा कहते हैं कि नौकरी मत छोड़ना। मेरी क्रोध भी आवाज़ सुन कर आपने कहा-''तुम मेरे ऊपर नाराज़ होते हो, मुझे दोषी समझते हो, तो नौकरी छोड़ कर चले आओ। मैंने भी न आव देखा न ताव उसी दिन Discharge from Service Application देकर मैं गाज़ियावाद गुरूदेव के पास आ गया। उनके पास पहुँचा तो वह मुझे समझाने लगे-''बेटा मंहगाई इतनी है कहीं और नौकरी करोगे तो इतनी सुविधा तुम्हें नहीं मिलेगी। और न इतना पैसा ही मिलेगा। तुम जो उस दिन इतना नाराज होकर बोल रहे थे इससे मैं बहुत दुःखी हो गया था और मैंने भी कह दिया कि काम छोड़ दो।

मेरा अब भी यही विचार है कि तुम अपना कार्य-काल पूरा करो।'' मैं उनसे बहस करने लगा और यह साबित करने लगा कि मैं ठीक हूँ मेरे आफिसर गलत हैं। बार-बार इसी बात की पुनरावृति से गुरुदेव थोड़ा नाराज हो गये और गम्भीर होकर बोले-''बन्द करो इस बात को'' और उन्होंने एक दम मौन साध लिया। मैं अन्दर ही अन्दर कुछ भयभीत सा हो गया और घर आकर 60 दिन की वार्षिक छुट्टी होते हुये भी 40 दिन पर ही वापस लौटने के लिये रिजर्वेशन करवाया। पेन्शन पाने के लिये सारे कागजात भी तैयार कर लिया था। इन सब तैय्यारी के बाद भी जाने वाले दिन मुझे बड़ी घबराहट होने लगी। मैंने अपने पिताजी से कहा-''कुछ भी हो मैं वापस नौकरी करने नहीं जाऊँगा,'' पिता जी भी चिन्तित हो गये उन्होंने गुरुदेव को फोन किया उन्हें तो सब मालूम हो गया। वह तो पिताजी से कुछ नहीं बोले पर कुछ घण्टे ही बीते थे कि दिनेश भाई साहब और माया दीदी आ गये। उन्होंने मुझसे कहा ''तुम आज मत जाओ। जब छुट्टी ख़त्म होगी तब जाना। मैं पूज्य गुरुदेव से इस विषय में बात करूँगा।'' गुरुदेव से उनकी फोन पर बात हुई पूज्य गुरुदेव ने दिनेश भाई साहब से कहा-''चेतन की भलाई इसी में है कि वह आज ही वापस अपने कार्य पर लौट जाये। बाकी आपकी मर्जी जो चाहे वो करें।'' गुरुदेव से इतनी बात सुनकर दिनेश भाई साहब ने मेरे मर्जी के विरुद्ध भाई से कहा कि ले जाओ इसे ट्रेन में चढ़ा आओ। तैय्यार हो तो आनाकानी किस बात ही?

बेमन से मैं चला गया। मन में कुछ गुरुदेव के प्रति रोष भी था कि उन्होंने मेरी प्रार्थना स्वीकार क्यों नहीं किया। वाह क्या सुखद आश्चर्य था जब मैं श्रीनगर पहुँचा तो मेरे साथियों ने बड़ी प्रसन्नता से मेरा स्वगत किया। गुरुदेव को फोन किया तो वह भी बहुत खुश हुये। सबसे आश्चर्य तो तब हुआ जब मैं अपने यूनिट में पहुँचा। यूनिट के जिस कमांडिंग आफिसर से झगड़ा कर मैं नौकरी छोड़ कर भागा था उनकी वहाँ से बदली हो गई। न जाने क्या आकर्षण उनमें था कि उनके सामने मैं भोला बन जाता और मेरी सारी अकड़ गायब हो जाती। वह मुझे बराबर अपना कार्यकाल पूरा करने की सलाह देते। उन्होंने Discharge from Service का मेरा आवेदन पत्र भी कैंसिल (रद्द) कर दिया। इस बात के लिये मैं तैय्यार नहीं हो रहा था तब उन्होंने सिगनल रेकॉर्ड आफिसर को एक पत्र डाल कर मेरा स्थानान्तरण पठानकोट करा दिया। वह भी दूसरे यूनिट में चले गये। यह था गुरुदेव का चमत्कार। मेरा मिथ्या गर्व तो उन्होंने चूर किया ही भविष्य में मेरी पेन्शन आर्थिक बढ़ोतरी भी हुई क्योंकि कार्यकाल पूरा होने पर पूरी पेन्शनकाल के लिये हुआ।

फौजी माहौल में मुझे शराब पीने की आदत पड़ गई। अन्दर ही अन्दर मैं इसे बुरा समझता और सोचता कि गुरुदेव की निगाह में मैं गलत काम कर रहा हूँ पर फिर भी साथ में पीने से अपने को रोक नहीं पाता। आखिर एक दिन अन्तर्द्वन्द से परेशान होकर

मैंने गुरुदेव से प्रार्थना किया कि पिता जी मुझमें से इस अवगुण को दूर कर दीजिये। अन्दर ही अन्दर मैं अपने अपराध को समझ रहा हूँ जिससे मैं स्वयं को बहुत अपमानित महसूस कर रहा हूँ। उन्होंने आशीर्वाद दिया ''प्रयत्न करो मेरी शुभ कामना सदैव तुम्हारे साथ है।'' न जाने क्या जादू था उनके पत्र में, धीरे-धीरे मैं इस गलत आदत से मुक्त हो गया। मैंने जिस भी दुःख दर्द के लिये उनसे निवेदन किया उनकी कृपा से सब का निवारण होता गया। मेरी नौकरी को तो उन्होंने पूरे कार्यकाल तक अक्षुण रखा ही परन्तु जब मैंने अपने बड़े बेटे के लिये आपसे निवेदन किया तो उन्होंने उस पर भी कृपा किया।

मेरी पत्नी बराबर बीमार रहने लगी थी। उसको जब-तब टान्सिल से बहुत कष्ट हो जाता था। दवा करते-करते मैं परेशान हो गया था। एक दिन मैंने गुरुदेव से निवेदन किया, सारी बात बता दी साथ ही यह रोना भी रो दिया कि पेन्शन से तो घर का खर्च चलता नहीं फिर आये दिन की बीमारी हारी मैं कैसे पूरा करूँ? उस समय बड़ा बेटा नौकरी में नहीं आया था। मेरी बात सुनकर वह आश्चर्यचकित हो गये। थोड़ी देर बाद बोले ''दो दिन के लिये दवा बन्द कर दो।'' मैंने दवा बन्द कर दिया पत्नी को आराम मिला, मगर उसे सन्तुष्टी नहीं हुई। दो दिन बाद उसने गुरुदेव से दवा के विषय में पूछा तो गुरुदेव ने कहा ''किसी डाक्टर को दिखा कर दवा ले लो।'' यह कह कर उन्होंने फोन बन्द कर दिया। न जाने क्यों उनके इस उत्तर से मैं बहुत परेशान हो गया। थोड़ी देर बाद मैंने उनको फिर फोन किया। उन्होंने कहा-''तुम्हारी पत्नी डाक्टर को दिखाने के लिए कह रही है तो उसे डाक्टर को दिखा दो''। मैंने निवेदन किया पिता जी मेरी पत्नी क्या कह रही है इसे आपने गाजियाबाद में कैसे जान लिया? एक बार पुनः मैं उनसे बहस पर अड़ गया कि मैं कुछ नहीं जानता जिस डाक्टर की दवा दो रोज पहले आपने बन्द किया था, मुझे पैसे के आभाव में उसी के पास जाना पड़ेगा, फिर दो दिन दवा लेने क्यों नहीं गया बताना पड़ेगा। यदि उसने आपके लिये कुछ अपशब्द कह दिया तो मैं सह न सकूँगा। पत्नी के पीछे कोई आपको कुछ कहे यह मेरे बर्दाश्त के बाहर की बात है भले ही पत्नी को कुछ हो जाये मुझे मंजूर है। आप हमारे इस व्यवहार के लिये क्षमा करें।'' कितने कृपालु थे मेरे दयानिधी हमारी अभद्रता को तो क्षमा किया ही और बिना किसी दवा के पत्नी की सारी बीमारी गायब हो गई। उन्होंने मेरे अभद्र व्यवहार को क्षमा करते हुये जो कृपा और सम्मान दिया है वो भला कोई और दे सकता है? इस तरह अपने बच्चों को तो केवल भगवान की क्षमा करते हैं।

जापर जाको सत्य स्नेहु ताहि मिले कछु नहीं सन्देहू

वीना सक्सेना
दिल्ली

सत्संग से सम्पर्क मेरा बचपन से था। माँ व मौसी के साथ मैं बराबर सत्संग में जाती थी। मौसी के घर इलाहाबाद तो बराबर दादा गुरूदेव व गुरूदेव आते थे। दो तीन दिन लगातार सत्संग होता था। हम लोग छोटे थे सत्संग की वास्तविकता से अनजान थे। फिर भी न जाने कैसा आकर्षण था कि जब दादा गुरूदेव डा. श्री कृष्ण भटनागर साहब व ताऊ जी डा. करतार सिंह साहब मौसी के घर इलाहाबाद आते थे तो हम लोग सब भाई-बहन (मौसी के बच्चे) बहुत खुश होते। किसी तरह का बन्धन न होते हुए भी शादी के बाद यह क्रम कम हो गया, हालांकि ससुराल में सभी लोग सत्संगी थे। 1970 में मेरे पति का स्थानान्तरण कलकत्ता हो गया। पति अपने कार्य में व्यस्त, मैं घर गृहस्थी व बच्चों में उलझ गई, देहली आना कठिन हो गया। पूज्यनीय ताऊजी का पत्र आता रहता था। अक्सर मन करता कि ताऊजी के पास जाना है। इनकी व्यस्तता और बच्चों की पढ़ाई के कारण मैं इनसे भी कुछ न कह पाती। मेरा संकोची स्वभाव प्रभू से कहाँ छिपा था?

जापर जाको सत्य सनेहु,
ताहि मिले नहीं कुछ संदेहु।

एक दिन डोर बेल बजने पर जब मैंने दरवाजा खोला तो आश्चर्यचकित रह गई। सामने ताऊ जी खड़े थे। उनके साथ पाठक जी और दो चार सत्संगी भाई थे। मेरी खुशी का ता कोई ठिकाना ही न रहा। मिठाई का डिब्बा मुझे पकड़ाते हुये बोले-''मैं अपनी बेटी से मिलने आया हूँ। मैं विस्मृति सी उन्हें देख रही थी। थोड़ी देर बैठ कर हम लोगों का हालचाल पूछते रहे। बच्चों से कुछ बात करके चले गये। हम लोगों ने बहुत चाहा कि एक दिन हमारे घर रहें किन्तु उसी दिन उनका देहली वापस जाने का आरक्षण था।

1989 में मेरे पति का स्थानान्तरण देहली हो गया। मन ही मन मैं बहुत प्रसन्न थी कि अब सत्संग में जाने का, अवसर बराबर मिलेगा। देहली आने पर मैं सपरिवार पहाड़गंज आपसे मिलने गई। लौटते समय पतिदेव व बच्चे तो झट से सीढ़ियों से नीचे

उतर गये। मैं खोई सी धीरे-धीरे उतर रही थी। आप हम लोगों को छोड़ने सीढ़ियों तक आये और बोले ''बेटी बराबर सत्संग में आती रहना।'' अहा! कानों में मधुरस घुल गई मन हर्षित हो गया पूरा शरीर एक विचित्र स्पन्दन से स्पन्दित हो उठा। मैं सोचती रही कि केवल मुझे ही क्यों कह रहे हैं। इन लोगों से तो कुछ भी आने के विषय में नहीं बोले। बाद में सब स्पष्ट हो गया। बच्चे पढ़ाई व पतिदेव काम के कारण कभी मेरे साथ सत्संग में नहीं गये। मैं अकेले ही जाती रही रविवार को ।

सुबह तो जाती ही थी कभी-कभी बृहस्पतिवार को शाम को भी चली जाती। एक दिन बृहस्पतिवार को सत्संग के बाद मैं वापस सीढ़ियों की ओर बढ़ रही थी तभी आपने कहा 'बेटी' शाम के सत्संग में मत आया करो। घर दूर है और रात अधिक हो जाती है। घर पहुँचने में देर हो जाती है अतः रविवार के सुबह के सत्संग में आया करो। ''जी अच्छा'' कह कर मैं चली आई। बस स्टैण्ड पर पहुँच कर जैसे ही मैंने बस में चढना चाहा बस चल पड़ी और मैं नीचे गिर गई। बस तो चली गई मैं किसी तरह से उठी पैर में काफी चोट आई। आटो से घर वापस आई। मैं सोचती रही ताऊजी की दिव्य दृष्टि ने क्या देखा जो मुझे किसी बड़ी दुर्घटना से बचा कर छोटी से ही निपटारा कर दिया। संकेत मात्र से बड़ी बात छोटे में ही निपट गई।

एक नहीं अनेक बार उनकी कृपा का आभास मुझे जीवन में हुआ है। रविवार को सत्संग के बाद एक बार मैं जब चलने को हुई तो आपने मुझे रोक लिया बोले-''बेटी रुको, मेरे साथ गंगाराम अस्पताल चलना है।'' वहाँ उनकी पौत्रवधु भर्ती थीं। उसे ही देखना था। जब हम अस्पताल पँहुचे तो मिलने का समय समाप्त हो चुका था। गेटकीपर ने हमलोगों को जाने नहीं दिया। सब असमंजस में पड़ गये तब मैंने उससे कहा कि मेरी बेटी शिखा यहाँ डाक्टर है और उससे हमलोगों को मिलना है। तब उसने हमें अन्दर जाने दिया। हम लोग उनकी पौत्रवधु के रूम में बैठे हुये थे तभी पूज्या ताई जी ने पूछ ''बीना, शिखा की शादी की बातचीत कहाँ कर रही हो?'' मैं कुछ भी उत्तर न दे पाई। स्वयं ताऊ जी ने कहा बस अब जल्द ही उसकी शादी की बारी है। मैं सुनकर चकित हो गई। आश्चार्य तो तब हुआ जब सचमुच दस बारह दिन के अन्दर शादी तय हो गई। कैसी कृपा थी सहज ही हर कठिनाई से निकाल देते थे।

चमत्कार कहूँ, कृपा कहूँ, क्या कहूँ, कुछ समझ नहीं आता। समय-समय पर अनेक कृपा हुई हैं आपकी। 1992 में हम लोग सरकारी आवास छोड़ कर पश्चिम विहार अपने मकान में आ गये। मेरी बड़ी इच्छा होती थी कि ताई जी एक बार हमारे घर आकर हम लोगों को अपना आशीर्वाद दें। हर रविवार को मैं उनसे कहने के लिये

सोच कर जाती। पर वहाँ जाकर उनसे कह न पाती। न जाने क्या हो जाता था। मेरी बात मेरे मन में ही रह जाती। उन अन्तर्यामी से भी भला क्या कुछ छिपा रह सकता था? एक दिन रविवार को सत्संग के बाद स्वयं बोले ''बेटी अगले शनिवार को सत. संग के लिए तुम्हारे घर आने का विचार है'' आह! अन्धा क्या चाहे दो आँख, मैं तो खुशी से फूली न समाई। इतना ही बोल पाई, ''आप सब लोग आइयेगा। दोपहर का भोजन भी वहीं कीजियेगा।'' बोले ''ठीक है, 'बस प्याज लहसुन मत डालना।'' उनकी कृपा व प्रेम रस वर्षा से मैं विभोर थी। समझ में नहीं आ रहा था क्या करूँ। बिन माँगे, बिन बोले आपकी कृपा धार में डूब जो गई होश ही कहाँ रहा? उस दिन पास ही रहते थे लाल भाई साहब व शान्ता चाची उन्हें भी उस दिन आने के लिये विनती किया। सभी सत्संगी भाई बहनों का न तो मुझे पता मालूम था और न फोन नम्बर ही था मेरे पास। अन्तर्यामी मेरे ताऊ जी सबको कितना प्यार और मान देते थे। यह अपूर्व प्रेम ही तो था जो स्वतः ही किसी का मन उनके चरणों में समर्पित हो जाता था। ताऊ जी के श्री चरणों में मेरा प्रणाम।

मदद का अनोखा तरीका

ऊषा शर्मा
दिल्ली

पूज्य गुरुदेव के दर्शन का सौभाग्य मुझे दिसम्बर 1976 में भाई भायला जी के निवास स्थान पर मिला। फिर तो देहली में पहाडगंज में मैं बराबर आपके निवास स्थान पर जाने लगी। सत्संग के आनन्द के साथ-साथ गुरुदेव का अपूर्व प्रेम भी मिलने लगा।

बात सन् 1983 की है मुझे ट्यूमर का आप्रेशन कराना था। जब-जब मैं गुरुदेव से इस विषय में पूछती वह बराबर टाल जाते। एक दिन सवेरे पूजा के बाद बोले ''बेटी आपरेशन कराना है तो करा लो।'' मैं राममनोहर लोहिया अस्पताल गई। मेरा दूसरा नम्बर था। डाक्टर साहब ने मेरा रक्तचाप लेने को और एक बार पुनः अल्ट्रासाउण्ड कराने को कहा। जब अल्ट्रासाउण्ड हुआ तो उसमें ट्यूमर का कहीं नामोनिशान भी न था। इस प्रकार मेरा आपरेशन नहीं हुआ। इसके पहले मैंने जितनी बार राममनोहर लोहिया में दिखाया था हर बार अल्ट्रासाउण्ड में ट्यूमर रिपोर्ट में आया थ। इसके पहले मैने सेण्ट स्टीफन में भी दिखाया था और जितने बार भी अल्ट्रासाउण्ड हुआ ट्यूमर का आकार बराबर बढ़ता ही गया। मेरा आपरेशन तो नहीं हुआ क्योंकि उस समय ट्यूमर था ही नहीं। वापस आकर जब मैंने गुरुदेव से निवेदन किया तो आँख बंद कर हाथ दोनों ऊपर करके बोले ''सब ऊपर वाले की कृपा है।'' आपरेशन से वैसे भी मैं बहुत डरती थी। मुझे उन्होंने बचा लिया। कैसे थे मेरे गुरुदेव जहाँ मैंने पुकारा वहीं मद्द को आ गये।

अनायास ही बिना बात के कभी-कभी मन उदास हो जाया करता किन्तु उनके पास जाने पर बिना प्रश्न किये उत्तर मिल जाता और मन की उदासी गायब हो जाती। एक बार की बात है मैंने स्वप्न देखा कि दिल्ली के सत्संगियों की सूची में मेरा नाम नहीं है। मैं उदास हो गई। सुबह रविवार था मैं पहाड़गंज पूजा में गई। माता जी ने कहा ''झुंझनू वाली ऊषा आई है।'' इस पर गरुदेव बोले ''मैं जानता हूँ कि यह झुंझनू वाली ऊषा है, बिना कुछ कहे ही मेरी परेशानी हल हो गई, उदासी मन से खत्म हो गई।

मेरा तबादला अलवर से बहरोड़ हो गया था उसी बीच झुंझनू में अगस्त का भण्डारा था। मैं और मेरी मित्र सन्तोष गुप्ता दोनो भण्डारा में झुंझनू गये। भण्डारा समाप्ति के बाद हम गुरुदेव के साथ ही ट्रेन से रवाना हुये। रेवाड़ी स्टेशन पर उतर कर हम दोनों ने चन्द्रा भाई साहब के साथ ही गुरुदेव से आशीर्वाद लिया। प्रातः तीन बजे का समय था गाड़ी रूकी हुई थी। आपने चन्द्रा भाई साहब को बुला कर कहा मेरी बेटी को सुरक्षित बहरोड़ पहुँचा देना। ट्रेन चली गई हम दोनों चन्द्रा भाई साहब के निवास स्थान पर गये। वहाँ से दैनिक कार्यो से निवृत्त हो कर हमने नाश्ता किया। उसके बाद उन्होंने हमें बहरोड़ की बस में बैठा दिया। जिस प्रसन्नता से उन्होंने हमारे लिये कष्ट उठाया उससे मेरा अन्तरमन भीग उठा। ऐसी कृपा मुझ पर की।

एक बार उन्होंने मुझे रिटायर होने से पहले ही रिटायरमेन्ट ले लेने को कहा। खेद है उस वक्त मैंने उनकी बात को नजरअन्दाज कर दिया। किन्तु बाद में नौकरी की अवधि पूर्ण होती उससे पहले ही मैंने अवकाश ग्रहण कर लिया। बाद में जब मैंने उनको इस बात से अवगत कराया तो बोले, चल आखिर तूने मेरी बात मान ली। अब मैं देखती हूँ बहुत शान्ति से जीवन यापन कर रही हूँ।

कम्बोज साहब के यहाँ बाँदीकुई में भण्डारा था। पूजा जैसे ही समाप्त हुई मैंने आपसे जाने की आज्ञा माँगी क्योंकि ट्रेन टाईम हो गया था। मुझे देख कर बोले ''प्रसाद पा लिया।'' मैंने कहा ''जी नहीं मुझे देर हो जायेगी।'' आप बोले–''कित्थे नंई जान्दी तेरी रेलगाड़ी प्रसाद खा कर जा।'' मैंने आज्ञानुसार प्रसाद ग्रहण किया और जब स्टेशन पहुँची तो ट्रेन एक घण्टा लेट थी। ऐसे थे चमत्कारी मेरे गुरूदेव उन्हें सब मालूम हो जाता था। मन में उठे प्रश्नों या द्विविधा का सहज ही उनके पास जाकर समाधान हो जाता था। 15 अगस्त 1988 में झुंझनू भण्डारे पर मैंने उनसे अपने पिता जी की बीमारी के विषय में निवेदन किया। कुछ देर चुप रहने के पश्चात् बोले ''आज तो वह ठीक हैं, उसके बाद तेरा पिता मैं हूँ।'' सितम्बर 1988 में मेरे पिता जी का स्वर्गवास हो गया और मेरे वास्तिविक पिता जी 15 जून 2013 को हम सबको छोड़ कर चले गये। मैं तो पितृविहीन हो गई। 12 मई 2012 को जब मैं उनसे मिलने गई तो उन्होंने मुझसे कहा–''तुम अकेली देहली से गाज़ियावाद सत्संग के लिये मत आया करो। तुम मुझे बुला लेना मैं आ जाऊँगा।'' वह आज भी हमारे साथ हैं। मेरी एक ही प्रार्थना है ''गुरुदेव! अपनी शक्ति, व शान्ति सत्संगियों में भर दीजिये, आपमें जो दीनता थी वह हम सब में उतर आये कुछ ऐसी कृपा हो जाये।

ईसा की क्षमा, बुद्ध की दया थी हमारे गुरूदेव में।
खुदा की रहमत अहमद का फैज था हमारे गुरूदेव में।
राम का प्यार कृष्ण का दुलार था हमारे गुरूदेव में।
नानक का नूर था हमारे सच्चे करतार में।

मेरे कृपालु

सर्वजीत
दिल्ली

सन्त महात्मा तो इस पृथ्वी पर आते ही हैं सबके दुःख दर्द मिटाने के लिये। हमारे गुरूदेव भी ऐसे ही थे। सबकी चिन्ता, परेशानी सहज ही सुलझा देते थे। घर में लड़की सयानी हो तो माँ बाप की नींद वैसे ही उड़ जाती है। मेरे माता–पिता का भी यही हाल था। मेरी बुआजी मुझे लेकर व साथ ही मेरी जिठानी और उनके देवर जो अब मेरे पति हैं, को लेकर पहाड़गंज गुरूदेव के दरबार में गईं। हम साथ में फूल माला व कुछ मिठाई भी ले गये थे। बिना कुछ कहे दो माला उठाकर एक मेरे और एक मेरे होने वाले पति के गले में उन्होंने डाल दिया। इस प्रकार गुरूजी ने अपना निर्णय सुना दिया। उनकी कृपा से मैं बहुत सुखी हूँ। सत्संग में पहाड़गंज हम बराबर जाते थे। उस समय मैं गर्भवती थी। नई–नई बात थी बराबर कल्पनाओं में खोई रहती थी। पूजा हो रही थी, साधना के समय अचानक मेरे मन में एक अजीब विचार उठा कि न जाने कौन सी सन्तान होगी। अपने विचार पर मैं हैरान थी। पूजा समाप्त होने पर गुरूदेव सबको फूल दे रहे थे, मुझे उन्होंने सफेद रंग की एक कली दी। उस समय तो मैं कुछ नहीं समझी पर जब मेरी कन्या ने जन्म लिया, तब मैं समझ गई कि कली का क्या आशय था।

गाज़ियाबाद सत्संग में मैं देहली से बुआ जी के साथ जा रही थी। मेरे कारण जाने में देर हो गई थी। इस देरी के कारण रास्ते भर बुआ जी मुझे डाँटती रहीं। मैं मन ही मन प्रार्थना कर रही थी गुरूजी मैं समय से पहुँच जाऊँ आपके दर्शन हो जायें नहीं तो बुआजी नाराज़ होंगी। पूजा तो समाप्त हो गई थी, परन्तु गुरूदेव नीचे बैठे खन्ना जी से बात कर रहे थे। सत्संगी लोग सभी जा चुके थे। हम लोगों को देख कर गुरुदेव मुस्कराये। रास्ते की मेरी प्रार्थना आप ने सुन ली थी। हमें प्रसाद अपने हाथों से दिया और खूब बातें की। जब भी यह बातें याद आती हैं आँखे भर आती हैं। कितने कृपालु, कितने दयालु थे हमारे गुरूदेव।

दया

शेफाली
दिल्ली

हम अपने दुःख दर्द को लेकर ही तो संत महात्मा को पास जाते हैं। रोग ठीक हो जाये, घर में बेटे की नौकरी लग जाये, बेटी की शादी हो जाये। यही चाहते हैं यही माँगते हैं। सत्संग में तो मैं भी जाती थी। कभी उनसे जिस विभूति की वर्षा वह कर रहे थे नहीं माँगा। माँगती रही केवल संसार के सुख। मेरी शादी तय हो गई थी। सगाई भी हो गई थी। परन्तु गले में इन्फैक्शन हो गया था। घर वाले बहुत परेशान थे कि अगर ससुराल वालों को पता चलेगा तो रिश्ता टूट जायेगा। इस बात को जब गुरुदेव को बताया तो उन्होंने कहा ''चिन्ता मत कर खूब दूध पी।'' एक होप्योपैथिक दवा लिख कर दी। दवा खाने से मेरा गला ठीक हो गया।

मेरे पाँच वर्षीय बेटे को डाक्टर ने साइनस बताया और कहा कि आपरेशन करना पड़ेगा। जब मैंने गुरुदेव से निवेदन किया तो आपने कहा–''चिन्ता मत कर। आपरेशन की जरूरत नहीं है।'' उन्हीं की दवा और दुआ से मेरा बेटा ठीक हो गया'।

कृपा

दुर्गा अग्रवाल
लखनऊ

यह बात 1979 की है। मेरे पतिदेव श्री रामचन्द्र अग्रवाल की पदस्थापना भभुआ में श्री। कुछ हफ्तों से वह अस्वस्थ चल रहे थे। थूक के साथ मुँह से खून आ रहा था। एक्सरे करवाया परन्तु कुछ भी नहीं निकला। तब भी हम लोग बहुत डरे और चिन्तित थे। कुछ अच्छा होना होता है तो इसी तरह अचानक हो जाता है प्रभु ऐसे ही कृपा करते हैं। 23 नवम्बर को अचानक दिनेश भाई साहब हमारे घर आये और इनसे बोले-''जज साहब हमारे गुरूदेव आये हैं आप दर्शन के लिये चलेंगे।'' उन्होंने अपनी सहमति दे दी। शाम को हम लोग पूज्यवर के दर्शन हेतु दिनेश भाई साहब के साथ गये। आह! क्या भाग्य था हमारा, मानव शरीर में हम दोनों को साक्षात प्रभु के दर्शन हुये। हम तो दर्शनमात्र से ही सुध-बुध खो बैठे। मुस्कुराते हुये आपने पूछा-''कहिये जज साहब! मैं आपकी क्या सेवा करूँ?'' कुछ देर इधर-उधर की बात करने के बाद इन्होंने अपनी बीमारी के विषय में गुरूदेव से अर्ज किया जिसके कारण हम लोग बहुत चिन्तित थे। गुरूदेव ने इनको कुछ हिदायत दी। उनकी बातों से हमारी चिन्ता समाप्त हो गई और बीमारी भी, ऐसी ही हमें अनुभूति हुई। न जाने ऐसा क्या हुआ कि हम, हम न रहे। एक अजीब सा नशा हम पर छा गया। हमने दीक्षा के लिये निवेदन किया। हमारे अहोभाग्य प्रथम दर्शन मात्र से ही हम मदमस्त हो गये, दीक्षा की भी स्वीकृति मिल गई। 24 नवम्बर 79 को प्रातः हम दोनों फूल माला व प्रसाद लेकर गुरूदेव के श्री चरणों में बैठे और दीक्षा हो गई। दर्शन कर तो सुध-बुध हम खो ही बैठे थे दीक्षा के समय तो हम, हम नहीं रहे। वह अनुभूति अवर्णनीय है। गुरू महाराज से हमारा प्रथम साक्षात्कार था और उसी में उन्होंने हमारी दुनियाँ ही बदल दी।

यह घटना उस समय की है जब मेरे पतिदेव काफी बीमार थे, हम लोग अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् लखनऊ में रह रहे थे। इनकी पीठ व कन्धे में असहनीय पीड़ा होती थी जिसके कारण सोना बैठना सभी मुश्किल हो गया। एक दिन सतीश भाई साहब ने इनसे कहा कि आप अपनी तकनीक के विषय में गुरूदेव से प्रार्थना कर दीजिये। मरता क्या न करता, इन्होंने गुरूदेव को अपने कष्ट के विषय में लिखा।

हम लोगों को नहीं ज्ञात कि पीड़ा कहाँ गायब हो गई या इन्हें उसका अनुभव होना ही बन्द हो गया। दर्द का एहसास तो बन्द हो गया लेकिन डेढ़ दो महीने बाइ जज साहब ही संसार से जून 2000 में चले गये।

प्रथम मिलन

आर.पी. शिरोमणी
आगरा

सन 1967 में मैं शिकोहाबाद में कार्यरत था। मेरी शादी सुनिश्चित हो चुकी थी। ससुर जी डा. आशाराम जी ने मुझे अवगत कराया कि एक बहुत बड़े सन्त पधारे हैं आप मिल लें, उनके दर्शन एवं मदुल हास्य से मैं बहुत प्रमाणित हुआ। वह मानव सेवा संघ प्रणेता स्वामी शरणानन्द जी महाराज थे। वहाँ सत्संग में एक सज्जन ने प्रश्न किया ''स्वामी जी संसार क्या है?'' स्वामी जी ने हास्य में उत्तर दिया–''अपने मैं को खोजो। जब खोज लेना मेरे पास आना मैं बता दूँगा संसार क्या है।'' इस वार्ता से ''मैं कौन हूँ'' ने मेरा जीवन प्रश्न बना दिया। सन 1977 तक मैं इसको न जाने कहाँ–कहाँ तक खोजता रहा, परन्तु ''मैं'' को खोज न सका न उससे मिल सका। गुरुकुल एटा में रामाश्रम सत्संग से जुड़े एक सज्जन से परिचय के उपरान्त मैं उनके पास जाता रहा, परन्तु उत्तर न पा सका, हाँ शान्ति अवश्य मिली। स्वामी जी महाराज, बहन देवकी, माँ आनन्दमयी के सान्निध्य में रह कृपा हुई किन्तु प्रश्न पूर्ववत बना रहा। एटा में पूज्य नरेन्द्र सिंह चौहान से मिलना हुआ, वार्ता हुई, समस्या बतायी। एक दिन उन्होंने बताया कि रामाश्रम सतसंग के आचार्य श्री, दिल्ली से आगरा पधार रहे हैं। मैं समझता हूँ मन का मन्थन अपने चरम पर पहुँच चुका था, भाग्य ने साथ दिया। गुरु मिलन की अमीप्सा ''मैं कौन हूँ'' की माँग ढूंढ़ने की श्रांत शायद मन पर भारी थी। पूज्य स्वामी शरणानन्द जी का आशीष, पूज्य देवकी बहन की कृपा, पूज्य आनन्दमयी माँ के सान्निध्य की शीतलता, शेष वात्सल्य से अभिसिंचित माँ एवं पूर्वजों की दया कृपा से भूख ऐसी जगी जो मिटने को तैय्यार ही नहीं थी।

पूज्य श्री गुरुदेव से मिलने के लिये मन बेचैन हो उठा, बद्धि पर मन आरूढ़ हो गया, तर्क समाप्त होने लगे। मैंने व्याकुलता सहधर्मिणी को बताई, मैं कुछ भी मानने को तैय्यार नहीं मुझे मिलने जाना है। पूज्य पिताजी ने कुछ कारणवश निरूत्साहित किया, परन्तु किसी तरह जाने में सफल हुआ। मोटर साइकिल से एटा से आगरा लगभग सौ किलोमीटर है, कमलेश को लेकर चल पड़ा। भीषण गर्मी, हम दोनों बेहाल चले जा रहे थे, कुबेरपुर छलेशर पर काफी जंगल हैं। एकदम भीषण वर्षा चारों ओर

पानी एवं फिसलन, आँधी तूफान के साथ ही शिलावृष्टि भी होने लगी। सर छिपाने के लिये कहीं कोई जगह नहीं। पेड़ जंगली बबूल कहीं सर छिपाने के आश्रय नहीं। सोचा, पिताजी का कहा माना नहीं अतः भुगतो। शिलावृष्टि के मार से हाथ मुँह दुःखने लगा। प्रभू याद बिना देखे गुरुदेव की याद इसके अतिरिक्त कौन था वहाँ, सारे आश्रय समाप्त, मोटर साइकिल डगमगाने लगी। क्या करें कुछ सूझ नहीं रहा था। तभी दूर एक कोठरी दिखाई दी। जा के उसमें खड़ा हो गया। थोड़ी देर में चार पाँच लोग वहाँ और आ गये। उनकी गतिविधी देखकर हमें लगा कि उनकी मनोवृति ठीक नहीं है। इतने में एक व्यक्ति चिल्लाया 'सांप-सांप-सांप' वह सब हटकर एक ओर खड़े हो गये। हम दोनों बाहर आ गये हमें सांप या ऐसा कुछ नहीं दिखाई दिया। हम लोग वहाँ से चल दिये रास्ते में पानी के कारण चलना कठिन हो गया था। इस तरह हम आगरा पहुँच गये। गुरू महाराज विभव नगर, शम्भूशरण जौहरी के घर ठहरे थे। हमने न तो उन्हें देखा था और न उनकी फोटो देखी थी, पूज्य चौहान जी से सुना था कि सरदार हैं, साफा बाँधते हैं। मैंने जैसे ही नाम पूछा सामने पूज्य गुरुदेव को देखा बाहर अब भी पानी बरस रहा था। भीगे तो थे ही परन्तु गुरुदेव ने हाथ पकड़ कर सोफे पर बिठा लिया। सर पर हाथ फेरते हुये बोले-''आखिर तुम आ ही गये।'' उस प्यार में अनोखा जादू था हम दोनों की ठंड, थकान व ओले की मार सब गायब हो गई। ऐसी शान्ति इस शब्द में थी मानों वेद वाक्य हो। सारे अनुत्तरित प्रश्न ऐसे गायब हुये, जैसे कोई प्रश्न ही न हो। थोड़ी देर आँख बन्द कर हम ऐसे ही बैठे रहे। उनका हाथ पूर्ववत सर पर था जैसे कोई बिछुड़ा बेटा मिल गया हो। दोनों ओर से निःशब्द, चेतना जैसे चिर विराम को जा चुकी हो न कुछ पूछ सका न बता सका। आप ही बोले ''दोनो ऊपर भीगे कपड़े बदल लो।'' मैं सोचे जा रहा था इन्हें मेरे आने का कैसे पता चला, रास्ते की घटनायें कैसे मालूम हुई। मेरा मस्तिष्क बिल्कुल शून्य था, लगा कितने जन्मों से मुझे जानते हैं। कब से मेरी प्रतीक्षा में थे जो कहा-''आखिर तुम आ ही गये''।

कपड़े बदल कर आया, चाय अपने हाथ से दी, सत्संग में बैठे एक ऐसी स्निग्ध शान्ति मिली जो कभी नहीं मिली थी। उस समय के सत्संग का जो कुछ याद है उस समय जीवन का आदि अन्त, जन्म, मृत्यु कुछ भी पता नहीं था। इस तरह नहलाया गया मानो सब कुछ धुल गया, नया वसन हो गया। सारी सीमायें टूट चुकी थीं। नीरव शान्ति में गोते लगा रहा था। शरीर मानो ऊपर उड़ रहा था कोई है जो सहारा दे रहा है और उड़ाये भी ले जा रहा है। कहाँ-कहाँ गया क्या-क्या देखा, अद्भुत विस्तृत, शब्दहीन, प्रकाश विस्तृत, बिना साधना वर्णनातीत, सोच उससे कई गुना ज्यादा, जो पढ़ा उससे अतिरिक्त। आँखों के आँसू हृदय सलिला में प्रविष्ट हो ब्रह्माण्ड समुद्र में मिल गये। धुल गये कुछ शेष नहीं आनन्द ही आनन्द।

एटा वापस आया। रास्ते की कोठरी कालान्तर में मन्दिर बन गई। हृदय मन्दिर बनाने के लिये प्रयत्नशील हूँ। कब तक बनेगा, जहाँ मेरे पास पूज्य श्रीगुरूदेव अनंत निवास करेंगे, और मैं समर्पित कर सकूँगा। क्या कोई बतायेगा। प्रेम की पिपासा ही कुछ ऐसी है जहाँ अभाव रहता ही रहता है। पिलाया वह सभी सन्तों का समिश्रण पेय था, गले तक छकाया। कृपा करो, कृपा करो प्रभू दया करो।

दीक्षा

29-9-1979 को मैं पूज्य भाई श्री नरेन्द्र सिंह चौहान जी के साथ कमलेश को लेकर सिकन्दराबाद पहुँचा। भण्डारे का प्रथम दिन था। मन में एक व्याकुलता थी। मुझे दीक्षा आदि के बारे में कोई ज्ञान न था। कभी स्वमी शरणानन्दजी की याद आती कि वह मुझे बहुत प्यार करते थे। तो कभी मानव सेवा-संघ की तो कभी आनन्दमयी माँ की। मेरे पिताजी व ससुरजी डाक्टर आशाराम दोनों इनसे दीक्षित थे। तरह-तरह के उत्थान से मन इधर-उधर भटक रहा था। खोया-खोया सा रहता मन किसी काम में नहीं लगता। प्यास इतनी थी-"मैं कौन हूँ" की खोज के बिना मैं खोया रहता और मन किसी काम में नहीं लगता। पूज्य गुरूदेव के दर्शन से अधिक मैं उनकी मुस्कान को देखने के लिये लालायित रहता। शरणानन्दजी के अट्टहास में जो आकर्षण था वह पूज्य गुरूदेव की सहज प्रसन्नता में डूब रहा था, मानों मुझे किनारा मिल गया हो। मन मस्तिष्क में बिजली कौंध रही थी कि समर्पण मात्र एक बार होता है सोचो, सोचो, सोचो परन्तु पूज्य गुरूदेव के प्यार में सब सारे, सोच-विचार, द्वन्द न जाने कहाँ गायब हो गये। प्रतीक्षा थी प्रातः की जब गुरूदेव से सामना होगा। भय था कि प्रार्थना स्वीकार होगी अथवा नहीं। कैसे कहूँगा कि आप मुझे स्वीकार कर लो। कैसा हूँ मैं इसका मूल्यांकन का आधार क्या? कुछ भी तो नहीं है मेरे पास, गाँव का बालग, अल्पज्ञानी कोई मेरी सिपारिस नहीं कौन कहेगा पूज्यवर से मेरी प्रार्थना की स्वीकृति हेतु अज़ब, प्रभू पर विश्वास जो कभी देखा नहीं, जिसके लिये इस दरवार में आया हूँ, उसे ही तो चाहता हूँ, उसे ही देखना चाहता हूँ। इसकी ही तो पीड़ा है। इतने प्रश्नों ने जड़ बना दिया। साथ ही तुलनात्मक विचार भी पीड़ा दे रहा था। कहीं सब कुछ दिखावटी ही न हो। यदि सब कुछ दिखावटी हुआ तो सारा जीवन व्यर्थ जायेगा। अगले जन्म की कौन जाने अगर ऐसे ही भटकाव रहा तो क्या होगा? इसी तरह ऊहापोह में था कि एक विद्युत सी कौंध गई। मैं, मेरी पत्नी, दोनों गुरूदेव के सामने थे। प्रसाद जो एटा से लाया था वह हाथ में था। इशारे से बैठाने का आदेश मिला, मर्यादायें मालूम न थी, क्या अनुनय-विनय करे पता न था, कैसे समर्पण करें कुछ भी तो नहीं मालूम था। इन्द्रियत्रन क्रियाये विलुप्त, हम दोनों चुपचाप अबोध बच्चे की

तरह बैठ गये। कब तक बैठे रहे पता नहीं। गुरुदेव बोले जाओ सत्संग में बैठो, बराबर समय मिलने पर मिलते रहना। माँ–पिताजी व बच्चों का ध्याान रखना। जब समय मिले जप जरूर करना। कुछ प्रसाद बाहर बाँट देना और कुछ घर ले जाना।

क्या, कब, कैसे दीक्षा हुई पता नहीं, परन्तु हाँ जो मिला, अनुभव हुआ वह अब तक कहीं नहीं मिला। भटका तो कई जगह। शरीर मन बुद्धि का कुछ पता नहीं होश भी नहीं, बेहोश भी नहीं, अंधकार समाप्त, प्रकाश बिना किसी साधन के, अपूर्व शान्ति, बिना पर के उड़ान अस्तित्व विहीन, वर्णनातीत पूर्ण समर्पण। दूसरी बार पूज्य गुरुदेव का सान्निध्य परन्तु गहराई पहले से अधिक आँखों ने देखा वह और कुछ देखने को राज़ी नहीं बस बन्द, बस अनवरत ऐसी कृपा की चाह थी। पूर्ण तृप्ति के साथ कोई विकल्प न बचा था। कोई माँग न बची ''मैं कौन हूँ'' मिल चुका था। पूर्व परिचित था, मानो खोया हो। बन्धनमुक्त स्वच्छन्द चेतना समाहित हो किसी लौकिक आनन्द से परे। जब भी आँख बन्द करें वही अनुभूति, वही शान्ति, वही ध्वनि प्रतिध्वनित होती। जहाँ तक याद है सभी ऊहापोह, व्याकुलता और अनेक प्रशन गायब हो गये एक पूर्ण में गुरुदेव ने नकशबन्दिया वंशावली में शामिल कर लिया। शजरा शरीफ दिया और बोले सम्भाल कर रखना।

साधना (24-6-80)

आपकी कृपा से मैं सपरिवार एवं सभी सत्संगी जनों सहित सकुशल जीवन यापन कर रहा हूँ। आपसे अलग हुये अभी कुछ ही दिन हुये हैं किन्तु लगता है कितने दिन बीत गये।

आपके स्वास्थ्य और पूज्या माँ के स्वास्थ्य की मुझे बराबर चिन्ता रहती है। यदि हो सक तो शीघ्र सूचित करेंगे।

ध्यान में अक्सर मैं सोचा करता था कि जिस विराट के दर्शन के विषय में यदा–कदा आप अपने प्रवचनों में कहते रहते हैं क्या है। बड़ी उत्सुकता थी इस समस्या के प्रति। एक दिन ध्याान में बैठा था मैंने देखा एक घनघोर सुनसान जंगल है, वहाँ के प्रत्येक वृक्ष, तने, पत्ते, फूल आदि में जहाँ भी मैं देखता हूँ आप ही का स्वरूप दिखाई देता है। यह स्थिति मुश्किल से एक सेकेण्ड के लिये ही रही होगी, लगा शरीर टूटा जा रहा है एक अजीब खिंचाव था ऊपर की ओर। तब से जब भी ध्याान के लिये बैठता हूँ वह खिंचाव एक दो मिनट के लिये यदा–कदा हो जाता है। यदि ऐसा नहीं होता तो लगता है कि कुछ खो गया है। अजीब मनोस्थिति हो जाती है। दिन भर मन खिन्न और चिड़चिड़ा सा हो जाता है। सिर ऐसा लगता है मानो बर्फ रिस रहा हो। 22–6–80 को रात्रि में स्वप्न देखा कि मेरा शरीर व सिर कुछ भारी–भारी सा

है आप और परम पूज्या माँ बैठी हैं। आपने दो-तीन बार सर पर हाथ फिराया ऐसा आभास हुआ कि मैं स्वस्थ हो गया।

मेरा मन पूजा में अब बहुत ही कम लगता है। केवल इच्छा होती है कि आप सदा मेरे पास रहें इस तरह की चलचित्र जब चल रही होती है तब वर्षा जैसी ध्वनि आती है और हुम-हुम की आवाज के साथ जरा देर के लिये वही स्थिति हो जाती है।

मन बस यही करता है कि आप सदा पास रहें, आपकी याद से, बात से, एक क्षण के लिये भी ग़फलत में न रहूँ। हर क्षण चलचित्र की तरह आँखों के सामने रहें, आपकी कही बातें कानों में गूँजती रहें। कोई भी धार्मिक पुस्तक पढ़ने का जी नहीं करता। केवल प्रवचन या टेप सुनने का ही मन करता है। स्मृति से मन के ग़ाफिल होने पर बहुत क्रोध आता है।

सूचनार्थ सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूँ। निवेदन है कि बंगलौर या राँची की तरफ का कोई प्रोग्राम यदि बने कृपया अकिंचन को अवश्य सूचित करें। मैंने 19 जुलाई से छुट्टी के लिये आवेदन पत्र दे दिया है। यदि कोई अन्य प्रोग्राम हो या परिवर्तन हो तो सूचना अवश्य दें। कार्यक्रम के अनुसार ही आफिस में छुट्टी की सूचना दे दूँ। कमलेश जी पूज्या माताजी व आपको सादर प्रणाम कह रही हैं।

प्रणाम के साथ

आपका अकिचंन

शिरोमणी

गुरुदेव का पत्र

प्रिय शिरोमणी जी,

सप्रेम नमस्ते,

आपका पत्र मिला, प्रसन्नता हुई। आप किसी प्रकार की चिन्ता मत किया करें। प्रत्येक व्यक्ति को अपने भोग भोगने हैं। सामान्य व्यक्ति दुःख से भोगता है। ज्ञानी और समझदार व्यक्ति विवके से भोगता है। तदपि ईश्वर की दया के बिना दृःख का सहन करना अति कठिन है। गुरुदेव हम सबको शक्ति दें। आपकी शुभकामनाओं के लिये बहुत-बहुत धन्यवाद। विराट दर्शन के लिये जब मिलेंगे समझा दूँगा। जो स्वप्न आपने देखा वो विराट से सूक्ष्म स्थिति है। गुरुदेव की कृपा आप पर ऐसी ही रहे।

साधना में कभी भी कोई आशा लेकर नहीं बैठना चाहिये। जैसी और जब ईश्वर कृपा हो इस प्रकार बैठना चाहिये मन लगे या न लगे इसकी चिन्ता अधिक नहीं करनी

चाहिये। चिन्ता होनी चाहिये कि हम शुद्ध भोजन करें, हमारे शुद्ध विचार हों, एवं शुद्ध व्यवहार हो। ईश्वर प्रेम हो।

गुरुदेव आपको शक्ति दें। जब भी मेरा प्रोग्राम बने मैं आपको सूचित करूँगा। आप जल्दी ना करें। बेटी कमलेश व बच्चों को हम दोनों का सादर नमस्त दें।

स्नेह व आदर सहित

आपका
करतार सिहं

चमत्कार (कृपा)

10 नवम्बर 1979 में पूज्य चौहान साहब व एक छोट बेटे और पत्नी कमलेश के साथ बरेली सत्संग में गया जो परम पूज्य ताऊजी (श्री जयनारायण गौतम) के निवास स्थान पर हुआ। तीन दिन बड़ा आनन्द रहा। सब लोग सत्संग की समाप्ति होने पर वापस अपने घर को लौट रहे थे। मैंने भी परिवार के साथ दर्शन कर विदा ली। सड़क पर पहुँचा ही था कि पूज्य चौहान साहब ने कहा कि आपको गुरुदेव याद कर रहे हैं। मैं वापस बेटे को साथ में ले कर गुरुदेव के पास आया। ''बेटे आप जा रहे हैं'' मैनें कहा ''हाँ जी।'' उन्होंने मेरे और अखिलेश (बेटे) के सर पर हाथ फिराया, प्यार किया, बेटे को इगिंत कर बोले ''छोटे इन्जीनियर साहब ईमानदारी की कमाई खाना''। मेरी समझ में कुछ नहीं आया। वापस आने पर चौहान साहब ने पूछा कि क्या बात थी? मैनें सारी बात बता दी। चौहान साहब ने कहा मालूम होता है कि तुम्हारा प्रमोशन होने वाला है। मैंने कहा बाबूजी 1976 से अब तक तो नहीं हुआ अभी तो कोई सम्भावना भी नहीं है। बात समाप्त हो गई, हम घर आ गये। परीक्षा तो पास कर चुका था, किन्तु पोस्टिंग कुछ कारणों से नहीं हो पा रही थी।

एटा अरूणानगर विद्युत विभाग के उपखण्ड कार्यालय पर सभी लोग एकत्रित थे, वेतन वितरण हो रहा था। अचानक 220 के.वी. सबस्टेशन पनकी से मेरे एक मित्र छोटे लाल का 132 के.वी. सबस्टेशन एटा से फोन आया कि मेरा प्रमोशन हो गया लिस्ट आ गई है। पुनः मालूम हुआ कि मेरा नहीं छोटे लाल का नाम है। बड़ी उलझन थी इसी उधेड़बुन में घर आया। मेरे साथी मित्र आर.पी.एस. चौहान को मालूम हुआ उन्होंने मुझसे लखनऊ चलने को कहा। हम लोग लखनऊ के लिये चल पड़े। मैं रास्ते भर बहुत परेशान रहा। एक अजीब द्वन्द मन में था कि तू कैसा मतिमन्द है क्या गुरू के वचन मिथ्या जायेगें। तुझे उन पर विश्वास नहीं। मुझे अपने पर रोष आने लगा। हम दोनों सुबह एक मित्र के घर पहुँचे। उन्होंने बताया कि रिजल्ट निकल आया है और उसमे मेरा नाम है। एक हजार तीन सौ व्यक्ति विभागीय परीक्षा में बैठे थे,

उसमें से सौ की लिस्ट में मेरा नाम था, और मेरा छब्बीसवां नम्बर था। आज भी मुझे इस बात का दुःख रहता है कि गुरुदेव पर मुझे पूर्ण विश्वास क्यों नहीं हुआ।

मैं लिस्ट की प्रतिलिपि लेकर एटा वापस आ गया। जीवन में सुख की अनुभूति, किन्तु परन्तु के हिचकोले में हुई। उनकी लीला विचित्र, अद्भुद परीक्षा, प्रतीज्ञा की कि सभी उनको समर्पित करता रहूँगा परन्तु पहली परीक्षा में ही डगमगा गया। 22.12.79 को मैनपुरी में मैंने अपना अवर अभियन्ता का पद सम्भाल लिया।

26.2.81

आदरणीय भाई साहब,

सादर सप्रेम नमस्ते,

आपका कृपा पत्र प्राप्त हुआ बहुत-बहुत धन्यवाद। प्रिय रमेन्द्र के लिये मेरे हृदय में विशेष स्थान है। वह बड़े शुभ संस्कार लिये हुये है। वह अपनी ही नहीं औरों की भी सेवा करेगा। उसका लौकिक जीवन अलौकिक की छाया लिये हुये अति सुन्दर बनेगा। वह पारिवारिक जीवन से भागेगा नहीं आपका उस पर आर्शीवाद बना रहे।

समाज की वर्तमान दशा सोचनीय है। मानवता के बिना आध्यात्मिकता नहीं बन सकती। मेरा प्रयास पहले यही रहता है कि प्रत्येक मनुष्य अपने आपको मर्यादा में ढ़ाले। पहला अनुशासन अपने ऊपर होना चाहिये। वास्तव में सांसारिक जीवन को सुन्दर बनाना और आगे बढ़ कर उसे मोह मुक्त करना ही आध्यात्मिक आयाम में प्रवेश करना है।

साधना के प्रति जब चाहें मैं आपकी सेवा में आ सकता हूँ।

आपका,

करतार सिंह

बात आनन फानन में बनी

आर.एस. जौहरी
दिल्ली

बात मेरी बेटी की शादी की है जो 1981 में हुई थी। विवाह के सम्बन्ध में मैंने हिन्दुस्तान टाइम्स में इश्तिहार दिया था। इश्तिहार के उत्तर में ग्वालियर से ग्वालियर इन्जीनियरिंग कालेज के प्रिन्सिपल का पत्र आया कि मैं ग्वालियर लड़की को ले जाकर उन लोगों को दिखाऊँ। मेरी लड़की इन्दौर में पढ़ती थी। एक रात पहले ही बी.ए. की परीक्षा देकर आई थी। मैं उसको व उसकी माँ को लेकर ग्वालियर गया। मेरे मामाजी ग्वालियर में एडवोकेट थे, मैं उन्ही के पास ठहरा था। मामाजी को साथ लेकर मैं प्रिन्सिपल साहब से मिलने गया। बहुत सी बातों के बाद यह बात तय हुई कि शाम को लड़की देखेंगे। गुरु महाराज की कृपा से लड़की देखने के बाद उन लोगों को लड़की पसन्द आ गई। दूसरे दिन उन्होंने आगे की बात के लिये अपने घर बुलाया। जून का अखिरी सप्ताह था, जुलाई के प्रथम सप्ताह की तारीख उन्होंने मेरे सामने रख दिया। तारीख देख कर मैं एकदम घबरा गया। इतनी जल्दी शादी की तैयारी कैसे होगी? रूप्ये पैसे का प्रबन्ध मैं कहाँ से करूँगा? मैं एकदम हताश हो गया। मैंने उनसे निवेदन किया कि शादी की तारीख यदि सर्दियों में रखें तो अधिक अच्छा होगा। एक तो गर्मी बहुत, दूसरे इतनी जल्दी तैयारी करता कठिन है। प्रिन्सिपल साहब बोले– ''साहब मैं बहुत ही व्यवहारिक व्यक्ति हूँ। अगर आपको मेरी दी हुई तारीख पसन्द नहीं है तो सामने दरवाजा है।'' दूसरे कमरे में सामने एक जज साहब अपनी बेटी के साथ बैठे थे। प्रिन्सिपल साहब के इस दो टूक उत्तर से मैं एकदम हतप्रभ हो उठा। किसी तरह बड़ी मुश्किल से मैंने उनसे कल तक का समय माँगा। मैं एक साधारण अध्यापक इतनी जल्दी रूपयों का प्रबन्ध कहाँ से करूँगा? सारी रात बहुत बेचैन रहा और गुरु महाराज को याद करता रहा। ''प्रभो! आप ही कुछ रास्ता दिखायें।'' मेरी बेचैनी को मामाजी समझ रहे थे बोले ''सो जाओ कल देखेगें।'' सुबह उठकर मैंने मामाजी से कहा कि उनको मना कर दें। या देहली जाकर जवाब देगें।

मेरी हताशा को देख कर इतवार होते हुये भी मामाजी ने अपना एफ.डी. तुड़ा कर रुपया मुझे दिया और बोले ''लड़का बहुत अच्छा है हाँ कह दो।'' इस तरह शादी

निश्चित हो गई। पैसों का प्रबन्ध भी गुरु कृपा से हो गया। दूसरे दिन सुबह मैं प्रिन्सिपल साहब के पास गया और मैंने उनके इच्छानुसार शादी करने की स्वीकृति दे दी। देहली आने पर मैंने अपनी सारी परेशानी गुरु महाराज के सम्मुख रख दी। आपने कहा–''कोई बात नहीं सब प्रबन्ध हो जायेगा आप रिश्ता पक्का कर लें। गुरु महाराज सब ठीक कर देगें।'' उन्हीं की कृपा से शादी बहुत अच्छी तरह निर्विघ्न सम्पन्न हो गई। बेटी ससुराल में बहुत खुश है। परिवार हर तरह से फल–फूल रहा है। अपूर्व है उनकी कृपा।

स्मृतियाँ

प्रतिमा श्रीवास्तव (स्वीटी)
मुंबई

सन् 1991 की बात है। बनारस में 18 मई का सत्संग था। DLW के एक हाल में आयोजन किया गया था। पास ही में गुरुदेव के रहने की व्यवस्था थी। उन दिनों कुछ नये भाई सत्संग में शामिल हुए थे। गुरुदेव के रहने, खाने व रख-रखाव का सारा कार्यभार उन्हीं पर था। मेरी उम्र उन दिनों कम थी। सौभाग्यवश बचपन से ही कई मौके मिले गुरुदेव के साथ रहने के। जब भी मौका मिलता मैं उनके इर्द-गिर्द ही रहा करती। उस दिन सुबह के नाश्ते के लिए मैं उनके लिए कुछ बिस्कुट प्लेट में डालकर ले आयी। सत्संगी भाई साहब ने जोर से मुझे डाँटा और कहा कि गुरु महाराज ये सब खायेंगे? अरे उनके लिए काजू किशमिश वगैरह आया है। वो सब ले आइये। एक आंटी जी ने लगाकर वो सब दे दिया। मैं ले कर गयी। गुरुदेव ने धीरे से मुझसे पूछा-''बेटा! क्या आज सत्संग में यही नाश्ता है?'' मैंने कहा-''नहीं। वहाँ तो चने बने है।'' गुरुदेव ने कहा-''तू थोड़ा सा मेरे लिए ले आ।'' मैं गई और दौड़कर दोने में चने ले आयी। गुरुदेव ने वही खाया।

इत्तफाक से उसी रात मेरे मन में गुरुदेव को खीर खिलाने की इच्छा हुयी। मैं किचन में (जो कि क्वाटर में ही था) खीर बनाने गयी। परंतु मुझे उसकी इज़ाज़त नहीं मिली। हाँ, मेरे माँगने पर दूध व चीनी अवश्य मिल गयी, परंतु चावल नहीं थे। चूल्हा भी नहीं था। अब क्या करूँ? वहीं पास में मेरे एक मित्र का घर था। मैं उनके घर गयी और अनुरोध किया। उनकी माँ ने चावल भी दिए और अपने किचन में बनाने की अनुमति भी। खीर तो बन गयी पर उनके घर से पैदल चलकर आते-आते काफी देर हो गयी। गुरुदेव खाना खाकर सो चुके थे। मुझे बहुत निराशा हुई। मैंने वो खीर वहाँ उपस्थित एक आंटीजी को दे दी। उन्होंने फ्रिज में रख दिया। दूसरे दिन सुबह नाश्ते के समय मैंने गुरुदेव को बताया। गुरुदेव ने मुस्कुराकर कहा ''मैंने तो खीर खाना छोड़ दिया बेटा।'' मैंने पूछा-''क्यों? क्या खीर आपको पसंद नहीं।'' उन्होंने कहा ''बेटा, खीर मुझे बहुत पसंद थी। इसलिए छोड़ दी। पर तूने प्यार से बनायी है तो खा लूँगा।'' गुरुदेव ने दोपहर के खाने के समय वह खीर खाकर मुझे अनुगृहीत किया।

मनचाहा विषय मिल गया

इन्द्रजा
दिल्ली

बचपन में मेरा ज्यादा समय दादाजी (श्री कृष्ण मुरारी श्रीवास्तव) के घर में बीतता था। एक ही सोसायटी में हमारे घर थे और दादाजी की पुत्री मनीषा जिन्हें मैं बुआजी कहती हूँ और मेरे पापा श्री भगवान दास बिज़नेस पार्टनर हैं। हमें कभी अनुभव ही नहीं हुआ कि ये दो घर हैं।

गुरुदेव जिन्हें मैं बड़े दादाजी कहती थी उनके पास भी बचपन से ही यदा-कदा बुआजी के साथ जाती थी। मैंने हमेशा उन्हें अत्यन्त प्यार बांटने वाले एवं शांति प्रदान करने वाले व्यक्ति के रूप में देखा था। उनकी कृपा व अलौकिक शक्तियों की गाथा मैं सदैव बुआजी व दादी माँ के मुख से सुनती रहती।

उनके दिव्य एवं अलौकिक रूप का परिचय मुझे तब मिला जब मेरी बारहवीं कक्षा के इम्तिहान निकट आ रहे थे। प्री बोर्डस् में मेरे बहुत कम अंक आए थे और पढ़ाई में बिलकुल मन नहीं लगता था। मन में डर था कि कैसे परीक्षा दूँगी? बुआजी ने मुझे बड़े दादाजी से आशीर्वाद लेने की सलाह दी।

मैं दादाजी से आशीर्वाद लेने उनसे मिलने गई। मैंने उनके चरण स्पर्श किए। उन्होंने प्यार से मुस्कुराकर कहा, ''हँसते रहा करो बच्चे, सब ठीक हो जाएगा।'' बस और क्या था, मैं खुशी-खुशी घर चली आई। तीन माह बाद जब मेरा परीक्षा परिणाम आया, मैंने बड़े दादाजी को मिठाई खिलाई।

मुझे तो पास होने की भी आशा नहीं थी। मैं अच्छे नम्बर से पास हुई। 78 प्रतिशत अंक आये मेरे और मुझे दिल्ली विश्वविद्यालय के मिराण्डा हाऊस में सीट मिल गयी।

परंतु ये क्या? अब ये नयी मुसीबत सिर पर आ गयी। मेरा मानना है ही हमें अपने हर कार्य और कर्तव्य से मोहब्बत करना चाहिए। पर मुझे पढ़ाई से तो बिल्कुल लगाव ना था। मुझे तो प्रेम था कलाकारी से-ना समय का ज्ञान होता था, ना खान-पान का ध्यान रहता था। मन करता था अपना पूरा समय जी जान से डिज़ाईनिंग में लगा दूँ। पर अब डिज़ाईनिंग फील्ड़ में जाने का एक ही साधन था,

A lEEE-B.Arch की परीक्षा में टॉप रैंक लाना। देश भर में सिर्फ 300 सीट उपलब्ध थीं नेशनल विश्वविद्यालय में दाखिले के लिए। परीक्षा देने वाले लाखों में थे। मुझे तो बिल्कुल उम्मीद ना थी। तीन कॉउन्सिलिंग सैशन पूर्त हो गए थे पर मेरा कहीं चयन नहीं हुआ था।

मैं परेशान होकर पहुँची दादाजी के पास और अपनी बात दादाजी के सामने रख दी। दादीजी ने उसी प्यार भरी मुस्कुराहट से कहा, ''बच्चे, चिन्ता नहीं करना, मिल जाएगा।'' उनकी मुस्कुराहट में तो जादू था। मेरी कभी उनसे ज्यादा बात नहीं हुई। बस उनकी एक मुस्कुराहट से दिल भर जाता था।

अगले दिन चौथे कॉउन्सिलिंग का रिज़ल्ट आया और मुझे स्कूल ऑफ प्लानिंग एण्ड आर्किटेक्चर, विजयवाड़ा में सीट मिल गयी। एक महिने पश्चात् मैं एक रोमांचक नई दुनिया के मजे ले रही थी।

दादाजी की कृपा से द्वितीय वर्ष में पदार्पण करते ही बिरला वाइट द्वारा आयोजित राष्ट्रीय वास्तुकला प्रतियोगिता में भाग लिया जिसमें अनुभवी एवं उच्च योग्यता प्राप्त विद्यार्थी भाग ले रहे थे। आश्चर्य तो तब हुआ जब मुझे अवार्ड के लिए चुना गया एवं बिरला ग्रुप की चेयरमैन श्रीमति राजश्री बिरला एवं अन्य दिग्गजों से मेरा साक्षातकार हुआ।

आज दादाजी स्थूल रूप से भले ही सामने नहीं हैं पर उनकी कृपावृष्टि का सदैव अनुभव होता है जिसके फलस्वरूप मुझे इंटर्नशिप भी दिल्ली की एक अच्छी कम्पनी में मिल गयी और आफिस में सभी मेरे कार्य की सराहना करते हैं।

ISBN: 81-85992-36-3

अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, दिल्ली